॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥
1673
सत्य एवं प्रेरक घटनाएँ
गीताप्रेस गोरखपुर
GITA PRESS, GORAKHPUR
भक्त रामशरणदास पिलखुवा

॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

1673

सत्य एवं प्रेरक घटनाएँ

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देवदेव॥

भक्त रामशरणदास पिलखुवा

॥ श्रीहरिः ॥

निवेदन

मनुष्यके जीवनमें कभी-कभी कोई ऐसी घटना भी घट जाती है, जिससे उस व्यक्तिके स्वभावमें, उसके रहन-सहन तथा विचारोंमें परिवर्तन आ जाता है। ये घटनाएँ दूसरोंको भी प्रेरणा प्रदान करती हैं, विचारोंमें परिपक्वता लाती हैं और जीवनस्तरको भी ऊँचा उठाती हैं।

आज संसारमें पापोंकी वृद्धि हो रही है और झूठ, कपट, चोरी, हत्या, व्यभिचार एवं अनाचार बढ़ रहे हैं, लोग नीति और धर्मके मार्गको छोड़कर अनीति एवं अधर्मके मार्गपर आरूढ़ हो रहे हैं, विलासिता और इन्द्रियलोलुपता बढ़ती जा रही है, भक्ष्याभक्ष्यका विचार उठता जा रहा है, अपराधोंकी संख्या बढ़ती जा रही है, आतंकवाद और अपहरणकी घटनाएँ प्रतिदिन सुननेको मिलती हैं, क्षुद्र स्वार्थकी पूर्तिके लिये निरन्तर हत्याओंका दौर अबाध गतिसे चल रहा है। असंतोष और असहिष्णुता इतनी बढ़ गयी है कि लोग बात-बातपर आत्महत्या करने लगे हैं, हत्याओंके कारण मनुष्यका जीवन असुरक्षित-सा हो गया है, दम्भ और पाखण्डकी वृद्धि हो रही है—इन सबका कारण सत्संगका अभाव, कुसंग तथा कुशिक्षाका प्रभाव है।

इन विपरीत परिस्थितियोंमें भी सत्य, अहिंसा, दया, करुणा, परोपकार, सद्भाव आदि दैवीगुणोंसे समन्वित घटनाएँ हमें देखने और सुननेको मिलती हैं। इन सत्य घटनाओंको पढ़कर व्यक्तिको सत्प्रेरणा तो प्राप्त होती ही है, इसके साथ ही धर्म और ईश्वरमें आस्था तथा विश्वास भी जाग्रत् होता है, जिनसे जीवन सार्थक और कल्याणकारी बनता है।

मानव-जीवनकी सार्थकता आध्यात्मिक सुख-शान्तिमें है, इसके लिये सदैव जागरूक रहनेकी आवश्यकता है। चित्तके संशोधनके अनेक उपाय शास्त्रोंमें वर्णित हैं। परदोष, परनिन्दा, परस्वार्थहरणकी भावनाएँ—जो आज मानवको दानव बना रही हैं—इनसे बचनेके लिये उच्च आदर्शयुक्त सच्ची घटनाएँ सशक्त साधन हैं। इन्हें पढ़कर मनुष्य स्वाभाविकरूपसे इन घटनाओंके प्रति आकर्षित होता है और उसे सत्प्रेरणा प्राप्त होती है। इस प्रकारकी घटनाएँ जीवनको सफल बनानेमें सार्थक हैं।

कुछ वर्षों पूर्व भक्त रामशरणदास पिलखुवावालोंने सच्ची घटनाएँ भेजी थीं, जिन्हें 'कल्याण'में प्रकाशित किया गया था। गोलोकवासी भक्त श्रीरामशरणदासजी सनातनधर्मके परम अनुयायी, भगवद्भक्त तथा सात्त्विक एवं परिष्कृत विचारोंके लेखक थे। वे पिलखुवामें रहते थे तथा संतप्रेमी थे, संतोंका समागम निरन्तर होता रहता था। संतोंके मुखारविन्दसे सुनी हुई विलक्षण घटनाएँ तथा इसके अतिरिक्त अन्य कई घटनाएँ, जिनकी जानकारी उन्हें होती, उनकी सत्यताका पता लगाकर उन्होंने 'कल्याण' में प्रकाशनार्थ प्रेषित किया। उन्हीं घटनाओंको इस पुस्तकमें संगृहीत कर प्रकाशित किया जा रहा है।

आशा है पाठकगण इससे लाभान्वित होंगे।

—राधेश्याम खेमका

~~○~~

॥ श्रीहरि: ॥

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या

~~○~~

ब्राह्मण युवक अपनी हरिजन बुआके यहाँ आशीर्वाद लेने गया

एक बार हम कार्तिक-पूर्णिमाके अवसरपर प्राचीन महान् तीर्थ श्रीगढ़मुक्तेश्वर गये हुए थे। वहाँ घूमते-घूमते सहसा हमें मेरठका सनातनधर्म-रक्षिणी सभाका कैम्प दिखायी पड़ा। अंदर जाकर देखा तो सनातनधर्मके विद्वान् पूज्य आचार्य श्रीरामजी शास्त्री, श्रीवागीशजी महाराज, पूज्य पं० श्रीगंगाशरणजी रामायणी और पूज्य पं० श्रीमथुराप्रसादजी शर्मा 'व्रजवासीजी' आदि कथावाचक विराजमान थे। हमने सबके श्रीचरणोंमें प्रणाम किया। बात चलनेपर पूज्य कथावाचक पं० श्रीमथुराप्रसादजी शर्मा 'व्रजवासीजी' महाराजने हम कट्टर सनातनधर्मी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य आदिका अपने हरिजनबन्धुओंसे कैसा विलक्षण प्रेम था, इस सम्बन्धकी अपने स्वयंके जीवनमें घटी बिलकुल सत्य घटना सुनायी, जिसे सुनकर सभी गद्‌गद हो गये। आपने कहा—

भक्त रामशरणदासजी! तथाकथित राजनीतिज्ञोंद्वारा आज जो यह कहा जा रहा है कि पहले ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य आदि सनातनधर्मी लोगोंने हरिजनबन्धुओंपर अत्याचार किये हैं—यह बात इनकी बिलकुल झूठी है और सबको आपसमें लड़ाकर तथा फूटके बीज बोकर हिंदू-जातिका एवं देशका सर्वनाश करनेवाली है। पहले गाँवोंमें ब्राह्मणसे लेकर हरिजनतक सब आपसमें बड़े प्रेमसे रहते थे। सब एक-दूसरेको यथायोग्य ताऊ, चाचा, बाबा, दादी मानते थे तथा कहते थे एवं एक-दूसरेके दुःख-सुखमें

शामिल होते थे। उन दिनोंकी बातें आज भी स्मरण करके हृदय गद्‌गद हो जाता है। इसमें तनिक भी संदेह नहीं कि पहलेके मनुष्य एक-दूसरेका जूठा खाने-पीनेवाले आचारभ्रष्ट नहीं थे, पर उनका आपसमें कैसा विलक्षण प्रेम था, इसे जरा सुनिये और इसपर विचार कीजिये—

यह लगभग संवत् १९७२ की बात है। मेरा विवाह था। बारात गयी थी जुनारदार गनौरा ग्राममें। जब मेरा विवाह सम्पन्न हो चुका और बारातके विदा होनेका दिन आया तो मेरे पूज्य पिताजीने अपने मनमें विचार किया कि इस गाँवमें हमारे गाँवकी कोई बेटी तो नहीं विवाही है? झटसे उन्हें यह स्मरण आया कि इस गाँवमें तो हमारे गाँवके डालू हरिजनकी लड़की विवाही है। फिर क्या था। पूज्य पिताजी दौड़े हुए मेरे पास आये और आकर मुझसे बोले—

पिताजी—अरे मथुरा!

मैं—हाँ पिताजी!

पिताजी—बेटा! तू जल्दीसे अपने नये कपड़े पहनकर तैयार हो जा। तुझे मेरे साथ चलना है।

मैं—कहाँ चलना है, पिताजी?

पिताजी—बेटा! इस गाँवमें तेरी एक बुआ विवाही है, उसके घरपर चलना है।

मैं—पिताजी! इस गाँवमें मेरी बुआ— कौन-सी बुआ विवाही है?

पिताजी—अरे मथुरा! तुझे क्या पता— तू अभी बालक है। यहाँपर तेरी एक बुआ विवाही है। यदि हम उसके घरपर नहीं गये तो कोई क्या कहेगा और तेरी बुआ भी बुरा मानेगी, उसे दुःख होगा और हमारी बड़ी बदनामी होगी।

मुझे पिताजीके मुखसे यह सुनकर मन-ही-मन बड़ा आश्चर्य हुआ कि इस गाँवमें मेरी बुआ विवाही है। मैंने मनमें विचार किया कि यदि इस गाँवमें मेरी बुआ विवाही होती तो क्या मैं अपनी उस बुआको अबतक कभी भी नहीं देखता और अपनी बुआको नहीं जानता! पिताजीके डरसे मैं ज्यादा कुछ नहीं बोला। बस, मैंने इतना पूछा—

मैं—पिताजी! मुझे क्या करना है?

पिताजी—तुझे अपनी बुआको परोसे, साड़ी और पाँच रुपये भेंटमें देनेके लिये मेरे साथ चलना है। पिताजीकी आज्ञाकी देर थी। मैं झटसे कपड़े पहनकर तैयार हो गया। पिताजीने एक थाल सजाया, जिसमें असली घीकी कचौड़ी, पूरी-मिठाई आदि परोसे रखे और एक सुन्दर साड़ी रखी तथा चाँदीके पाँच रुपये रखे। आगे-आगे ताशे-बाजे, ढपले बजते चले जा रहे थे और पीछे-पीछे पूज्य पिताजीके साथ मैं अपनी बुआके यहाँ जा रहा था। नाई हाथमें थाल लिये जा रहा था। बड़ा ही अद्‌भुत दृश्य था। जब कुछ दूर आगे बढ़े तो एक मोहल्ला आया, जिसमें कुछ सूअर इधर-उधर घूम रहे थे। मुझे यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि हम तो जातिके ब्राह्मण हैं, यहाँ हमारी बुआ इस गंदे मोहल्लेमें कहाँपर विवाही है?

आगे जा करके देखा तो एक मेहतरका घर आया। जब उस मेहतरकी लड़कीने ताशे-ढपले बजनेकी आवाज सुनी तो वह झटसे समझ गयी कि मेरे गाँवके मेरे भैया-भतीजे आ रहे हैं। वह अपना सब काम छोड़कर दौड़ी हुई घरसे बाहर आयी और उसने आवाज देकर सबसे कहा कि जल्दी आओ, मेरे भैया-भतीजे आये हैं। अब क्या था, अब तो सारा मोहल्ला इकट्ठा हो गया।

उस लड़कीके सामने आते ही पूज्य पिताजीने उससे कहा कि बहन राम-राम। उस लड़कीने कहा—भैया! जीते रहो, तुम्हारी बड़ी उमर हो। पिताजीने मुझसे कहा कि बेटा मथुरा! यह देख तेरी बुआ है, तू अपनी बुआको राम-राम कर।

मैंने झटसे हाथ जोड़कर कहा कि बुआजी! राम-राम। लड़कीने कहा—भैया! तू जीता रह और तेरी बड़ी उमर हो, तू सुखी रह। पिताजीसे उस लड़कीने पूछा कि भैया तुम राजी हो? पिताजीने कहा कि हाँ बहन! मैं तो राजी हूँ। तुम सब राजी-खुशी हो? लड़कीने कहा—हाँ भैया! सब राजी-खुशी हैं। भैया! मैं तो सबसे यह कह रही थी कि मेरे भतीजेकी इस गाँवमें बारात आयी है। मेरे भैया-भतीजे मुझसे मिलनेके लिये जरूर ही आयेंगे। मैं तो तुम्हारे आनेकी बाट देख रही थी।

पिताजीने कहा—बहन! भला यह कैसे हो सकता था कि जब तेरे भतीजेका विवाह हुआ है, फिर भी हम तेरे यहाँ न आते।

इस प्रकार खूब घुट-घुटकर बातें होती रहीं।

पिताजीने मुझसे कहा कि मथुरा! अपनी बुआको यह मिठाई, साड़ी और पाँच रुपये भेंटमें दे दे। मैंने झटसे उसे दे दिये और मेरी उस भंगिन बुआने अपना पल्ला पसारकर बड़े प्रेमसे ले लिये। वह बड़ी प्रसन्न हुई और उसने आशीर्वादोंकी झड़ी लगा दी।

जब हम अपनी बुआजीसे विदा होकर वहाँसे चलने लगे तो वह बुआ खूब प्रेमाश्रु बहा-बहाकर रोयी और उसे हमें विदा करते हुए बड़ा दुःख हुआ। इधर हमारे पूज्य पिताजीके भी आँसू बह रहे थे।

जब हम वापस जनवासेको लौटने लगे तो मैंने अपने पूज्य पिताजीसे पूछा कि पिताजी! यह मेरी बुआ कौन-सी हैं?

पिताजी—अरे मथुरा! तू नहीं जानता कि यह हमारे गाँवके डालू हरिजनकी लड़की है, यह तेरी बुआ लगती है और मेरी बहन लगती है।

मैं—पिताजी! मैं तो ब्राह्मण हूँ, यह भंगीकी लड़की मेरी बुआ कैसे हो गयी?

पिताजी—तू बावला है। अरे बेटा मथुरा! तू इतना भी नहीं जानता कि हमारे गाँवकी जो भी बेटी है, वह रिश्तेमें हमारी भी बेटी लगती है। अब यह हमारे गाँवकी बेटी है तो मेरी बहन और तेरी बुआ नहीं तो और कौन है? डालू मेरे ताऊजी हैं, इसलिये यह मेरी बहन है।

मैं यह सुनकर और इस प्रकारके आपसके विलक्षण प्रेमको देखकर आश्चर्यचकित रह गया। यह था हम सनातनधर्मी हिंदुओंका आपसका अद्भुत दिव्य प्रेम, जो सारे विश्वमें ढूँढ़े भी नहीं मिलेगा। आजके पश्चिमी सभ्यताके रंगमें रँगे मनचले बाबू लोग इस अद्भुत प्रेमके रहस्यको भला क्या समझेंगे?
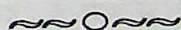
अशुद्ध आहारका प्रभाव

प्रसिद्ध आर्य संन्यासी महात्मा श्रीआनन्दस्वामी सरस्वतीजी महाराज एक बार हमारे पिलखुवास्थित निवासस्थानपर पधारे थे। आप तीन-चार दिन ठहरे थे। कैलास-मानसरोवरकी यात्राके सम्बन्धमें और गोहत्याके विरोधमें आपके भाषणोंकी खूब धूम मची थी। आजकल जो सारे देशमें खान-पानका विचार नहीं रहा है और सभी होटलोंमें खाने लगे हैं, इस सम्बन्धमें मैंने उनसे जो प्रश्न किये और स्वामीजी महाराजने जो उत्तर दिये, वे ज्यों-के-त्यों पाठकोंके सामने रखे जाते हैं। आशा है पाठक एक प्रख्यात आर्य संन्यासीके सत्य अनुभवसे अवश्य ही लाभ उठायेंगे और होटलोंके खानेसे तथा भक्ष्याभक्ष्यका विचार न कर अनाप-शनाप जो भी जीमें आया, खानेसे बाज आयेंगे।

प्रश्न—महाराजजी! आजकल लोग चाहे जिसके हाथका बना भोजन खा-पी लेते हैं और किसी भी जाति आदिका कोई विचार नहीं करते, किसने बनाया है, इसका भी तनिक विचार नहीं करते, होटलोंमें जाते हैं, जो जीमें आया भक्ष्याभक्ष्यका विचार न करके खा-पी आते हैं और कहते हैं कि खाने-पीनेसे क्या बिगड़ता है, क्या यह ठीक है?

स्वामीजी—अरे राम-राम! यह घोर अनर्थ हो रहा है। जिसका खान-पान शुद्ध नहीं, जिसका आहार शुद्ध नहीं, वह भला क्या उन्नति करेगा और क्या भजन-ध्यान करेगा तथा क्या मोक्ष प्राप्त करेगा? शुद्ध आहारकी कितनी आवश्यकता है, इस सम्बन्धकी एक बिलकुल सत्य घटना हम तुम्हें सुनाते हैं, ध्यानसे सुनो—

आर्यजगत्के सुप्रसिद्ध शिक्षासेवी तथा डी०ए०वी० कॉलेजोंके संस्थापक महात्मा हंसराजजी एक बार मौन-आश्रम, श्रीहरिद्वारमें ठहरे हुए थे। मौन-आश्रममें ही एक वानप्रस्थीजी महाराज भी ठहरे थे, जो कितने ही वर्षोंसे यहीं इसी आश्रममें रहकर प्रातःकाल तीन बजे उठकर ध्यानावस्थित होनेका अभ्यास कर रहे थे और इस अभ्यासमें उन्हें पर्याप्त सफलता भी मिल चुकी थी। एक दिनकी बात है कि वे वानप्रस्थीजी बड़े जोरसे रुदन करते हुए महात्मा हंसराजजीके पास पहुँचे और रोकर कहने लगे कि 'महाराज! मैं आज लुट गया।'

महात्माजी—क्या रातको चोरी हो गयी?

वानप्रस्थी—नहीं महाराज! सर्वनाश हो गया।

महात्माजी—स्पष्ट बताइये क्या हुआ?

वानप्रस्थी—पूछिये मत महाराज! सर्वस्व हरण हो गया।

महात्माजी—फिर भी बताओ न क्या हुआ? रोते क्यों हो?

वानप्रस्थी—महात्माजी! मैं प्रतिदिन अभ्यासमें बैठता हूँ और प्रभु तथा श्रीगुरुकृपासे मैं ब्रह्मरन्ध्रमें ध्यान लगाता हूँ। आज भी मैं नित्यकी भाँति ही ध्यानावस्थित होनेके लिये बैठा, परंतु आज मुझे नित्यकी भाँति ध्यानमें वह ज्योति दिखायी नहीं दी और उसकी जगह लाल वस्त्र पहने एक युवती दिखायी देने लगी। मैंने अपने मानसिक बलसे उसे हटानेका बहुत ही प्रयत्न किया, परंतु मुझे इसमें सफलता नहीं मिली। जब सफलता नहीं मिली, तब मैं उठकर टहलने लगा। थोड़ी देर बाद मैं फिर ध्यानमें बैठा, परंतु फिर भी ज्योति दिखलायी नहीं दी और उसकी जगह वही लाल साड़ीवाली युवती दृष्टिगोचर होने लगी। मैं फिर उठकर टहलने लगा और मैंने एक बार फिर प्रयत्न किया कि मैं किसी

प्रकार ध्यानावस्थित हो सकूँ, परंतु बार-बार प्रयत्न करनेपर भी मैं सफल नहीं हो सका और उसी लाल साड़ीवाली युवतीका चित्र सामने आने लगा। हाय-हाय! महात्माजी! मैं लुट गया, मेरी अबतककी सारी कमाई लुट गयी, अब मैं क्या करूँ?

—यह कहकर वानप्रस्थीजी फूट-फूटकर रोने लगे।

महात्माजी—कल कहीं गंदी फिल्म देखने तो नहीं चले गये?

वानप्रस्थी—नहीं महाराज!

महात्माजी—कोई गंदा उपन्यास तो नहीं पढ़ा?

वानप्रस्थी—ऐसी कोई पुस्तक नहीं पढ़ी।

महात्माजी—किसीकी बुरी संगतिमें तो नहीं जा बैठे?

वानप्रस्थी—नहीं, किसीके पास नहीं बैठा।

महात्माजी—कल आश्रमसे बाहर कहींपर गये थे?

वानप्रस्थी—जी हाँ, मेरे एक साधु-साथी आये थे और वे मुझे अपने साथ एक स्थानपर ले गये, जहाँ बहुत बड़ा भण्डारा हुआ था।

महात्माजी—तुमने भी क्या उसमें कुछ खाया था?

वानप्रस्थी—जी हाँ, मैंने भी उस भण्डारेमें भोजन किया था।

महात्माजी—तो पता लगाओ कि वह भण्डारा करानेवाला क़ौन था, वह कहाँसे आया था और कैसा था?

वानप्रस्थी—बहुत अच्छा महाराज!

अब तो वानप्रस्थीजी इस खोजमें लगे कि भण्डारेवाला कौन था, कैसा था और उसका भण्डारा करानेका उद्देश्य क्या था?

दो-तीन दिनोंकी खोजके पश्चात् वानप्रस्थीजीने महात्मा हंसराजजीके पास आकर बताया कि 'महाराज! खोज करनेके

पश्चात् यह मालूम हुआ कि अमुक नगरीका एक व्यक्ति श्रीहरिद्वारमें आया था, उसीने आकर भण्डारा किया था। उस व्यक्तिने अपनी एक युवती कन्याको दस हजार रुपयेमें एक वृद्धके साथ ब्याह दिया था। लड़कीको बेचनेसे प्राप्त हुए दस हजार रुपयोंमेंसे वह दो हजार रुपये लेकर श्रीहरिद्वारमें आया था और उसी दो हजार रुपयेसे उसने भण्डारा किया था।'

यह सुनकर महात्माजी कहने लगे कि 'तुम्हारी ध्यानावस्थामें जो घटना घटी है, उसका कारण स्पष्ट हो गया, उसी युवतीका चित्र ध्यानावस्थामें सामने आता था, जिसे बेचकर उस व्यक्तिने तुम्हें अन्न खिलाया था। जैसा अन्न होता है, वैसा ही मन भी बनता है। अब तुम्हें इस बुरे अन्नके प्रभावको नष्ट करनेके लिये सवा लाख गायत्रीका जप करना चाहिये, तभी अन्नका प्रभाव दूर होगा, अन्यथा नहीं।'

वानप्रस्थीजीने ऐसा ही किया। सवा लाख गायत्रीजपसे बुरे अन्नका प्रभाव दूर हो गया और तब उनका पूर्ववत् ध्यान होने लगा।

शुद्ध आहार किसे कहते हैं?

प्रश्न—महाराजजी! शुद्ध आहार किसे कहते हैं?

स्वामीजी—शुद्ध आहारके दो अर्थ हैं—

१-कमाई नेक हो अर्थात् किसीका भी खून चूसकर या किसीको भी किसी प्रकारकी हानि पहुँचाकर धन न कमाया गया हो, अपितु पूरी सात्त्विकतासे भरसक प्रयत्न करके बुद्धि अथवा शारीरिक श्रमके द्वारा धन या अन्न एकत्र किया गया हो।

२-आहारकी पवित्रताका दूसरा अर्थ यह है कि उसके बनानेमें या उसके तैयार करनेमें पूरी शारीरिक पवित्रता और पूरी

मानसिक पवित्रताका प्रयोग हो। माता, बहिन, पुत्री अथवा पत्नीद्वारा जो अन्न तैयार होता है, उसमें बनानेवालोंके मनकी भावनाओंका प्रभाव आ जाता है और यह प्रभाव उस अन्नके खानेवालोंके मनको भी प्रभावित करता है। इन माता, बहिन, पुत्री अथवा पत्नीके द्वारा बनाया हुआ भोजन अच्छी भावनाओंसे पूरित होता है, इसलिये उसके खानेसे कोई शारीरिक रोग भी नहीं होता और न उसके खानेसे किसी प्रकार मन ही दूषित होता है। नौकरों इत्यादिके द्वारा बनाये गये भोजनमें या होटलोंके भोजनमें ये पवित्र भावनाएँ नहीं होतीं, इसीलिये होटलोंमें खानेवालोंकी मानसिक अवस्था दिनोदिन बिगड़ती चली जाती है और उनका घोर पतन हो जाता है। दूषित भावनाओंवाले अन्नमें मनको बिगाड़नेका प्रभाव रहता है। मांसाहारीके हाथका, अपवित्र मनुष्यके हाथका भोजन करनेसे भी मन दूषित हो जाता है। भूलकर भी बाजारोंमें बना, होटलोंका बना और चाहे जिसके हाथका बनाया भोजन कभी भी नहीं खाना चाहिये। अन्नग्रहण करनेमें यह अवश्य देख लेना चाहिये कि अन्न कहाँसे आ रहा है और किसके द्वारा बनाया हुआ है? उपनिषद्में कहा गया है—

'आहारशुद्धौ सत्त्वशुद्धिः।'

आहारकी शुद्धिसे बुद्धि शुद्ध होती है, शुद्ध बुद्धिसे अच्छी स्मृति बनती है और जब स्मृति परिपक्व हो जाती है तब हृदयग्रन्थियाँ टूट जाती हैं और तब साधक मोक्षका अधिकारी बन जाता है। शुद्ध अन्न ही मोक्षका अधिकारी बनाता है। आजकल जो लोग अपनेको उन्नत बताकर या फैशनमें आकर होटलोंमें खा-पी रहे हैं या चाहे जिसके हाथका बनाया भोजन खा-पी रहे हैं, वे घोर अनर्थ कर रहे हैं। इससे घोर पतन होता

है! बिना विचार किये होटलोंका खानेसे या चाहे जिसके हाथका खानेसे शारीरिक रोग भी हो जाते हैं और मन भी दूषित हो जाता है। ऐसे मनुष्य भला मोक्षके अधिकारी कैसे बन सकते हैं? घरका बना शुद्ध और पवित्र भोजन ही शरीर और मनको ठीक रख सकता है। होटलवाले तो बराबर यह देखते रहते हैं कि यह ज्यादा भोजन तो नहीं कर गया। वे चाहते हैं कि यह जितना थोड़े-से-थोड़ा खाय, अच्छा है। उनकी यह भावना शरीरमें रोग पैदा कर देती है और वह भोजन अच्छी प्रकारसे नहीं पचता। इसलिये बहुत सोच-समझकर भोजन करना चाहिये।

प्रश्न—महाराज! बहुत-से मनुष्य अण्डा, मांस, मछली खाते हैं। प्याज, लहसुन, शलजम आदि खाते हैं, क्या यह ठीक है?

स्वामीजी—नहीं, ये सब भूलकर भी नहीं खाने-पीने चाहिये। इनके खानेसे बड़ा पतन होता है। जो बाहरका आनन्द लेना चाहते हैं, वे अंदरका आनन्द नहीं ले सकते। जो खाने-पीनेमें और इन्द्रियोंके तृप्त करनेमें ही लगे हुए हैं, उन्हें अंदरका असली आनन्द प्राप्त नहीं हो सकता और वे योगके भी अधिकारी नहीं हो सकते। जो परमात्माको प्राप्त करना चाहते हैं, अंदरका असली आनन्द प्राप्त करना चाहते हैं, योगके अधिकारी बनना चाहते हैं उन्हें तो मांस, मछली, अण्डा, प्याज, लहसुन, शलजम आदि सभी तामसिक पदार्थ छोड़ने ही होंगे, इनके त्यागे बिना कुछ भी नहीं होगा।

~~~o~~~
~~~
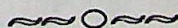
दो विचित्र स्वप्न

श्रीरणवीरजी प्रसिद्ध उर्दू दैनिक 'मिलाप' के स्वामी तथा सम्पादक थे। अंग्रेजी शासनमें उनको क्रान्तिकारी गतिविधियोंमें भाग लेनेके आरोपमें फाँसीकी सजा हुई थी, वे जेलमें रहे थे और फिर निर्दोष छूट गये थे। उन्हींके जेल-जीवनसे सम्बन्धित दो घटनाएँ उन्हींकी जबानी यहाँ दी जा रही हैं, जिनसे यह ज्ञात होता है कि स्थान तथा भोजन बनानेवालेका भी भोजन करनेवालेपर गहरा प्रभाव पड़ता है—

[१] स्थानका प्रभाव

पहले दिन मैं लाहौरके बोर्स्टल जेलमें पहुँचा तो रातको मैंने बहुत भयानक सपना देखा। एक कच्चा-सा देहाती मकान। उसके छोटे-से द्वारसे मैं भीतर घुसा। खुले आँगनमें पहुँचा। आँगनसे एक कोठरीमें। वहाँ मेरी माताजी अपने बालोंमें कंघी कर रही थीं। मैंने उन्हें बालोंसे पकड़ा। वे चिल्लायीं तो उन्हें घसीटता हुआ मैं बाहर आँगनमें ले आया और पता नहीं, कहाँसे एक छूरा लेकर बार-बार उनकी छातीमें घोंपने लगा। मेरे सामने वे तड़पीं। मेरे सामने उनका खून बहा। फिर भी मैं रुका नहीं। छूरेके बाद छूरा मारता चला गया।

और इसी घबराहटमें जागकर देखा— अँधेरी कोठरी है। जेल है। कहीं कुछ नहीं। अपने माता-पितासे मैं प्यार करता हूँ।

अपनी पूज्या माँके लिये ऐसी बात मैंने कभी सोची ही नहीं। दुःख हुआ कि ऐसा सपना आया क्यों? रातभर सो नहीं पाया। सुबह होते ही मैंने जेलवालोंसे कहा—'मेरे घरसे मेरी माताजीका हाल पूछ दीजिये। शायद उनकी तबीयत अच्छी नहीं।' उन्होंने पूछकर बताया कि 'वे बिलकुल ठीक हैं।' लेकिन दूसरी रात फिर वही सपना। फिर मैं सो नहीं पाया। सलाखोंवाले द्वारके पास आकर खड़ा हो गया। तभी गश्त करते हुए एक जेल अफसर उधरसे गुजरे। मुझे देखकर बोले—'तुम सोये नहीं?' मैंने उन्हें स्वप्नकी बात कही तो वे आश्चर्यसे बोले—'यह कैसे हो सकता है? तुम कल यहाँ इस कोठरीमें आये हो, परसोंतक यहाँ एक और आदमी था, एक देहाती। उसने ठीक ऐसे ही अपनी माँकी हत्या की थी। ठीक ऐसा ही वह मकान था जैसा तुमने सपनेमें देखा। ठीक ऐसे ही वह बदनसीब माँ तड़पी और चिल्लायी थी। ठीक ऐसे ही वह शैतान उसे छूरेके बाद छूरा मारता गया था। मैंने गवाहोंके बयान सुने हैं। परसों ही उस देहातीको फाँसीकी आज्ञा हुई। उसे सेण्ट्रल जेलमें भेज दिया गया, लेकिन तुमको यह सपना आया कैसे?'

तब मैंने समझा कि हमारे शास्त्र जिसको स्थानका प्रभाव कहते हैं, वह क्या है। वह अभागा आदमी मुझसे पहले कई मास इस कोठरीमें रहा। हर समय वह अपने कुकृत्यकी बात सोचता था और उसके विचार, उसकी भावनाएँ, उसकी पापमयी अनुभूति इस कोठरीके कण-कणमें धँसती जाती थी। वह चला गया, लेकिन उसकी दूषित, पापपूर्ण भावना अब भी इस कोठरीमें है, उसीके कारण मैं यह सपना देखता हूँ।

मैने जेलके अधिकारीसे कहा—'आप कृपा करके मेरी कोठरी बदल दीजिये। मैं यहाँ रहूँगा नहीं। ऐसा न हुआ तो मैं अनशन कर दूँगा।'

लेकिन अनशनकी नौबत नहीं आयी। दूसरे दिन मेरी कोठरी बदल दी गयी। फिर वह सपना कभी नहीं आया।

[२] भोजन बनानेवालेका भोजन करनेवालेपर प्रभाव

यह घटना लाहौरके सेण्ट्रल जेलमें हुई। मैं तब फाँसीकी कोठरीमें था। फाँसीका हुक्म हो चुका था। यहीं मैंने पहली बार भगवान्‌की उपलब्धि की। पहली बार सच्चे रूपमें मैं आस्तिक बना। यहीं मैंने पूज्य पिताजीसे उपनिषद् पढ़ना शुरू किया। गायत्री और मृत्युञ्जय-मन्त्रका जप भी शुरू किया। मन स्वच्छ था, निर्मल और शान्त।

तभी एक रात गन्दे-गन्दे सपने आने लगे। हर बार मैं घबराकर उठता। थोड़ा-सा जप करके सो जाता। फिर वही स्वप्न। वही रोती-चिल्लाती हुई युवती। वही कुकर्म। तंग आकर रातके दो बजे मैंने हाथ-मुँह धोये। जपके लिये बैठ गया, लेकिन पहलेकी तरह जपमें भी जी नहीं लगा। दूसरे दिन पिताजी आये तो उनसे सारी बात कही। उन्होंने पूछा—'कोई बुरी किताब तो नहीं पढ़ी?'

मैंने कहा—'मेरे पास उपनिषदोंके सिवा कोई किताब है ही नहीं।'

वे बोले—'किसी बुरे आदमीकी बातें तो नहीं सुनीं?'

मैंने कहा—'यह फाँसीकी कोठरी है। यहाँ आयेगा कौन?'

वे बोले—'कोई बुरा खाना तो नहीं खाया?'

मैंने कहा—'खाना तो बहुत स्वादु था। एक नया कैदी आया है। उसने बनाया था।'

पिताजीने जेलवालोंसे पूछा तो पता लगा कि यह नया कैदी एक युवतीसे बलात्कार करनेके अपराधमें कैद हुआ है। उसकी सारी कहानी सुनी तो वह ठीक वही थी, जो मैंने सपनेमें देखी थी।

प्रकट है कि उसके हाथका बना भोजन करनेसे ही मुझे ऐसा सपना आया, बादमें मैंने उसका बनाया हुआ भोजन नहीं किया, फिर वह सपना भी नहीं आया। तब मैं समझा कि हमारे शास्त्र भोजन बनानेवालेकी शुद्धतापर जो इतना जोर देते हैं, सो क्यों देते हैं।
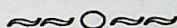
गाँवकी बेटी अपनी बेटी

एक बार हापुड़में सुप्रसिद्ध कांग्रेसी नेता एवं उत्तर प्रदेश विधानपरिषद् (लेजिस्लेटिव कौंसिल)-के भूतपूर्व सदस्य माननीय बाबू श्रीलक्ष्मीनारायणजी बी०ए० के सभापतित्वमें एक विराट् सभा हुई थी, जिसमें भाषण हुआ था— सुप्रसिद्ध आर्यसमाजी नेता संसद्-सदस्य श्रीप्रकाशवीर शास्त्रीजीका, जिसमें उन्होंने एक अन्त्यज-अग्रज-प्रेमकी महान् आश्चर्यजनक सत्य घटना सुनायी थी, जिसे सुनकर सभी बड़े आश्चर्यचकित रह गये थे। जो सज्जन यह कहते हैं कि सनातनधर्मी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्योंने हरिजनोंपर घोर अत्याचार किये हैं, इन भारतविख्यात आर्यसमाजी नेताके मुखसे यह सत्य घटना सुनकर क्या अब भी वे ऐसी बातें कहेंगे?

माननीय श्रीप्रकाशवीर शास्त्रीने अपने भाषणमें कहा— समझमें नहीं आता कि जब हजारों-लाखों वर्षोंसे हम सभी हिंदू आपसमें बड़े प्रेमसे रहते चले आये हैं और एक-दूसरेको ताऊ-चाचा, बाबा-दादी कहते चले आये हैं तथा आपसमें किसी प्रकारका भी हममें लड़ाई-झगड़ा नहीं रहा है तो आज जो हम आपसमें इस प्रकार व्यर्थके लड़ाई-झगड़े कर रहे हैं और अपनेको एक-दूसरेसे पृथक् मान रहे हैं तथा एक-दूसरेपर आघात कर रहे हैं, आखिर इससे क्या लाभ होगा? हम ब्राह्मणसे लेकर हरिजनतक सब एक कैसे थे और सब परस्पर कैसे प्रेमसे रहते थे, इस सम्बन्धमें एक सत्य घटना सुनिये—

हापुड़के पास खरखौदा नामक एक ग्राम है। यह मेरठ

जिलेमें पड़ता है। एक समय था कि इस खरखौदा ग्रामकी बड़ी प्रतिष्ठा थी और उस समय त्यागी बिरादरीके वहाँके जमींदार अपना प्रमुख स्थान रखते थे। उन दिनों ऐसी प्रथा थी कि गाँवके जो प्रमुख चौधरी होते थे, वे अपने सभी आस-पासके गाँवोंकी मालगुजारी इकट्ठी करके उसे दिल्ली सल्तनतके सरकारी खजानेमें पहुँचा दिया करते थे।

एक बारकी बात है कि खरखौदाके त्यागी ब्राह्मणोंने, जो उस समयके प्रमुख चौधरी तथा माने हुए जमींदार थे, अपने आस-पासके गाँवोंकी मालगुजारी इकट्ठी की और उस मालगुजारीके रुपये लेकर सल्तनतके खजानेमें पहुँचानेके लिये वे दिल्लीकी ओर रवाना हुए। उस समय आजकी भाँति मोटर, बस या रेल आदि तो थी नहीं। प्रायः बैलगाड़ियोंसे ही काम लिया जाता था। उन जमींदार चौधरियोंने अपने साथ खजानेकी रक्षाकी दृष्टिसे चार-पाँच बैलगाड़ियाँ और बंदूकें लीं तथा दिल्लीके लिये चल दिये। जब वे सब लोग अपनी बैलगाड़ियोंको लेकर शाहदराके पास पहुँचे, तब उन्होंने वहाँपर सड़कके पास वृक्षोंके नीचे अपनी गाड़ियाँ रोक दीं और सोचा कि कुछ देर विश्राम करके तब आगे चलेंगे।

दैवयोगसे उस समय वहींपर सड़कके पास हरिजनोंके कुछ छोटे-छोटे बच्चे खेल रहे थे। खरखौदा गाँवसे उनके यहाँ कुछ भातई लोग भात लेकर गाड़ीमें आनेवाले थे। वे उनकी प्रतीक्षामें थे। उन बालकोंने जब इन गाड़ीवालोंको देखा और इनसे यह मालूम किया ये गाड़ियाँ खरखौदा गाँवकी हैं, तब उन बच्चोंने उनसे और ज्यादा बातें न करके यही समझ लिया कि हम जिन गाड़ियोंकी बहुत देरसे बाट देख रहे थे और तलाशमें खड़े थे,

वे ही हमारे मामा भातइयोंकी ये गाड़ियाँ आ पहुँची हैं। इसलिये वे बड़े प्रसन्न हुए और झटसे दौड़े हुए अपने घरपर जाकर सबको बताया कि शहरसे बाहर खरखौदाके भातइयोंकी गाड़ियाँ आकर खड़ी हो गयी हैं। तुमलोग जाकर उन्हें घरपर लिवा लाओ। इस शुभ समाचारको सुनकर हरिजनोंके मोहल्लेमें प्रसन्नताकी लहर दौड़ गयी और मामा भातइयोंको लिवा लानेकी तैयारियाँ प्रारम्भ हो गयीं।

बात यह थी कि शाहदरामें खरखौदा गाँवके हरिजनोंकी एक लड़की विवाही थी और अब उस लड़कीकी बेटीका विवाह था और उस विवाहमें खरखौदा गाँवसे मामा भातइयोंके भात लेकर आनेकी उत्सुकतासे प्रतीक्षा की जा रही थी। उस समय यह प्रथा थी और अब भी बहुत-सी जगहोंपर यह प्राचीन प्रथा चली आती है कि जब मामा भातई अपनी भानजीके लिये अपने गाँवसे भात लेकर आते हैं तो वे भातई लोग गाँवसे बाहर किसी जगहपर जाकर ठहर जाते हैं, एकदम सीधे गाँवमें नहीं आते। फिर अपने आनेकी सूचना देनेपर उनकी बहन हाथोंमें आरतीका थाल लेकर गाती-बजाती हुई बहुत-सी अन्य स्त्रियोंके साथ वहाँ जाती है और उन भातइयोंकी आरती कर, रोलीका तिलक लगाकर उन्हें बड़े मान-सम्मानके साथ गाँवमें ले आती है।

अब जब उन बच्चोंने घरपर जाकर यह कह दिया कि खरखौदासे मामा भातइयोंकी गाड़ियाँ आकर खड़ी हो गयी हैं तो उन्होंने उनकी यह बात बिलकुल सत्य मान ली और सब महिलाएँ अपने हाथोंमें आरतीका थाल लेकर बड़े जोर-शोरसे गाती-बजाती सड़ककी ओर भातइयोंके स्वागतार्थ और उन्हें अपने घरपर ले आनेके लिये चल दीं।

जब उन जमींदार चौधरियोंने सामनेसे बहुत-सी स्त्रियोंको इस प्रकार अपने हाथोंमें थाल लेकर दीपक जलाये और जोर-शोरसे गाती-बजाती हुई आते देखा, तब उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ कि हमारे पास इस प्रकार बहुत-सी स्त्रियाँ गाती-बजाती हुई क्यों आ रही हैं और यह सब क्या हो रहा है?

वे सब स्त्रियाँ उनके पासमें आ गयीं और उन्होंने देखा कि ये गाड़ियाँ हमारे मामा-भातइयोंकी नहीं हैं, ये तो कोई दूसरे लोग हैं, तब उन्हें बड़ी लज्जा आयी। उनकी सारी प्रसन्नता जाती रही और उनके चेहरेपर उदासी छा गयी।

चौधरीसाहबने जब उन महिलाओंसे इस प्रकार बड़ी धूम-धामसे गाती-बजाती हुई आनेका कारण पूछा, तब उन्होंने चौधरीसाहबको बताया कि हम सब गाती-बजाती हुई इसलिये यहाँपर आयी हैं कि आज हमारी लड़कीका विवाह है और यहाँ शाहदरामें खरखौदा गाँवके हरिजनकी लड़की विवाही है। इसलिये खरखौदासे आज हमारे भातई भात लेकर आनेवाले हैं। हमारे बच्चोंने भूलसे आपलोगोंको ही भातई समझकर हमें गलतीसे यहाँपर भेज दिया है। अब हम लौट जाती हैं।

जब चौधरीसाहबने उन महिलाओंके मुखसे यह सुना कि खरखौदा गाँवकी हरिजनकी लड़की शाहदरामें विवाही है और खरखौदासे भात आनेकी प्रतीक्षा क़ी जा रही है, तब फिर क्या था, झटसे उन्होंने उनसे कहा कि 'ठहरो, वापस मत लौटो।' और अपने मनमें यह विचार किया कि जब यह खरखौदा गाँवकी बेटी है और हम उसी खरखौदा गाँवके रहनेवाले हैं तो फिर क्या गाँवके रिश्तेसे यह हमारी अपनी बेटी नहीं हुई और जब यह भातइयोंके भात लानेकी प्रतीक्षामें है तो क्या हम

खरखौदाके रहनेवाले इसके भाई नहीं हैं और भात भरना क्या हमारा कर्तव्य या धर्म नहीं है? क्या हमारे होते हुए ये इस प्रकार निराश होकर लौटेंगी? यदि आज बिना भात आये विवाह हुआ तो इसमें क्या हमारे गाँवकी बदनामी नहीं है? उन्होंने आपसमें परामर्श किया तो सबने यही कहा कि 'यह हमारे खरखौदा गाँवकी बेटी है और यदि भात नहीं भरा गया तो हमारे गाँवका नाम बदनाम होगा। इसलिये अपने गाँवकी बेटीको अपनी बेटी मानकर उसका भात भरना हमारा परम कर्तव्य है।' यह निश्चय करके उन चौधरीसाहबने उन महिलाओंसे कहा कि 'तुम अब घबराओ नहीं, जब तुम हमें अपना भातई मानकर स्वागत करने आयी हो तो हम तुम्हारा भात भरेंगे और तुम्हें खाली हाथों निराश नहीं लौटने देंगे। हम भी खरखौदा गाँवके रहनेवाले हैं और खरखौदाकी बेटी हमारी अपनी बेटी है। हम भातई हैं और हम तुम्हारे साथ भात लेकर चलते हैं।' महिलाएँ यह सुनकर आश्चर्यचकित रह गयीं और उनकी प्रसन्नताका पारावार नहीं रहा। चौधरीसाहब भातई बन गये और बड़ी प्रसन्नताके साथ उनके साथ हो लिये और महिलाएँ गाती-बजाती उन्हें अपने घरपर लिवा ले गयीं। जिस समय इन चौधरीसाहबके हरिजनके यहाँ भातई बनकर भात भरनेके लिये आनेका समाचार मालूम हुआ, तब सारा गाँव इस अद्भुत दृश्यको देखनेके लिये उमड़ पड़ा। भात भी कोई मामूली थोड़े ही था; जिसकी कभी स्वप्नमें भी कल्पना नहीं की जा सकती, ऐसा वह भात था। चौधरीसाहबने दिल खोलकर और गाँवकी बेटीको अपनी बेटी मानकर जितने भी रुपये वे मालगुजारीके खजानेमें दाखिल करानेके लिये ले जा रहे थे, सब भातमें दे डाले। ब्राह्मण-

हरिजनके इस अद्भुत प्रेमको देखकर और इस प्रकार हजारों रुपये भातमें आये देखकर सारे गाँवमें प्रसन्नताकी लहर दौड़ गयी और सभी लोग चौधरीसाहबकी भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगे। बच्चे-बच्चेकी जबानपर इस भातकी चर्चा सुनायी देने लगी।

चौधरीसाहब भात देकर अपने स्थानपर वापस लौट आये। चौधरीसाहबने अपना सारा रुपया तो भातमें दे डाला था और अब सल्तनतको रुपया कहाँसे दिया जाय, यह समस्या उनके सामने आयी। आपसमें विचार-विनिमय हुआ और यह निश्चय हुआ कि यहाँसे दिल्ली जाकर सरकारसे रुपया दाखिल करनेके लिये कुछ दिनोंकी मोहलत ले ली जाय और फिर दिल्लीसे लौटकर गाँवमें जाकर और गाँवसे रुपये लाकर खजानेमें दाखिल किये जायँ।

चौधरीसाहब दिल्ली जा पहुँचे और उन्होंने वहाँपर जाकर वजीरको अपनी सारी बातें आद्योपान्त सुना डालीं। उसे बताया कि हम मालगुजारीका सब रुपया अपने साथ लाये थे, पर एक हरिजनकी लड़की जो हमारे गाँवकी बेटी थी और गाँवके रिश्तेमें हमारी भी बेटी लगती थी, हमने सब रुपये उसके विवाहके भातमें दे डाले हैं। इसलिये हमें पुनः गाँव जाकर रुपया लाकर दाखिल करनेके लिये कुछ दिनोंकी मोहलत दी जाय।

वजीरने चौधरीसाहबके मुखसे यह बात सुनी तो उसे बड़ा आश्चर्य हुआ और उसने कहा कि चौधरीसाहब! मैं आपकी यह बात बादशाहके सामने पेश करूँगा और फिर वे जितने दिनोंकी आपको रुपया दाखिल करनेकी मोहलत देंगे, आपको बता दूँगा।

वजीरने बादशाहको सारी घटना आद्योपान्त कह सुनायी और मोहलत देनेकी बात उनके सामने रखी। बादशाहने कहा कि

‘चौधरीसाहबको हमारे सामने पेश किया जाय।’ चौधरीसाहबको बादशाहके सामने पेश किया गया तो बादशाह चौधरीसाहबके इस प्रकार हरिजनकी बेटीको अपनी बेटी मानकर मालगुजारीके लिये लाये गये सारे रुपये भातमें दे डालनेपर उनसे नाराज नहीं हुए, बल्कि बड़े प्रसन्न हुए। उन्हें इस बातसे बड़ी प्रसन्नता हुई कि हमारी सल्तनतमें ऐसे आदमी भी मौजूद हैं कि जो एक हरिजनकी बेटीको भी अपनी बेटी समझकर उसके विवाहमें भातमें सारे रुपये दे सकते हैं।

बादशाहने चौधरीसाहबसे कहा—‘चौधरीसाहब! इस रुपयेको जो तुमने हरिजनकी बेटीके विवाहमें दे डाला है, अब तुम्हें दुबारा यहाँपर लानेकी और खजानेमें दाखिल करनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। यह भात जो तुम अपनी ओरसे दे करके आये हो, यह हमारी ओरसे या सल्तनतकी ओरसे दिया हुआ मान लिया गया है।’

~~~O~~~
~~~
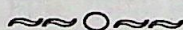
हरिजनकी बेटी भी अपनी ही बेटी

भारतके सुप्रसिद्ध महान् तीर्थ श्रीजगन्नाथपुरी (उड़ीसा)-के महाराजाधिराज बड़े ही कट्टर सनातनधर्मी थे। एक बार महाराज शेर-चीते आदि जंगली खूँखार जानवरोंका शिकार खेलनेकी दृष्टिसे जंगलमें गये और अपने मन्त्रीको भी अपने साथमें ले गये। गरमीके दिन थे, शिकारकी तलाशमें घूमते-घूमते जंगलमें रास्ता भूल गये और भटक गये। दोनों घोड़ोंपर सवार थे और ठीक दोपहरका समय था, गरमी भी उस दिन बड़ी तेज पड़ रही थी। महाराजा और मन्त्री दोनोंको ही बड़े जोरकी प्यास लग रही थी। चारों ओर देखा। न तो कोई नदी, कुआँ, बावड़ी, तालाब दिखायी दिया और न आस-पास कोई गाँव ही दिखायी दिया, जहाँ जाकर वे दोनों पानी पीकर अपनी प्यास बुझा सकें? अब तो महाराजा और मन्त्री दोनों बड़े घबड़ाये। गला सूख रहा था। पानीकी तलाशमें चलते-चलते कुछ दूरीपर एक गाँवपर दृष्टि पड़ी तो मन्त्रीने कहा कि 'राजन्! यह सामने एक गाँव दीख पड़ता है, जल्दीसे घोड़ेको दौड़ायें, गाँवमें चलकर पानी पिया जाय।'

राजा साहब और मन्त्रीने अपने घोड़े दौड़ाये और गाँवके समीप आ गये। दोनों एक कुएँके पास पहुँचे। घोड़ोंको एक वृक्षसे बाँध दिया और महाराजाने मन्त्रीको हुक्म दिया कि 'जल्दीसे डोल माँजकर कुएँसे पानी खींचो और मुझे पिलाओ, नहीं तो प्यासके मारे प्राण निकले। अब देरी बिलकुल न करो।'

मन्त्रीने कुएँपर रखे डोलको हाथमें उठाया और ज्यों ही उसे मिट्टीसे माँजकर कुएँमें लटकाया तो इतनेमें उस गाँवकी एक हरिजन स्त्री अपने सिरपर कूड़ेका टोकरा लिये उधर आ निकली। उसकी दृष्टि राजापर पड़ी। वह पहचान गयी कि ये तो हमारे गाँवके

महाराजा हैं। फिर क्या था, वह बड़ी प्रसन्न हुई और एकदमसे महाराजाके पास दौड़कर आयी तथा आकर महाराजासे कहने लगी—

हरिजनकी बेटी—ताऊजी! आप यहाँपर कब और कैसे आये?

राजा साहब—तू कौन है बेटी?,

हरिजनकी बेटी—मैं आपके गाँवके हरिजनकी लड़की हूँ ताऊजी। ताऊजी! क्या आपने मुझे नहीं पहचाना? क्या आप मुझे भूल गये?

राजा—नहीं बेटी, मैंने तुम्हें नहीं पहचाना।

हरिजनकी बेटी—मैं आपके गाँवके हरिजनकी बेटी हूँ।

राजा—अच्छा, तुम हमारे झुम्मनकी बेटी हो?

हरिजनकी बेटी—जी हाँ, ताऊजी!

राजा—बेटी, तुम इस गाँवमें कैसे आयी?

हरिजनकी बेटी—ताऊजी! मैं इस गाँवमें विवाही हूँ, इसलिये मैं यहींपर रहती हूँ।

राजा—अच्छा बेटी, यह बात है।

महाराजा साहबके कानोंमें हरिजनकी लड़कीके यह शब्द पड़ते ही कि 'मैं आपके गाँवके हरिजनकी बेटी हूँ और मैं इस गाँवमें विवाही हूँ' वे एकदमसे चौंक पड़े। उन्होंने विचार किया कि गाँवकी बेटी है सो अपनी बेटी है, फिर जिस गाँवमें अपने गाँवकी बेटी विवाही है, उस गाँवका पानी पीकर घोर पाप क्यों किया जाय? उन्होंने तुरंत अपने मन्त्रीको आवाज दी कि 'मन्त्रीजी! तुरंत उस डोलको वहींपर रख दो। जल्दीसे इधर आओ। इस कुएँका पानी हमें अब बिलकुल भी नहीं पीना है। इस गाँवमें तो हमारे गाँवके झुम्मनकी लड़की विवाही है। यदि आज हम भूलसे भी इस गाँवका पानी पी लेते तो हमें घोर पाप लगता। आज भगवान् श्रीजगन्नाथजीकी बड़ी असीम कृपा है कि

जो इस गाँवका पानी पीनेसे हम बच गये। भले ही हमारे प्राण चले जायँ चिन्ता नहीं है, पर जिस गाँवमें अपने गाँवकी बेटी विवाही है, उस गाँवका पानी पीकर नरक कैसे जायँ?'

मन्त्रीने यह बात सुनी तो उसने भी राजाकी बातका समर्थन किया और भगवान्‌को बड़ा ही धन्यवाद दिया कि उन्होंने इस घोर पापसे बचाकर हमारे धर्मकी रक्षा की।

राजा साहबने कहा—बेटी! तूने आज हमारा धर्म बचाया। यह बड़ा अच्छा किया। आज तुझको देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई। अपनी बेटीको कुछ-न-कुछ अवश्य देना चाहिये। सो इस समय मेरे पास और तो कुछ तुझे देनेके लिये नहीं है। मेरे हाथमें यह एक हीरेसे जड़ित सोनेकी अँगूठी है। तू इसे ही ले ले। मैं इस समय तुझे विशेष कुछ नहीं दे रहा हूँ। बेटी! अपने मनमें यह विचार न करना कि मेरे ताऊजी मुझे मिले थे और उन्होंने मुझे कुछ भी नहीं दिया।

इस प्रकार अपना धर्म समझकर और हरिजनकी बेटीको अपनी बेटी मानकर, उसका आदर-सत्कार करनेके बाद राजा साहब घोड़ेपर चढ़कर प्यासे ही वहाँसे लौट गये। आगे किसी गाँवमें पहुँचकर वहाँ पानी पीकर अपनी प्यास शान्त की।

इधर जब वह हरिजनकी लड़की अपने घर पहुँची और अपने राजाकी दी हुई हीरेजड़ित सोनेकी अँगूठी दिखायी तो चारों ओर प्रसन्नताकी लहर दौड़ गयी। जगह-जगह राजा साहबकी भूरि-भूरि प्रशंसा की जाने लगी।

यह था हमारे धर्मप्राण भारतका और परम पवित्र सत्य सनातनधर्मका महान् उच्चादर्श। गाँवकी सभी बेटियोंको अपनी बेटी मानकर उनका भली प्रकार यथाशक्ति आदर-सत्कार किया जाता था।

~~0~~

कैलास-मानसरोवरमें सिद्ध योगी महात्माओंके दर्शन

हमारे जिन कैलास-मानसरोवर आदि पावन तीर्थोंको चीन हड़प चुका है। वहाँ आज भी कैसे-कैसे महान् सिद्ध, त्रिकालदर्शी योगी महात्मा रहते हैं, इसके सम्बन्धमें कुछ आँखोंदेखी आश्चर्यजनक सच्ची बातें सुनिये। कुछ समयपूर्व भारतके प्रसिद्ध आर्य संन्यासी महात्मा श्रीआनन्दस्वामीजी महाराज (गृहस्थरूपमें महाशय खुशहालचंद सम्पादक 'मिलाप') पिलखुवा पधारे थे। उन्होंने अपनी कैलास-मानसरोवर-यात्राके सम्बन्धमें बड़े महत्त्वपूर्ण भाषण दिये थे। उन्हींमेंसे कुछ प्रसंग यहाँ प्रस्तुत किये जाते हैं—

अद्भुत आनन्द

मैं कैलास-मानसरोवरकी यात्रा कर आया हूँ। कैलास-मानसरोवर जाना एक प्रकारसे मृत्युके साथ खिलवाड़ करना है। वहाँ ऐसी बरफ पड़ती है कि शरीर ठंडसे जम गया-सा प्रतीत होने लगता है। मैं जब मानसरोवर और गौरीकुण्ड पहुँचा, तब मेरे साथियोंने वहाँ स्नान नहीं किया। बहुत अधिक शीत होनेके कारण उनकी हिम्मत ही नहीं हुई, पर मैं नहीं माना। मुझसे सबने कहा कि 'स्वामीजी महाराज! ठंड बहुत है, बरफ पड़ रही है, आप भी स्नान मत करो। कहीं ठंडमें स्नान करनेसे निमोनिया हो जायगा तो आप मर जायँगे।' इसपर मैंने उनसे कहा कि 'जब मेरी पार्वतीमाताने, मेरी गौरीमाताने इसमें स्नान किया है तो भला

मैं इसमें स्नान क्यों नहीं करूँगा? मैं यहाँ मरूँगा तो पवित्र स्थानपर ही मरूँगा, इससे बढ़कर मेरा क्या परम सौभाग्य होगा।' मैंने अपने हाथोंसे बरफ हटाकर जब अपने कमण्डलुसे बरफ तोड़कर जल भरकर अपने एक हाथपर डाला तो ऐसा लगा कि मानो हाथ ही नहीं रहा। जब दूसरी ओर जल डालकर स्नान किया तो वहाँ भी ऐसा ही प्रतीत हुआ। जब अपने सिरपर डाला तो सारा शरीर ही जैसे न रहा हो, ऐसा प्रतीत हुआ। तदनन्तर मैं कम्बल ओढ़कर वहाँ ध्यान करने बैठ गया। मुझे वहाँ बैठे ६-७ घंटे हो गये। ऐसा अद्भुत आनन्द आया कि मुझे भान ही नहीं रहा कि मैं यहाँ कबसे बैठा हूँ। मेरा मन एकदम एकाग्र—शान्त हो गया। जो महान् सुख, जो अद्भुत आनन्द मैंने आज पाया, वैसा मैंने जीवनभरमें कभी नहीं पाया। तीर्थयात्रा करनेसे क्या लाभ है, तीर्थयात्रा क्यों की जाती है और तीर्थस्थानका क्या प्रभाव है, इसका मुझे अपने जीवनमें आज पहली बार अनुभव हुआ। गाइडने आकर जब मुझे अपने हाथोंसे झकझोरा, तब मुझे होश हुआ। मैंने गाइडसे कहा कि 'तुमने मुझे व्यर्थ ही क्यों छेड़ा? मैं तो अद्भुत दिव्य आनन्दमें डूब रहा था। तुमने मुझे छेड़कर मेरे आनन्दमें विघ्न डाला, यह ठीक नहीं किया।' गाइडने कहा—'महाराज! आपको यहाँ बैठे ६-७ घंटेसे भी अधिक हो गये हैं। अब दिन छिपनेवाला है, बरफ भी पड़नी प्रारम्भ हो गयी है, अब आप यदि और अधिक बैठे तो बरफमें जम जाओगे और मर जाओगे।' मैंने कहा कि 'मुझे भले ही मर जाने दो, पर मुझे ऐसा सुख फिर कहाँ मिलेगा?' उसने कहा—'महाराज! यहाँ मत मरो, मेरी जिम्मेदारी है, इसलिये अब आप उठो।' मैं उठा। मैंने सारे पहाड़की ओर दृष्टि डाली तो चारों

ओर बरफ-ही-बरफ जमी थी और वह साक्षात् शंकरभगवान्‌का मन्दिर-सा प्रतीत हो रहा था।

मैंने वहाँ एक बड़ा ही अद्भुत दिव्य स्थान देखा। सारे पहाड़पर बरफ जमी होनेपर भी बीचमें वह ऐसा स्थान था, जहाँ बिलकुल ही बरफ नहीं थी। कहते हैं कि यह वही दिव्य स्थान है, जहाँ बैठकर श्रीशिवजीने श्रीपार्वतीजीको अमरकथा सुनायी थी। मैंने अपने गाइडसे कहा कि 'तुम मुझे वहाँपर ले चलो, जहाँ भगवान् श्रीशंकरजीने माता श्रीपार्वतीजीको अमरकथा सुनायी है।' उसने कहा—'महाराज! वहाँ कोई नहीं जाता है। उधर बहुत ज्यादा बरफ है और जानेका कोई रास्ता भी नहीं है।' वह मुझे बहुत मना करता रहा, पर मैं नहीं माना। मैंने उससे कहा कि 'मैं तो वहाँ अवश्य ही जाऊँगा।' मैं वहाँ गया, पर बड़े ही कष्टसे गया। कहींपर बरफसे फिसलकर गिरा, कहीं पैर फिसला तो कहीं चोट लगी। अन्तमें जैसे-तैसे मैं वहाँ पहुँच ही गया और मैं उस दिव्य अद्भुत स्थानपर बैठकर आया, जहाँ शंकरभगवान् श्रीपार्वतीजीको कथा सुनाया करते थे। वहाँ बैठते ही मेरा मन एकदम शान्त हो गया और मुझे एक प्रकारसे समाधि-सी लगने लगी।

वहाँसे उतरनेपर मैंने देखा कि एक मद्रासी साधु बेहोशीकी हालतमें एक किनारेपर मुर्दा-जैसा पड़ा हुआ था। कहते हैं कि मना करनेपर भी उसने कुण्डमें स्नानके लिये छलाँग लगा दी थी, इसीसे वह ठण्डके मारे बेहोश हो गया था और अब उसके बचनेकी कोई आशा नहीं थी। मैंने गाइडसे कहा और उस साधुको एक झब्बूपर लदवाया। फिर उसे बेहोशीकी हालतमें ही नीचे लाया गया। तदनन्तर उसे अग्निसे तपाया गया, तब उसे

कुछ होश हुआ। वहाँ जलानेकी लकड़ी बिलकुल नहीं मिलती। वृक्षोंका भला वहाँ क्या काम? बकरियोंकी मैंगनी ही वहाँपर जलायी जाती है।

योगी प्रणवानन्दजी महाराजके दर्शन

योगी स्वामी श्रीप्रणवानन्दजी महाराज मानसरोवरमें लगभग बीस वर्षसे रहते हैं। मैंने जब उनकी कुटियामें जाकर देखा तो मुझे वे पूर्वपरिचित-से प्रतीत हुए। याद आते ही मैंने कहा—'सोमयाजी! सोमयाजी!!' वे भी मेरी ओर देखने लगे। वे बीस वर्षपूर्व जब लाहौरमें रहते थे, तब कुछ दिनोंतक मेरे पास रहे थे। उस समय वे राजनीतिमें भाग लिया करते थे। मैंने उन्हें जब इस बातका स्मरण दिलाया तो उन्हें भी याद आ गया और उन्होंने मुझसे कहा कि मैं बीस वर्ष पहले राजनीतिमें भाग लेता था और राजनैतिक नेताओंके साथ मिलकर काम किया करता था। पर जब मैंने देखा कि राजनीतिमें भाग लेनेवाले प्रायः सभी चरित्रभ्रष्ट हैं तब मेरे मनमें बड़ी ग्लानि हुई और मैं एकदम वहाँसे हटकर यहाँ चला आया। तबसे योगाभ्यास करता हुआ मैं यहींपर रहता हूँ। मैंने जब उनसे पूछा कि 'आपने योगमें क्या सीखा है?' तब उन्होंने मुझे कुछ क्रियाएँ दिखायीं। प्राणायामद्वारा लम्बे-लम्बे श्वास खींचे और पेट, छाती, टाँग, बाँह, सिर सभीको फुटबालकी तरह फुला लिया, फिर एकदम बैठे-बैठे उनका आसन पृथ्वीसे ऊपर उठ गया और ऊपर छततक लग गया। फिर नीचे आ गया। उनके योगका यह आश्चर्यजनक चमत्कार मैंने अपनी आँखोंसे देखा। उन्होंने और भी बहुत-सी योगकी बातें बतायीं, जो सर्वसाधारणके सामने नहीं बतायी जा सकतीं।

देखते-देखते अदृश्य हो जानेवाले सिद्ध योगीके दर्शन

यात्रासे लौटते समय मुझे एक दूसरे महान् सिद्ध योगी मिले। मुझे उनके दर्शनका ही परम सौभाग्य नहीं प्राप्त हुआ, वरं उनसे मेरी खूब बातें भी हुईं। संध्याका समय था। उस दिन बरफ भी खूब पड़ रही थी। मेरे सब साथी अपने-अपने तम्बुओंमें बैठे थे। मैं तम्बूसे बाहर निकला। मैं खड़ा होकर कहने लगा कि 'हम यह सुना करते थे कि कैलासमें देवी-देवताओंका निवास है और वहाँ बड़े-बड़े सिद्ध योगी रहते हैं, पर यहाँपर हमें तो कोई भी सिद्ध योगी नहीं मिला, फिर हम कैसे मानें कि यहाँ कोई सिद्ध योगी रहते हैं।' मेरा इतना कहना ही था कि वहाँ मेरे सामने अचानक एक योगी प्रकट होकर खड़े हो गये। मैंने उनकी ओर आश्चर्यके साथ देखा। उन सिद्ध योगीके सारे शरीरपर भस्म लगी हुई थी। वे बड़े ही भव्य और सुन्दर प्रतीत हो रहे थे। मैंने तुरंत उन्हें नमस्कार किया और उन्होंने मुझे अपने हृदयसे लगा लिया। फिर उन्होंने मुझसे कहा कि 'तुम जो यह कहते थे कि कैलास-मानसरोवरकी यात्रामें कोई सिद्ध योगी नहीं मिला, सो योगी मिलें कहाँसे? योगीकी कोई खोज भी तो नहीं करता? जो खोज करता है, उसे अवश्य मिलते हैं।' इतनेमें ही मैंने क्या देखा कि वे परम सिद्ध योगी मेरे देखते-देखते तुरंत अदृश्य हो गये। मैंने इधर-उधर देखा तो कहींपर भी दिखायी नहीं पड़े। मुझे बड़ा भारी आश्चर्य हुआ कि ऐसे पहाड़ोंपर जहाँ बरफ-ही-बरफ पड़ रही है, वृक्षका नाम-निशान भी नहीं है और कोई मनुष्य तो क्या, पशु-पक्षी भी नहीं रहता,

ये योगी यहाँ कैसे रहते हैं? और मेरे मनकी बात इन्हें कैसे मालूम हो गयी? फिर एकदम अदृश्य कैसे हो गये? मुझे लगा कि कहीं मैंने यह स्वप्न तो नहीं देखा है या मुझे कोई भ्रम तो नहीं हो गया है? मैंने अंदर अपने तम्बूमें आकर टार्च जलाकर गौरसे देखा तो रोशनीमें मुझे सचमुच अपने कपड़ोंपर योगीके शरीरकी भस्म लगी दिखायी दी, तब तो मुझे पूरा निश्चय हो गया कि यह स्वप्न या भ्रम नहीं था, वरं बिलकुल सत्य घटना थी और वास्तवमें ही मुझे महान् सिद्ध योगीके दर्शन करनेका परम सौभाग्य प्राप्त हो गया है और सचमुच यहाँ बड़े-बड़े सिद्ध योगी निवास करते हैं।

दूसरे दिन सिद्ध योगीसे भेंट

दूसरे दिन प्रातःकाल मैंने अपने गाइडसे, जिसका नाम 'शीशखम्भाजी' था, कहा—'शीशखम्भाजी! बताइये, यहाँपर कोई योगी महात्मा रहते हैं?' शीशखम्भाजीने कहा कि 'महाराज! एक योगी रहते तो हैं।' मैंने उनसे कहा कि 'तुम मुझे उन योगीके दर्शन कराओ।' शीशखम्भाजीने कहा—'महाराज! उनके पास जो जाता है, वे उसे खा जाते हैं।' मैंने कहा—'तुम इस बातकी परवाह मत करो कि वे योगी मुझे खा जायँगे। तुम मुझे उनके दर्शन अवश्य करा दो', उन्होंने कहा—'महाराज! मेरी हिम्मत नहीं है कि मैं वहाँ जाऊँ, वह मुझे जाते ही खा जायँगे', मैंने कहा—'अच्छा, तुम्हारी जानेकी हिम्मत नहीं है तो तुम न जाओ, पर तुम मुझे वहाँका रास्ता बता दो। मैं स्वयं वहाँ चला जाऊँगा।' वे मुझे बहुत मना करते रहे, अन्तमें मेरे बार-बार आग्रह करनेपर मेरे साथ चले और कुछ दूरसे ही रास्ता बतानेको तैयार हो गये। उन्होंने मुझसे चलती बार कहा कि 'महाराज! आपको कहीं वह

योगी खा गया तो हम जिम्मेदार नहीं हैं; अब आप जानो?' मैंने कहा कि 'तुम इस बातकी तनिक भी चिन्ता मत करो, मुझे उनके स्थानकी पहचान बता दो।' उन्होंने दूरसे अपने हाथका निशाना करके बताया कि 'सीधे कुछ दूरीपर चलनेपर नीचेकी ओर इस प्रकारका एक पत्थर आयेगा। उसके पास एक और पत्थर है, उसे हटा देना। उसी गुफाके अंदर योगी रहता है।' वे यों बताकर पीछे हट गये और अपने स्थानपर लौट गये। मैं धीरे-धीरे चलकर वहाँ पहुँचा। वहाँ जाकर मैंने वह पत्थर हटाया और गुफामें देखा तो वे गत रात्रिको दर्शन देनेवाले महान् सिद्ध योगी महात्मा ही सारे शरीरपर भस्म लगाये विराजमान हैं। उन्होंने मुझे देखा और बड़े प्रेमसे मुझे अपने पास बुला लिया। अब तो मेरी उनसे खूब खुलकर बातें हुईं। मैंने उनसे पूछा—'महाराज! क्या यह बात सत्य है कि आपसे जो मिलने आता है, उसे आप मारकर खा जाते हैं।' उत्तरमें उन्होंने हँसते हुए कहा—'क्या मैं कोई राक्षस हूँ कि जो मनुष्यको खा जाता हूँ। कोई मनुष्य मेरे पासतक न आये, इसलिये यह डर दिखाया हुआ है और कोई बात नहीं है। मैं किसीको खाता नहीं हूँ।'

उन सिद्ध योगी संतसे मेरी बातें होती रहीं। उन्होंने बहुत-सी ऐसी बातें भी बतायीं, जिनको किसी दूसरे मनुष्यको बतानेसे मुझे मना कर दिया। इधर मैं उनसे बात कर रहा था और बहुत देर होनेके कारण उधर हमारे साथियोंमें मेरे न लौटनेसे बड़ी चिन्ता हो रही थी। वे सोच रहे थे कहीं योगीने उन्हें मारकर खा न लिया हो! वे दूरसे मेरा नाम ले-लेकर आवाज दे रहे थे, पर उनकी इतनी हिम्मत नहीं थी कि जो मेरे पासमें आ सकें। मुझे इस बातका कुछ भी पता नहीं था। उन सिद्ध

योगीको वहीं बैठे-बैठे सब पता लग गया और उन्होंने कहा कि 'अच्छा, अब तुम जाओ, तुम्हारे साथी बहुत घबरा रहे हैं। वे बड़े व्याकुल हो रहे हैं। उन्हें चिन्ता हो गयी है कि कहीं योगीने तुम्हें मारकर खा न डाला हो?' मैंने कहा—'महाराज! आपको यह कैसे मालूम हो गया कि वे बड़े चिन्तित हो रहे हैं? आप तो यहाँ बैठे हैं?' उन्होंने कहा—'रात्रिको जब तुमने यह कहा था कि हमें कैलास-मानसरोवरकी यात्रामें कोई योगी नहीं मिले, तब बताओ मुझे कैसे मालूम हो गया था और मैंने उसी समय प्रकट होकर कैसे तुम्हें दर्शन दिये थे? मुझे भूत, भविष्य, वर्तमान सबका ज्ञान है। अमेरिका, इंग्लैण्ड, रूस, जर्मनी, हिंदुस्थान आदि देशोंमें कहाँ कब क्या हो रहा है, इसका भी मुझे सब पता है।'

मैं उन त्रिकालज्ञ सिद्ध योगीको नमस्कार करके अपने स्थानपर लौट आया। आकर देखा तो मेरे साथी वास्तवमें बहुत घबराये हुए थे और बहुत ही चिन्तित थे। मुझे योगीके पाससे जिन्दा वापस लौटा देखकर वे बहुत ही प्रसन्न हुए। मैंने उन महान् सिद्ध योगीसे भेंट करके अपने जन्मको सफल माना। इससे मुझे जो प्रसन्नता हुई वह वर्णनातीत है।

जीवात्माका दर्शन करानेवाले लामा योगी

मैं वहाँ एक बहुत बड़े बौद्ध लामा योगीके पास उनके दर्शनार्थ गया। न तो वे बौद्ध लामा हमारी भाषा जानते थे और न हम उनकी भाषा जानते थे, इसलिये एक दुभाषियाको बुलाया गया। उसके माध्यमसे उनकी मेरी खूब बातें हुईं। मैंने जब उनसे योगके सम्बन्धमें गुप्त बातें पूछीं तो उन योगीने कहा कि 'यह दुभाषिया अनधिकारी है, इसके सामने ये बातें

नहीं बतायी जा सकतीं। इसलिये इस दुभाषियेको यहाँसे हटा दो।' मैंने वहाँसे उसे हटा दिया। पर बात तो भाषा-ज्ञानके अभावमें हो नहीं पायी, अतः फिर दुभाषियेको बुलाकर मैंने कहा कि 'इनसे कहो कि ये मुझसे यौगिक भाषामें बातें करें, जिससे हम एक-दूसरेकी बातें भलीभाँति समझ सकें।' उन्होंने यौगिक भाषामें बातें करना स्वीकार कर लिया। फिर उनकी हमारी यौगिक भाषामें खूब बातें होती रहीं। उन्होंने प्राणायामद्वारा अपने शरीर, छाती आदिको फुलाया और हृदय-स्थानके पास एक चमकती झिलमिलाती मणिके रूपमें अँगूठेके बराबर जीवात्माका मुझे साक्षात् दर्शन कराया। इससे मुझे बड़ा ही वर्णनातीत आनन्द प्राप्त हुआ।

मुझे वहाँ और भी बड़े-बड़े सिद्ध योगी मिले, पर उन्होंने अपने सम्बन्धमें किसीको भी कुछ भी बतानेसे मना कर दिया। इसलिये मैं उनके सम्बन्धमें किसीको कुछ भी नहीं बता सकता। कैलास-मानसरोवरमें आज भी बड़े-बड़े सिद्ध योगी गुप्तरूपसे रहते हैं, यह मुझे पूर्ण निश्चय हो गया। शास्त्रोंमें इनकी महिमाके सम्बन्धमें लिखी बातें अक्षरशः सत्य हैं; इसमें तनिक भी संदेह नहीं है।

हिमालयके अद्भुत सिद्ध महात्माओंसे भेंट

[साकेतवासी योगिराज स्वामीजी श्रीज्योति:प्रकाशाश्रमजीके जीवनकी कुछ बातें]

एक बार पिलखुवा पधारनेपर मुझे पूज्यपाद अनन्त श्रीस्वामीजी श्रीकपिलदेवाचार्यजी महाराजके दर्शन-सत्संगका परम सौभाग्य प्राप्त हुआ था। उनसे साकेतवासी योगिराज सिद्ध संत श्रीस्वामीजी श्रीज्योति:प्रकाशाश्रमजी महाराजके द्वारा बतायी गयी हिमालयमें सिद्ध महात्माओंके दर्शन-मिलनकी चमत्कारपूर्ण बातें सुननेको मिलीं। उन्होंने बतलाया कि साकेतवासी योगिराज श्रीस्वामीजीने स्वर्गीय श्रोत्रिय पं० श्रीभगवानदत्तजी शास्त्री और धनौरा मण्डीके परम श्रद्धेय पं० श्रीदिवाकरजी शास्त्री आदि विद्वानोंके सामने ये सब बातें बतलायी थीं। यह सुनकर मेरे मनमें पूरी बातें जाननेके लिये बड़ी उत्सुकता उत्पन्न हो गयी। पूज्य श्रीदिवाकर शास्त्रीजीसे मेरा पूर्व परिचय था और उनकी मुझपर सदा कृपादृष्टि रही है। मैंने उनसे पत्रव्यवहार किया। उन्होंने कृपापूर्वक श्रीस्वामीजी महाराजका संक्षिप्त जीवनपरिचय, चित्र, पुस्तक तथा हिमालयमें महात्माओंके मिलनसम्बन्धी विवरण लिख भेजा। इसके लिये मैं उनका अत्यधिक आभारी हूँ। पूज्य श्रीदिवाकरजी शास्त्री आदि विद्वानोंके द्वारा विदित किया हुआ साकेतवासी स्वामीजीका संक्षिप्त चरित और स्वामीजीके द्वारा सुनायी सत्य घटनाएँ उन्हींकी भाषामें ज्यों-की-त्यों इस प्रकार हैं—

परम पूज्यपाद प्रातःस्मरणीय योगिराज स्वामीजी श्रीज्योतिः-प्रकाशाश्रमजी महाराज पंजाबके अमृतसर जिलेके एक बड़ें रईसके सुपुत्र थे। माताके श्रीरामकथामृतने पुत्रकी हृदयभूमिको भक्तिभावनाओंके लिये उर्वरा बना दिया था। शैशवकालसे ही श्रीरामजीमें आपका अटल अनुराग हो गया और आपका अधिक समय श्रीरामजीके पूजन, ध्यान और जपमें ही व्यतीत होने लगा। आपकी संत-महात्माओंमें बड़ी श्रद्धा-भक्ति थी। धीरे-धीरे वैराग्यका अङ्कुर हृदयमें उदित होकर बढ़ने लगा। आपका चित्त उत्तराखण्डमें जाकर भजन-ध्यान करनेको लालायित हो उठा। परंतु माताके अनुरोध करनेपर आपको घरपर ही रुकना पड़ा। कालक्रमसे कुछ समयके पश्चात् माताका भी स्वर्गवास हो गया। आपकी इच्छा भ्रमणके लिये उत्कट हो उठी और लगभग पंद्रह वर्षकी अवस्थामें आप बड़ी सम्पत्ति और सुखको लात मारकर घरसे निकल पड़े और श्रीहरिद्वार-ऋषिकेश होते हुए श्रीबदरीनाथजी जा पहुँचे। श्रीभृगवानदत्त श्रोत्रियजी महाराज स्वामीजीकी पर्वतयात्राका वर्णन करते हुए लिखते हैं—

स्वामीजीकी पर्वतयात्रा बड़ी ही रोचक है और उन्होंने मुझे इस यात्राका वर्णन ऋषिकेशमें लाला श्रीचरणदासजीकी धर्मशालामें अपने श्रीमुखसे सुनाया था। आपके श्रीमुखसे निकले हुए शब्द अब भी मुझे ज्यों-के-त्यों स्मृतिपटलपर अङ्कित-से दीखते हैं। संक्षेपमें उन्हींके शब्दोंको आपके सामने रखता हूँ। स्वामीजी महाराज कहने लगे—

मैं श्रीबदरीनारायणजीके दर्शन कर लौटकर मार्गमें पीपलचट्टीपर ठहरा। बड़े-बड़े महात्माओंके मुखसे मैंने अनेक बार सुना था कि उत्तराखण्ड (हिमालय)-में बड़े-बड़े सिद्ध-महात्मा रहते हैं।

मेरी प्रबल इच्छा हुई कि मैं प्रथम किसी सिद्धके दर्शन करूँ और फिर भगवान् श्रीरामचन्द्रजीके दर्शनोंके लिये लगकर भजन करूँगा।

मैं मार्ग छोड़कर पीपलचट्टीसे पूर्वकी ओर पहाड़ोंपर चढ़ने लगा। बीस दिनतक तो कहीं-कहीं पहाड़ोंपर पर्वतवासियोंके ग्राम मिलते रहे। उससे आगे बढ़नेपर बस्ती नहीं थी। कहीं कभी हिंसक जीवोंके चलनेसे बनी हुई पगडंडियाँ मिल जाती थीं। कहीं-कहीं केवल वृक्षोंकी जड़ और झाड़ियोंको पकड़कर आगे बढ़ना पड़ता था। कोसोंतक ऊँचे पर्वत मार्गमें पड़ते थे। उनकी ऊँचाई देखकर यह अनुमान होता था कि आगे इससे ऊँचा पर्वत न होगा। परंतु उसको लाँघनेके बाद सामने उससे भी अधिक ऊँचा पर्वत दीख पड़ता था। नीचे दृष्टि डालनेसे भूमिके दर्शन नहीं होते थे। केवल अन्धकार ही दीख पड़ता था।

मैं दिनभर चलता रहता था। रात कहीं ऊँची चट्टानपर बैठकर व्यतीत करता था। हिंस्र जीवोंसे बचनेके लिये अग्नि जला लिया करता था। रात्रिमें सिंह आदिके गर्जन सुन पड़ते थे, परंतु श्रीरामजीकी कृपासे मुझे इससे भय नहीं लगता था।

विधिवश एक दिन मैं एक तंग पगडंडीसे आगे बढ़ रहा था। एक ओर गगनस्पर्शी पर्वत था और दूसरी ओर पातालभेदी खड्ड था। सामने दृष्टि की तो एक बबर सिंह मन्थर गतिसे धीरे-धीरे मेरी ओर आता दिखायी दिया। बचकर निकल जानेका मार्ग नहीं था। पीछे लौटना व्यर्थ था; क्योंकि सामने सिंहने देख लिया था। पैरके तनिक-से विचलित होनेसे अतल खड्डमें गिरकर मरना था। तब मैं सोचने लगा कि बस, हो चुके सिद्धोंके दर्शन और देख चुका मैं सिद्धाश्रम; यहाँतक ही देखना था, अब सिंह बिना खाये

नहीं छोड़ेगा। अन्त समय आ गया। अच्छा! प्रभुकी इच्छा! अस्तु **'अन्तिम मति सो गति'**—यह विचारकर नेत्र बंदकर मैं हृदयमें क्या देखता हूँ कि सामने धनुष-बाण लिये श्रीरामजी विराजमान हैं, सिरपर जटा है और मुख अति मनोहर है, पीत वसन है, गलेमें वनमाला है। सरकारके अलौकिक स्वरूपमें मन इतना लीन हुआ कि कुछ समयतक बाहरकी सुध-बुध न रही।

अचानक ध्यान टूटा। सिंह समीप आ रहा था। विचार हुआ—आने दो, सिंहके खानेसे कुछ क्षणमें श्रीरामजी मिल जायँगे। न जाने कितने समयतक जीवनका भार ढोकर दुःख उठाना पड़ता। फिर प्रभुके स्वरूपका ध्यान करने लगा, परंतु ध्यान न जमा, इसी बीच सिंहने सामने आकर भूमिपर पंजेसे थपकी दी और बु, बु, बु, बु शब्द किया। सिंहने इसी प्रकार तीन-चार बार किया, परंतु मैंने नेत्र नहीं खोले। मैंने सोचा कि यह अपने खाद्यको पाकर प्रसन्न हो रहा है। अब यह मुझे खाना प्रारम्भ करनेवाला है। ओह, जब सिंह शरीरको फाड़ेगा तो कुछ समयतक मुझे बड़ी पीड़ा होगी। मैं यह विचार ही रहा था कि पीठके पीछे धमाका हुआ। मैंने नेत्र खोलकर पीछे गर्दन मोड़कर देखा तो वह महाभयंकर विशालकाय सिंह मेरे ऊपरसे कूदकर जा रहा है। तब अपने प्रभु श्रीरामकी अपने ऊपर इस प्रत्यक्ष कृपाको देखकर मेरा हृदय गद्गद हो गया। हृदयसे बार-बार यह पद निकलने लगा—

'जानकीनाथ सहाय करें तब कौन बिगार करै नर तेरो'

कुछ समयके पश्चात् विचार हुआ कि 'अच्छा होता कि सिंह मुझे अपना आहार बना लेता। सरकारके दर्शन होते और विषय-वियोगकी ज्वाला शान्त हो जाती। किन्हीं पुण्योंसे यह

मिलन-सुअवसर प्राप्त हुआ था, परंतु मेरे किसी प्रबल पापने आकर बीचमें विघ्न डाल दिया। सरकारने मुझे अत्यन्त पतित जानकर ही अपने चरणोंमें नहीं बुलाया।' इस विचारने मुझे विह्वल कर दिया। मैं फूट-फूटकर रोने लगा। मार्गमें चलते हुए तीन दिनतक मेरे नेत्रोंसे प्रेमाश्रु बहते रहे। आगे चलकर इसी प्रकार एक बड़े भालूसे मुठभेड़ हुई। उससे भी मेरी श्रीरामजीने रक्षा की।

इसी प्रकार उस निर्जन पहाड़ी वनमें चलते-चलते मुझे दो मास व्यतीत हो गये, परंतु किसी सिद्ध-महात्माके दर्शन नहीं हुए। हृदयमें कुछ-कुछ निराशा-सी होने लगी। फिर भी मैं धैर्यसे आगे बढ़ता ही रहा। लगभग ढाई मासकी यात्राके उपरान्त मुझे पर्वतपर एक समतल भूमि मिली। मैं वहाँ कुछ दिनके लिये ठहर गया। मेरे पास एक बैसाखी थी जिससे मैं कंद खोदकर उदरपूर्ति कर लेता था। कंदोंकी पहचान महात्माओंके द्वारा मुझे पहले ही हो गयी थी। हिमाच्छादित (बर्फसे ढके) स्थानोंको छोड़कर ऐसे कंद प्रायः पहाड़ोंपर सभी जगह मिल जाते हैं। ये कई प्रकारके होते हैं और इनका स्वाद बड़ा मधुर होता है तथा पचनेमें ये बड़े हल्के होते हैं। अन्य प्रकारके वन्यफल भी ऋतुके अनुसार सर्वत्र मिल जाते हैं। वहाँ रात्रिमें औषधियोंसे दीपकके समान प्रकाश निकलता था। लगभग चार गजके अन्तरसे यह प्रकाश दीखता था और पास जानेपर लुप्त हो जाता था। अतः उस औषधिकी पहचान न होती थी।

सिद्ध ब्रह्मचारीसे भेंट

इस प्रकार उस प्रभुकी प्राकृतिक दिव्य महिमाका अनुभव करते हुए कुछ दिन और व्यतीत हुए। एक दिन एक बड़े ऊँचे

कदके जटाधारी ब्रह्मचारी मेरे पास आये। उन्होंने मुझसे संस्कृतमें पूछा—'**कस्त्वम्, कुतश्च समायातः**' (तू कौन है और कहाँसे आया है?) संस्कृतका अधिक अभ्यास न होनेके कारण मैंने इसका उत्तर हिन्दी-भाषामें दिया। इसपर ब्रह्मचारीजीने पूछा—'तू यहाँ कैसे आया? यहाँ आना तो बड़ा कठिन है?' मैंने कहा—'महाराज! आना तो निःसंदेह कठिन था, परंतु श्रीरामजीकी कृपासे चला आया हूँ। मैंने महात्माओंसे सुना था कि हिमालयपर सिद्धलोग रहते हैं। उन्हींके दर्शनोंकी उत्कट इच्छा मुझे यहाँतक ले आयी है।'

इसको सुनकर वे मुसकराये और बोले—'भाई! सिद्धजन तो ऋषिकेशसे लेकर पर्वतोंपर सर्वत्र रहते हैं, परंतु साधारण जनको दीखते नहीं। तुम्हीं बताओ, तुमने गायत्रीके कितने पुरश्चरण किये हैं? कौन-सा तप किया है? अथवा कौन-से अध्यात्मशास्त्रका मनन करके आत्मज्ञानी बने हो? जिससे तुम्हें सिद्ध-महात्माओंके दर्शन उपलब्ध हो सकें; जाओ, लौटकर अपने देश चले जाओ।' ब्रह्मचारीजीके इन वचनोंको सुनकर मैंने कहा—'महाराज! क्षमा कीजिये, मैं अब लौट नहीं सकता। यहीं रहकर मैं श्रीराम-मन्त्रका जप करूँगा, जो प्रभुकी इच्छा होगी वही होगा।'

एक मीलकी परिधिवाला अद्भुत वटवृक्ष

मेरे इस आग्रहको देखकर ब्रह्मचारीजीने कहा कि 'अच्छा, जैसी तुम्हारी इच्छा हो वैसा ही करो।' इसके अनन्तर उन्होंने मुझे एक बूटी दिखलाकर कहा कि 'इसका एक तोला अर्क निकालकर पीनेसे सात दिनतक भूख नहीं लगती और बल भी क्षीण नहीं होता। तुम चाहो तो इसका सेवन कर सकते हो।' फिर उन्होंने मुझे एक बड़के वृक्षके नीचे ले जाकर कहा कि

'यह स्थान भजन करनेके लिये बहुत उपयुक्त है, तुम यहीं रहो।' इसके अनन्तर ब्रह्मचारीजी भी चले गये।

उस बड़को देखकर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। उसकी परिधि एक मीलसे कम न होगी। ऊँचाई भी असाधारण थी। वर्षा और धूप उसके सघन पत्तोंसे छनकर नहीं आ सकती थी। उसकी अधोभूमि शीतकालमें उष्ण और उष्णकालमें ठंडी रहती थी। पास ही निर्मल और मधुर जलका झरना बह रहा था। इधर-उधर गुफाएँ बनी थीं। इसके नीचे कहीं-कहीं धूनी भी लगी हुई दीखती थी, परंतु कोई महात्मा दृष्टिगोचर नहीं हुआ। देशमें किसी-किसी महात्मासे इस वटवृक्षके सम्बन्धमें सुना करता था। आज उसे पाकर बड़ी प्रसन्नता हुई। मैं यहाँ रहकर भजन करने लगा।

सौ वर्षसे समाधि लगाये योगीका दर्शन

दस-ग्यारह महीनेके पश्चात् वे ही जटाधारी ब्रह्मचारी एक दिन मेरे पास आये। कुछ समय विश्राम करनेके पश्चात् वे मुझे समझाने लगे कि 'देखो, अभी तुम्हारी अवस्था कम है। तुम देशमें जाकर शास्त्र-अध्ययन करो। शास्त्रके द्वारा हुआ वैराग्य दृढ़ होता है और वही ज्ञान दिव्य प्रभाववाला होता है, जो शास्त्रोंके मनन करनेसे उपलब्ध होता है। अपरिपक्व वैराग्य और ज्ञान अस्थिर होते हैं। अध्यात्मशास्त्रोंका अध्ययन करके फिर यहाँ आना।' इसपर मैंने कहा—'महाराज! मैं तो यह प्रतिज्ञा करके आया हूँ कि बिना सिद्धोंका दर्शन किये नहीं लौटूँगा। फिर बताइये अपनी प्रतिज्ञाको तोड़कर कैसे चला जाऊँ?' मेरे इस उत्तरको सुनकर ब्रह्मचारीजी कुछ क्षण विचारकर उठकर एक ओर चल दिये और मुझे अपने पीछे आनेका संकेत किया। कुछ

समय चलनेके पश्चात् हम एक स्थानपर पहुँचे। वहाँ एक बड़ी शिलाके ऊपर एक योगी समाधि लगाये पद्मासनसे बैठे थे। वे बैठे हुए भी मुझसे खड़े हुएके कदसे ऊँचे थे और उनकी जटाएँ पृथ्वीपर फैल रही थीं। भ्रुकुटीके रोम दाढ़ी-जैसे लग रहे थे। बढ़े हुए नख सिंहके नखके समान मालूम होते थे। उनकी ओर संकेत करके ब्रह्मचारीजीने कहा कि 'ये मेरे गुरु हैं। इनकी समाधि सौ वर्षसे लगी है, तबसे खुली नहीं। अब चलो सिद्धके दर्शन हो गये। तुम्हें उसी वटवृक्षके नीचे पहुँचा दूँ। तुम वहाँ स्वयं नहीं पहुँच सकते।' तत्पश्चात् वे ब्रह्मचारीजी मुझे बड़के नीचे पहुँचाकर कहीं चले गये।

पाण्डवोंके समयका अद्भुत किला

मैं उसी वृक्षके नीचे रहकर श्रीराम-मन्त्रका जप करने लगा। कुछ समयके बाद वे ब्रह्मचारीजी फिर एक दिन मेरे पास आये और कहने लगे—'अब तुमने काफी जप करके अपनेको पवित्र बना लिया है। चलो कुछ और दृश्य दिखाऊँ।' मैं भी प्रसन्न होकर उनके साथ हो लिया। दिनके आठ बजेके लगभग हम दोनों एक गुफाके द्वारपर पहुँचे, जो एक बड़े भारी पत्थरसे ढका हुआ था। ब्रह्मचारीजीने उस पत्थरको सहज ही एक ओर हटा दिया। हम दोनों गुफामें प्रविष्ट हुए। फिर पत्थर द्वारपर लगा दिया गया। यह देखकर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ कि ब्रह्मचारीजीने अकेले ही सैकड़ों मनके पत्थरको कैसे हटा दिया? परंतु मैं यह सोचकर चुप रहा कि महात्माओंको टोकना नहीं चाहिये, कोई सिद्धि ही होगी। हम दोनों आगे बढ़े। वह गुफा या सुरंग संगमरमरकी बनी हुई मालूम होती थी। स्पर्श करनेमें चिकनी थी। उसकी ऊँचाई और चौड़ाई काफी थी।

कहीं-कहीं रोशनदान भी खुले थे, जिनसे अंदर प्रकाश, वायु आती थी। आठ घंटे चलकर लगभग चार बजे हम दूसरे द्वारपर पहुँचे। वहाँ भी पहले-जैसा पत्थर लगा था। ब्रह्मचारीजीने उसे भी सहज ही खोला और बंद कर दिया।

सुरंगसे निकलकर हम दोनों एक सुन्दर मैदानमें आये। यहाँके दृश्यको देखकर मैं अवाक् रह गया। चारों ओर मीलों ऊँची पहाड़ोंकी प्राचीरवाला और कोसों लम्बा-चौड़ा एक विशाल किला है। दीवारोंमें गुफाके समान सुन्दर स्थान बने हैं। जिनमें बड़े-बड़े डील-डौलके महात्मालोग समाधि लगाये बैठे हैं। चारों ओर फल और पुष्पोंसे लदी हुई लताएँ और वृक्ष सुशोभित हैं। कहीं-कहीं झरनोंसे मोतियोंके समान स्वच्छ जल गिर रहा है। बहुत समयतक इन दृश्योंको देखकर मैंने ब्रह्मचारीजीसे प्रश्न किया—'भगवन्! यह कौन-सा स्थान है?' ब्रह्मचारीजीने उत्तर दिया कि 'यह अर्जुनका बनवाया हुआ किला है। व्यासजीके आज्ञानुसार अर्जुन यहीं तप करनेके लिये आये थे।'

महाभारतके समयके सिद्धोंका दर्शन

फिर ब्रह्मचारीजीने कहा—'ये जो गुफाओंमें महात्माओंको तुम देखते हो, ये महाभारतके समयके हैं। तबसे अबतक इनकी समाधि नहीं खुली।' मैंने ब्रह्मचारीजीसे उस सिद्धाश्रममें रहनेकी अनुमति माँगी। इसपर ब्रह्मचारीजीने कहा कि 'यह स्थान केवल सिद्धजनोंके रहनेका है। यहाँ कलियुगका उत्पन्न हुआ मनुष्य नहीं रह सकता। यह स्थान मल-मूत्र त्यागनेका नहीं है। यदि दिनमें यहाँ कोई साधारण जन हठात् रह भी जाय तो रात्रिमें वह उठाकर उसी स्थानपर पहुँचा दिया जाता है जहाँका वह होता

है। इसलिये इस मिथ्या मनोरथको छोड़कर मेरे साथ चलो। वहीं वटके नीचे तुझे पहुँचा आऊँ' ऐसे कहकर मुझे फिर उसी सुरंगमार्गसे निकालकर वे बड़के नीचे पहुँचा गये। मैं पूर्ववत् वहीं श्रीराम-मन्त्रका जप करने लगा। इस प्रकार कुछ समय और व्यतीत हुआ।

अद्भुत दिव्य प्रकाशका दर्शन

एक दिन रात्रिके समय बैठा हुआ मैं श्रीराम-मन्त्रका जप कर रहा था, मेरे नेत्र खुले थे। अचानक एक बड़ा दिव्य प्रकाश सामने आया। अनेक गैसोंका प्रकाश उसकी तुलना नहीं कर सकता था। उस प्रकाशके मध्यमें आकृति भी अवश्य थी, परंतु प्रकाशकी चकाचौंधके कारण मेरी दृष्टिमें बँध न सकी। कुछ क्षणोंके पश्चात् वह दिव्य प्रकाश अन्तर्धान हो गया। मैं बड़ा व्यग्र हुआ। बार-बार गद्गद कण्ठसे रामजीको पुकारकर कहने लगा—'सरकार! इस प्रकारके दर्शनोंसे मेरे हृदयको शान्ति नहीं हुई। मैं इस प्रकार नहीं मानूँगा। यदि कृपाकर दर्शन देने हैं तो स्पष्टरूपमें सम्मुख आइये।' परंतु मेरा प्रारब्ध ऐसा कहाँ था? फिर कभी वैसे प्रकाशके भी दर्शन न हुए। इसके पश्चात् एक दिन ब्रह्मचारीजीने आकर मुझे आग्रह करके देश लौट आनेके लिये विवश किया। मुझे आना पड़ा, परंतु मेरा इधर मन नहीं लगता, कुछ समय अध्यात्मशास्त्रोंका अध्ययन कर फिर वहीं चला जाऊँगा। यह कहकर उस समय आप चुप हो गये।

पूज्य श्रीरामसेवकजी (श्रीस्वामी ज्योतिःप्रकाशाश्रमजी)-से इस सिद्धाश्रमके वर्णनको सुनकर मेरे हृदयमें बड़ी शान्ति हुई। इसके पूर्व एक-दो महात्माओंके मुखसे मैंने रामसेवकजीके विषयमें कुछ

अद्भुत बातें सुनी थीं। उस दिन उनकी पर्वतयात्राका रोचक और पावन वर्णन सुनकर मैंने अपनेको धन्य समझा।

इसके बाद स्वर्गीय श्रोत्रिय श्रीभगवानदत्त शास्त्री लिखते हैं—रामसेवकजीका मेरा बहुत दिनोंतक साथ रहा है। समय-समयपर उनकी देशयात्राओंके विचित्र वर्णन भी उनसे सुननेका मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ है। वे मेरे स्थान बिजनौरमें भगवान्-भवनमें भी बहुत समयतक रहे हैं। इसके पश्चात् जब मैं बिहारी संस्कृत विद्यालय चाँदपुर (बिजनौर)-में मुख्याध्यापक होकर रहने लगा था, तब वे चाँदपुरमें भी महीनोंतक मेरे स्थानपर रहे हैं। मैंने उनसे प्रार्थना की थी कि 'स्वामीजी! जब आप फिर सिद्धाश्रम जायँ तो किसी सिद्धयोगीसे सूर्यादि दिव्य लोकोंका यथावत् वर्णन ज्ञात करके मुझे सुनानेकी अवश्य कृपा करना।' इसके अनन्तर कुछ समय पश्चात् रामसेवकजी संन्यास लेकर नेपालसे वाराहक्षेत्र होते हुए उक्त सिद्धाश्रमको फिर दुबारा गये थे।

स्वामीजीकी अवधूतावस्था

पूज्य श्रोत्रिय पं० श्रीभगवानदत्त शास्त्रीजी महाराजने पूज्यपाद प्रातःस्मरणीय स्वामीजी श्रीज्योतिःप्रकाशाश्रमजी महाराजके सम्बन्धकी अन्तिम अवधूतावस्थाका वर्णन इस प्रकार किया है—

बहुत दिनोंतक पूज्यपाद स्वामीजी श्रीज्योतिःप्रकाशाश्रमजी महाराजके दर्शन नहीं हुए और न यह पता लगा कि वे इस समय कहाँ हैं? मैं संवत् १९९० के फाल्गुनमासमें श्रीकाशीजी गया। जब स्वामीजी ब्रह्मचर्याश्रममें थे, तबसे ही बहुधा वे वहाँ चौसट्टी घाटपर ठहरा करते थे। अतः उनका पता जाननेके लिये

मैं उस घाटपर गया। वहाँ स्वामी श्रीओंकाराश्रमजी रहते थे, जो स्वामीजीकी पर्वतयात्रासे परिचित थे। मैंने उनसे स्वामीजी श्रीज्योति:प्रकाशाश्रमजी महाराजकी स्थितिके सम्बन्धमें पूछा। इसके उत्तरमें उन्होंने जो बताया वह ज्यों-का-त्यों इस प्रकार है—

स्वामी श्रीओंकाराश्रमजी महाराज कहने लगे कि लगभग दो-तीन वर्ष हुए, एक दिन इसी चौसट्टी घाटपर पैड़ियोंपर मैंने एक कौपीनधारी महात्माको खड़े देखा। उनके सिरपर जटाएँ थीं। मैंने उन्हें पहिचाना, वे ज्योति:प्रकाशाश्रमजी महाराज ही थे। मैंने उनसे कहा—'चलिये ऊपर कुटीमें विश्राम कीजिये।' यह सुनकर उन्होंने मस्तक झुकाकर मुझे **'नमो नारायण'** किया, परंतु बोले कुछ नहीं। पुन: उसी प्रकार आनन्दमें मग्न हो गये। उनकी इस अवधूतावस्थाको देखकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। उनसे कुछ खानेको कहा, परंतु वे कुछ न बोले। मैंने अपने शिष्यद्वारा दूध मँगवाकर उनके मुखसे लगवाया, वे केवल एक घूँट भरकर अस्सीघाटकी ओर चले गये।

एक दिन वे फिर पैड़ियोंपर खड़े देखे गये। उनके सारे शरीरपर गारा लगा हुआ था। मैंने दो विद्यार्थियोंके हाथों उन्हें मलकर स्नान करवाया। उन्हें शरीरकी कुछ सुध न थी और हर समय ब्रह्मानन्दमें अखण्ड समाधि-सी लगी दीखती थी। खाना-पीना आदि व्यवहार छूटा-सा प्रतीत होता था। उनसे विश्राम करने तथा भोजन करनेको कहा गया; परंतु उन्हें कुछ सुध न थी। बिना कुछ कहे-सुने वे एक ओरको चले गये। इसके पश्चात् उन्हें हमने फिर कभी नहीं देखा।

स्वामी श्रीओंकाराश्रमजी महाराजसे पूज्य श्रीस्वामीजीके सम्बन्धमें यह अलौकिक समाचार सुनकर मैं पं० श्रीदिवाकरजी

शास्त्रीको लेकर चित्रकूट आदि स्थानोंमें गया; परंतु उनकी खोज न मिली। निराश मैं अपने घर बिजनौर लौट आया। स्वामीजीके जीवनकी घटनाएँ बड़ी अलौकिक और आनन्दप्रद हैं।

पूज्य स्वामीजी महाराज स्वयं भी बड़े योगी थे; परंतु समाधि लगानेके लिये उत्तराखण्ड ही उपयुक्त स्थान है इसलिये इधर वे कम समाधिस्थ होते थे। एक दिन वे मेरे स्थानपर ठहरे थे। मैं चाँदपुर गया था। मेरा भतीजा घरपर था। एक दिन रात्रिमें स्वामीजी समाधिस्थ हो गये। उनकी दशा देखकर वह तो भयभीत हो गया। तीन दिन और चार रात्रि बीतनेपर उन्होंने अपनी समाधि खोली थी। पूज्य स्वामीजी महाराज बड़े ही प्रसन्नचित्त, सत्यवादी और मितभाषी थे। उनके दर्शनमात्रसे हृदयमें शान्ति हो जाती थी।

तेलीका बैल बनकर ऋण चुकाया

[हिन्दीके सुविख्यात साहित्यकार पं० श्रीनारायणजी चतुर्वेदीके द्वारा सुनायी हुई सच्ची घटना]

हिन्दीके महान् साहित्यकार पं० श्रीनारायणजी चतुर्वेदी परम भागवत वैष्णव विभूति थे। उन्होंने एक बार मुझे प्रयागमें अपने निवास-स्थानपर एक दीवान साहबके पिताद्वारा तेलीका बैल बनकर ऋण चुकानेकी आश्चर्यजनक घटना सुनायी थी। उस सत्य घटनाको हम उन्हींके शब्दोंमें प्रस्तुत कर रहे हैं—

शास्त्रीय वाक्य है—'ऋण चुकाये बिना श्राद्ध आदिका फल नहीं मिलता।'

इटावा मेरी जन्मस्थली है। इटावाके निवासी बाबू श्रीश्यामसुन्दरलालजी राजस्थानकी किशनगढ़ रियासतके दीवान थे। उनकी एक ईमानदार एवं कर्तव्यपरायण दीवानके रूपमें दूर-दूरतक ख्याति थी। हम सभी इटावा-निवासी इस विभूतिकी ख्याति सुनकर गर्व किया करते थे।

दीवान श्रीश्यामसुन्दरलालजी वर्षमें दो-चार बार इटावा आते तो उनके पुराने साथी उनसे मिलकर किशनगढ़के राजा-रानीके रोचक किस्से सुननेको लालायित रहा करते।

एक बार दीवान साहब इटावा आये। अपने पुराने मकानमें ठहरे। उन्होंने अपने नौकरको पासके मुहल्लेमें रहनेवाले नाईके पास भेजा और उसे कहलवाया कि उन्हें सबेरे किसीसे मिलने जाना है, अतः छः बजेसे पहले आकर उनकी हजामत बना जाय। नाई सबेरे साढ़े पाँच बजे उनके घर पहुँच आया।

उन्होंने नाईसे पूछा—'क्या यहाँ कोई शंकर नामका तेली

रहता है?' नाईने उन्हें बताया कि थोड़ी दूरपर जो इमलीका पेड़ है, उसीके पास शंकर तेलीका मकान है। पर शंकर मर गया है, उसका लड़का तेल निकालनेका काम करता है। दीवान साहबने नाईसे कहा—'मुझे इसी समय उसके घर ले चलो, बहुत जरूरी काम है।' उन्होंने कुर्ता पहना, जेबमें कुछ रुपये डाले और नाईको साथ लेकर शंकर तेलीके मकानपर जा पहुँचे।

शंकर तेलीका पुत्र दीवान साहबको पहचानता था। वह सबेरे-सबेरे उन्हें अपने मकानके दरवाजेपर खड़ा देख हक्का-बक्का रह गया। दीवान साहबने उससे पूछा—'क्या तुम शंकरके लड़के हो?' उसके 'हाँ' कहनेपर वे बोले—'क्या तुम्हारा कोल्हू चल रहा है?' उसने कहा—'जी हाँ, चल रहा है।' उन्होंने कहा—'मुझे कोल्हूके पास ले चलो।' वह आश्चर्यचकित हुआ उन्हें कोल्हूके पास ले गया। दीवान साहबने कमरेमें जाकर देखा—एक बूढ़ा-सा बैल कोल्हू चला रहा है। दीवान साहब बैलके पास पहुँचकर रुक गये। बैलने उनकी ओर देखा तथा उनके कुर्तेके आँचलको मुँहसे पकड़नेका प्रयास किया।

दीवान साहबने तेलीसे कहा—'तुमने यह बैल जितनेमें खरीदा था, उससे अधिक रुपये लेकर इसे मुझे दे दो।' उन्होंने जेबसे १४ रुपये निकाले तथा तेलीके हाथपर रख दिये। अचानक यह देखकर तेली असमंजसमें पड़ गया। उसने सोचा कि यह बैल तो बूढ़ा हो ही गया है, १४ रुपयेमें जवान और तगड़ा बैल मिल जायगा। फिर भी वह वर्षोंसे अपनी सेवा करनेवाले बैलके प्रति ममताके कारण उसे देनेमें हिचकिचा रहा था। दीवान साहब जबरन् वे १४ रुपये तेलीके हाथमें पकड़ाते हुए नाईसे बोले—'इसे खोलकर मेरे साथ ले चलो।'

तेली दीवान साहबके आगे कुछ न बोल सका। उसने कोल्हूसे बैल हटाया तथा उसकी रस्सी नाईको पकड़ा दी। आगे-आगे दीवान साहब चले और उनके पीछे-पीछे बैलकी रस्सी पकड़े नाई। दीवान साहब चलते-चलते पीछे मुड़कर बैलको देख लेते थे।

दीवान साहबके घरके पहले सड़कपर हलकी चढ़ाई आयी। बैल चढ़ाई पार करते-करते हाँफने लगा। सड़कके किनारे स्थित शिव-मन्दिरके सामने पहुँचते ही बैल रुक गया। उसने सहसा मल-त्याग किया और शिव-मन्दिरकी ओर निहारा तथा गिर पड़ा। देखते-ही-देखते उसने प्राण त्याग दिये।

दीवान साहबने जैसे ही बैलको जमीनपर गिरते हुए देखा, पीछे मुड़कर उसके पास वे खड़े हो गये। हाथ जोड़कर कुछ बुदबुदाये, जैसे मृत बैलको श्रद्धाञ्जलि दे रहे हों। उन्होंने नाई तथा नौकरोंको भेजकर ठेला मँगवाया। बैलके शवको ठेलेपर लदवाया तथा उसे लेकर वहाँसे ४ किलोमीटर दूर यमुना नदीतक गये। वे ठेलेके पीछे-पीछे पैदल चले। बैलके शवको यमुनाजीमें प्रवाहित कराया तथा भरी दोपहरीमें पैदल ही घर लौटे।

दीवान साहबने मुझे बताया—'सबेरे मैंने स्वप्नमें देखा कि मेरे पिताजी आये हैं और मुझसे कह रहे हैं—तुम दीवान-जैसे बड़े पदपर रहकर खूब आनन्दका जीवन जी रहे हो। तुम मुझे कभी याद नहीं करते। मैंने तुमलोगोंकी जरूरत पूरी करनेके लिये कभी शंकर तेलीसे १४ रुपये उधार लिये थे। मैं उन रुपयोंको लौटा नहीं पाया। अब मैं उस ऋणको चुकानेके लिये शंकर तेलीके बेटेके कोल्हूका बैल बनकर उस कर्जको उतार रहा हूँ। यदि तुम कर्ज चुका दो तो मेरी मुक्ति हो जायगी।' इसी सपनेसे उद्वेलित होकर मैं शंकर तेलीके घर पहुँचा। जब बैलने

कुछ ही देर बाद शिव-मन्दिरके दर्शन करनेके बाद प्राण त्याग दिये तो मुझे उस स्वप्नपर तनिक भी संदेह नहीं रहा।

हमारे धर्मशास्त्रोंने आत्मिक कल्याणके लिये ऐसे धार्मिक संस्कार बनाकर दृढ़ कर दिये थे कि सामान्य मनुष्य बेईमानी (जिसे वे लोग अधर्म कहते थे) करनेकी कल्पना भी नहीं करते थे। हमारे धर्मशास्त्रोंमें स्पष्ट लिखा है—'किसीका भी ऋण चुकाये बिना कल्याण सम्भव नहीं है।' यदि किसीको अपने माता-पिताकी मुक्तिके लिये गया-श्राद्ध करना है, तो सबसे पहले उसे अपने पिताका सारा ऋण चुकाना चाहिये। ऋण चुकाये बिना गयामें पितृ-श्राद्धका कोई फल नहीं मिलता।

सनातनधर्मी हिन्दुओंके लिये चारों धामोंकी यात्रा, गङ्गा-स्नान, श्राद्ध आदि परम आवश्यक हैं। इनमेंसे कुछ कृत्य देव-ऋण तथा कुछ पितृ-ऋणसे उऋण होनेके लिये किये जाते हैं। गयाका श्राद्ध पितृ-ऋणके परिहारका सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण कृत्य है। प्रत्येक सनातनधर्मी तबतक अपनेको पितृ-ऋणसे मुक्त नहीं मानता, जबतक कि वह गयामें जाकर पितृ-श्राद्ध नहीं कर लेता।

पार्वणश्राद्धसे प्रेतात्माका उद्धार

[जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्रीकृष्णबोधाश्रमजीने बताया था शास्त्रीय उपचार]

सितम्बर सन् १९७० की बात है। पिलखुवास्थित हमारे निवासस्थानपर हापुड़के सुप्रसिद्ध कर्मकाण्डी विद्वान् पं० श्रीबालकरामजी शास्त्री पधारे। उन्होंने श्राद्ध-तर्पण, पिण्डदान, गयाश्राद्ध आदिके द्वारा पितरोंका और भूत-प्रेतादिकोंका कल्याण कैसे होता है, इसे शास्त्रोंके प्रमाण देकर सिद्ध करनेके पश्चात् स्वयं अपनी आँखों-देखी पार्वणश्राद्धके द्वारा प्रेतात्माके उद्धारकी एक सत्य घटनाका भी आद्योपान्त वर्णन किया, जिसे सुनकर लोग आश्चर्यचकित हो गये। शास्त्रीजीद्वारा सुनायी गयी घटना हम यहाँ उन्हींके शब्दोंमें दे रहे हैं—

हापुड़के एक अग्रवाल वैश्य हैं। जिनकी लड़कीका नाम सत्यवती है। वह गाजियाबादमें विवाही है। उसके माता-पिता, भाई-बन्धु आदि तो सभी सनातनधर्मी हैं, परंतु जहाँ वह लड़की विवाही है, वहाँके लोग कुछ आर्यसमाजी विचारोंके हैं। कुछ दिनों पूर्व वह लड़की बीमार हो गयी और उसका बड़े-बड़े चिकित्सकोंसे इलाज कराया गया, पर उससे उसे कुछ भी लाभ नहीं हुआ। उसे कोई शारीरिक रोग तो था नहीं कि औषधियाँ काम करतीं। उसे तो था प्रेतावेश, जिसे उसके घरवाले समझ नहीं रहे थे। एक दिन सत्यवतीका भाई महेन्द्रकुमार अपनी इस बहनको देखनेके लिये गाजियाबाद गया और उसने उसकी ऐसी

हालत देखी तो वह समझ गया कि सत्यवतीको कोई बीमारी नहीं है, अपितु उसे प्रेतावेश है—उसे प्रेत सताता है। जब उसके सामने ही सत्यवतीको प्रेतावेश हुआ, तब प्रेतने उससे अपने उद्धारकी माँग की और साथ ही अपना उद्धार होनेपर सत्यवतीको छोड़ देनेका वचन दिया। महेन्द्रकुमार उस प्रेतको उद्धारका आश्वासन देकर वहाँसे मेरे पास आया। मैं उस समय हापुड़में माहेश्वरियोंवाले भगवान् श्रीराधावल्लभजी महाराजके मन्दिरमें था। महेन्द्रकुमारने आकर मुझसे अपनी बहन सत्यवतीकी यह कष्टकर दुःखगाथा सुनायी और उसने मुझसे कहा कि शास्त्रीजी! किसी प्रकार हमारी बहनको सतानेवाले प्रेतका उद्धार हो, ऐसा कोई उपाय कीजिये, जिससे उस दुष्ट प्रेतसे मेरी बहनका भी छुटकारा हो जाय।

मुझे उसकी बहनकी दुःखगाथा सुनकर बड़ा ही दुःख हुआ और उसपर बड़ी दया भी आयी। परंतु उस प्रेतका उद्धार हो तो कैसे हो और लड़कीको उस प्रेतसे छुटकारा कैसे मिले, अब यह समस्या मेरे सामने आयी। उसका उस समय कोई तात्कालिक उपाय मुझे सूझ नहीं रहा था कि अब हो तो क्या हो? दैवयोगसे उस दिन हापुड़में सुप्रसिद्ध धर्माचार्य पूज्यपाद श्रीजगद्गुरु शंकराचार्य ज्योतिष्पीठाधीश्वर स्वामी श्रीकृष्णबोधाश्रमजी महाराज पधारे हुए थे, जो उस समय भगवान् श्रीराधावल्लभजी महाराजके मन्दिरमें ही ऊपरके कमरेमें विराजमान थे। मेरा ध्यान बरबस उनकी ओर गया, सोचा कि यदि लड़कीकी रक्षा हो सकती है तो बस, पूज्यपाद जगद्गुरुजी महाराजके बताये उपायसे ही हो सकती है, अन्यथा नहीं।

मैं लड़कीके भाईको अपने साथ लेकर जगद्गुरुजी महाराजके

श्रीचरणोंमें जा पहुँचा। पूज्य श्रीआचार्यचरण रात्रि अधिक होनेके कारण अभी-अभी विश्राम करनेके लिये लेटे ही थे कि हमारे आनेकी आहट सुनकर जाग गये और बैठते हुए हमसे बोले कि शास्त्रीजी! इस समय कैसे आना हुआ?

महेन्द्रकुमारने पूज्य जगद्‌गुरु शंकराचार्यजी महाराजको अपनी बहनकी दुःखगाथा सुनाते हुए बताया कि महाराज! मेरी बहनके शरीरमें प्रेतका आवेश होता है और वह दुष्ट प्रेत मेरी बहनको बहुत ही सताता है, इस कारण बहनके साथ-ही-साथ हम सभी तथा उसके ससुरालवाले भी बड़े ही परेशान हैं। किसी प्रकार उस प्रेतसे छुटकारा मिले, ऐसा कोई उपाय बतानेकी कृपा करें।

श्रीआचार्यचरणने महेन्द्रसे पूछा कि तुम्हारी बहनके शरीरमें प्रेतका आवेश है, यह तुम्हें कैसे मालूम हुआ?

महेन्द्रकुमारने महाराजश्रीको आद्योपान्त घटना सुनाते हुए कहा कि महाराज! मैं हापुड़से अपनी परेशान बहन सत्यवतीको देखनेके लिये गाजियाबाद गया हुआ था, तो उस समय मेरी बहन सत्यवतीके शरीरमें प्रेतका आवेश था। मैंने उस प्रेतसे इस प्रकार बातें कीं—

मैं—तुम कौन हो?

प्रेत—मैं एक प्रेत हूँ।

मैं—तुम इसे क्यों सताते हो, क्यों कष्ट देते हो?

प्रेत—मैं बड़े कष्टमें हूँ, मेरा उद्धार करो।

मैं—तुम अपने उद्धारका कोई उपाय हमें बताओ, जिसे करनेसे तुम्हारा उद्धार हो जाय और हमारी बहनका भी कष्ट दूर हो जाय।

प्रेत—तुमलोग मेरे निमित्त कोई ऐसा शुभ कर्म करो अथवा

कराओ, जिससे मुझे शान्ति मिले और मेरा प्रेतयोनिसे उद्धार हो, तभी मैं तुम्हारी बहनको छोड़ूँगा।

मैं—हमारी इस बहनकी ससुरालवाले तो आर्यसमाजी विचारके हैं, इसलिये वे तो इन सब बातोंको मानते नहीं हैं और जब उनका इन सब बातोंमें विश्वास ही नहीं है तो वे कुछ करेंगे ही नहीं। अब यदि हम तुम्हारे उद्धारके लिये कुछ करा दें तो क्या हमारे करनेसे तुम्हारा उद्धार हो जायगा?

प्रेत—तुम करवा दो, तुम्हारे करानेसे भी मेरा उद्धार हो जायगा।

मैं—अब यह बताओ कि तुम्हारे उद्धारके लिये हम क्या उपाय करें?

प्रेत—देख भाई! मुझे तो इसका कुछ पता है नहीं कि किस शुभ कर्मके करनेसे मेरा उद्धार होगा, यह तो तुम किसी ब्राह्मणसे मालूम करो कि किस शुभ कर्मके करानेसे प्रेतका उद्धार होता है तो फिर वह शुभ कर्म तुम मेरे निमित्त करवा दो, जिससे मेरा उद्धार हो जाय।

मैं—अच्छा, हम तुम्हारे उद्धारका कोई-न-कोई उपाय अवश्य ही करा देंगे।

प्रेत—यदि तुमने मेरा उद्धार करा दिया तो मैं भी तुम्हारी बहनको छोड़ दूँगा।

मैं—अच्छा, अब तो तुम इसे छोड़ दो।

प्रेत—तुम हमें यह वचन दो कि हमारे उद्धारका उपाय कितने दिनोंमें करा दोगे?

मैं—आज मंगलवारका दिन है, हम आनेवाले रविवारतक तुम्हारे निमित्त कोई-न-कोई ऐसा शुभ कर्म अवश्य ही करवा

देंगे कि जिससे तुम्हारा उद्धार हो जाय। इसलिये अब तुम इसे छोड़ दो।

प्रेत—बहुत अच्छा, अब मैं तुम्हारी इस बहनको छोड़ देता हूँ और फिर इसे मैं नहीं सताऊँगा। तुम आनेवाले रविवारतक मेरे उद्धारका कोई-न-कोई उपाय अवश्य करा दो। यदि तुमने मेरे उद्धारका कोई उपाय न कराया तो मैं पुनः आकर इसे सताऊँगा।

मैंने जब बार-बार उसे आश्वस्त किया, तब उसने मेरी बात स्वीकार कर ली और वह तुरंत उसी समय मेरी बहनको छोड़कर उसके शरीरसे चला गया। अब क्या था? उस प्रेतके जाते ही एकदम बेहोश सत्यवती बिलकुल होशमें आ गयी—बिलकुल ठीक-ठीक हो गयी, वह ऐसी दिखलायी पड़ने लगी, मानो इसे कुछ हुआ ही न हो।

परम पूज्यपाद स्वामी श्रीकृष्णबोधाश्रमजी महाराजने पूछा—क्या तुमने उस प्रेतके उद्धारका कोई उपाय कराया है?

महेन्द्रकुमारने कहा—'महाराजजी! हम उस प्रेतके उद्धारका उपाय पूछनेके लिये उसी दिनसे बराबर लगे हुए हैं। बहुतोंसे पूछा भी, किंतु हमें कोई सफलता अबतक नहीं मिली है।'

शंकराचार्यजी महाराजने यह सब सुनकर परामर्श दिया कि तुमलोग सुप्रसिद्ध तीर्थ श्रीगढ़मुक्तेश्वरमें जाओ और वहाँपर जाकर पतितपावनी कलिमलहारिणी भगवती भागीरथीके परम पवित्र तटपर बैठकर पार्वणश्राद्ध और तीर्थश्राद्ध करो तथा दो सदाचारी पण्डितोंको गायत्रीका जप करनेके लिये बैठा दो।

पार्वणश्राद्ध कौन कराये? अब यह समस्या सामने आयी। पूज्यपाद जगद्गुरु शंकराचार्यजी महाराजने कहा कि शास्त्रीजी! तुम्हीं श्रीगढ़मुक्तेश्वर जाकर इसका विधि-विधानसे सब कार्य

सम्पन्न कराओ। तत्पश्चात् हम पूज्य महाराजश्रीकी आज्ञा शिरोधार्य कर उनके निर्देशानुसार श्रीगढ़मुक्तेश्वर, व्रजघाटपर पहुँच गये और उधरसे महेन्द्र भी सत्यवती एवं उसके पति आदिके साथ वहाँ पहले ही पहुँच गया था।

वहाँ पहुँचनेपर पता चला कि सत्यवतीपर पुनः प्रेतका आवेश हो गया है और वह बेहोशीकी अवस्थामें एक झोपड़ीमें लेटी हुई है। भाईने लड़कीके शरीरमें आये उस प्रेतसे कहा कि पण्डितजीके आनेमें कुछ देर हुई है और अब पण्डितजी आ गये हैं, तुम्हारे उद्धारका सब कार्य करेंगे, तुम जरा धैर्य रखो।

सर्वप्रथम हम सभीने श्रीगङ्गाजीमें स्नान किया तथा वहाँके देवी-देवताओंका दर्शन-पूजन आदि किया। तदनन्तर पार्वणश्राद्ध करानेका सब कार्य प्रारम्भ हुआ। दो पण्डित गायत्री-जप करनेके लिये बैठा दिये गये। लड़कीके पतिने अपने आर्यसमाजी विचारोंको छोड़कर बड़ी श्रद्धा-भक्तिके साथ सनातनधर्मानुकूल जो हमने बताये थे, सब कार्य सम्पन्न किये। कर्म करते समय आधा कर्म हो जानेपर पार्वणश्राद्धने, गायत्रीमन्त्रने और माता गङ्गाजीने अपना ऐसा अद्भुत चमत्कार दिखाना प्रारम्भ किया कि लड़कीके भाईने हमसे आकर कहा कि शास्त्रीजी! हमारी बहन झोपड़ीमें बैठी हुई है और वह यह कहती है कि लाओ हमारा भाग। तब हमने उससे कहा कि पण्डितजी उपाय करा रहे हैं, तुम्हारे निमित्त शुभ कार्यमें ही हम सब लगे हुए हैं।

उसके पश्चात् पार्वणश्राद्धके समाप्त होते समय, अकस्मात् ऐसा चमत्कार हुआ कि जो लड़की अबतक झोपड़ीमें बेहोश पड़ी हुई थी, वही लड़की सहसा सबके देखते-देखते उठी और उस झोपड़ीमेंसे निकलकर श्रीगङ्गाजीकी ओर चल दी। वह

अपने मुखसे बार-बार यह कहती जाती थी 'लो अब मेरा उद्धार हो गया और अब मैं यहाँसे जा रहा हूँ।' ऐसा कहते-कहते वह श्रीगङ्गाजीके जलमें प्रवेश कर आगे बढ़ती ही चली गयी। यह देखकर सब लोग भयभीत हो गये। हम सभी यह सोचने लगे कि कहीं ऐसा न हो कि यह गहरे जलमें जाकर डूब जाय। मैंने उसके घरवालोंसे कहा कि तुम घबराओ नहीं, इसे अंदर जाने दो, चिन्ता न करो।

उसने अंदर जाकर कण्ठतक जलमें खड़े होकर श्रीगङ्गाजीमें ज्यों ही गोता लगाया, त्यों ही उसके शरीरमें व्याप्त उस प्रेतका उद्धार हो गया और वह लड़की उस प्रेतसे छुटकारा पाकर पूर्ण स्वस्थ और प्रसन्न होकर जलसे बाहर आ गयी तथा सदा-सर्वदाके लिये उसे उस प्रेतसे छुटकारा मिल गया। अब तो सबमें प्रसन्नताकी लहर दौड़ गयी, सभी गद्‌गद हो गये।

यद्यपि पार्वणश्राद्धद्वारा प्रेतका उद्धार और इस लड़कीका संकट दूर हो चुका था, परंतु फिर भी हमने बादमें पूज्यपाद जगद्‌गुरु श्रीशंकराचार्यजी महाराजके निर्देशानुसार तीर्थश्राद्ध भी कराया। सब कार्य करते-कराते सायंकाल हो गया और सब लोग बड़े ही प्रसन्न थे। इसी प्रसन्नतामें सब लोग मिलकर पतितपावनी भगवती भागीरथीके परम पवित्र तटपर श्रीगङ्गाजी महारानीकी पूजा-प्रार्थना करके लौट आये।

उसके पश्चात् फिर कभी उस लड़कीको कोई कष्ट नहीं हुआ।

~~0~~

मुसलिम प्रेतात्मा देखते-ही-देखते एक सेर हलुवा खा गयी

[प्रेतात्मा-सम्बन्धी एक महान् आश्चर्यजनक बिलकुल सत्य घटना]

हमारे यहाँ आजसे नहीं अपितु अनादिकालसे आत्मा, भूत, प्रेत, पितर, देवी-देवता आदिको माननेकी परम्परा चली आ रही है और मृतात्माकी शान्तिके निमित्त शास्त्रोंमें श्राद्ध, तर्पण, पिण्डदान आदि करने तथा ब्राह्मण-भोजन करानेका निर्देश दिया गया है। इसका पालन करनेसे भारतीय सनातनधर्मी हिन्दू सैकड़ों प्रकारकी बीमारियोंसे बचते और बड़ी सुख-शान्तिसे रहते चले आये हैं। जबसे हमने इन शास्त्रीय बातोंको दकियानूसी माना है और मृतात्माकी शान्तिके निमित्त श्राद्ध आदि कर्म करना बंद किया है, तभीसे उसका यह महान् भयंकर दुष्परिणाम सबके सामने प्रत्यक्ष देखनेमें आ रहा है कि आज मृतात्माएँ भूत-प्रेत आदि बनकर भूखी-प्यासी, मारी-मारी भटक रही हैं और घर-घरमें बड़ा उपद्रव मचा रही हैं।

एक मुसलिम प्रेतात्माने हिन्दू नवयुवकके शरीरमें प्रवेश कर उसे किस प्रकार सताया और फिर उसने हलुवा खानेकी माँग की तथा हलुवा खिलानेपर वह संतुष्ट होकर किस प्रकार चला गया, इस सम्बन्धकी महान् आश्चर्यजनक सत्य घटना यहाँ प्रस्तुत है—

एक बारकी बात है, पिलखुवास्थित हमारे निवासस्थानपर दैनिक 'वीर अर्जुन' के समाचार-सम्पादक अयोध्यानाथ बल पधारे थे। जब उनसे हमारी बातें होनी प्रारम्भ हुईं तो हमने उन्हें

कुछ भूत-प्रेतात्माके सम्बन्धकी बातें सुनायीं। उन्हें सुनकर झटसे उन्होंने कहा कि भक्तजी! आप तो शास्त्र-पुराणोंकी और दूसरोंके मुखसे सुनी हुई बातें सुना रहे हैं, पर हमने तो—'एक मुसलमान जातिके मृत व्यक्तिकी आत्माने प्रेत बनकर एक हिन्दू नवयुवकको किस प्रकार सताया'—यह आश्चर्यजनक सत्य घटना अपनी आँखोंसे देखी है। हम इन बातोंको पहले कभी सत्य नहीं मानते थे, पर अब हम भूत-प्रेतादिकी बातोंको माननेके लिये बाध्य हो गये हैं। यह सुनकर हमने उनसे कहा कि क्या वह अपनी आँखों-देखी प्रेतात्मा-सम्बन्धी सत्य घटना हमें सुनानेकी कृपा नहीं करेंगे?

माननीय बल साहबने कहा—'क्यों नहीं! अवश्य सुनायेंगे।' फिर उन्होंने घटना सुनाना प्रारम्भ किया—

'प्रताप' पत्रके एक कर्मचारीका १८ वर्षीय लड़का बड़ा दुबला-पतला था, पर था बिलकुल ठीक-ठाक और स्वस्थ। उसे किसी भी प्रकारकी कोई बीमारी नहीं थी। सितम्बर सन् १९६९ की बात है। एक दिन रातमें उस लड़केके शरीरके अंदर एक अद्भुत आवेश आया और उसके अंदर प्रेतात्माका प्रवेश हुआ, जिसके कारण उसने अकस्मात् अपने घरके बरतन तोड़ने प्रारम्भ कर दिये। उस दिन उसका न तो किसीसे कुछ झगड़ा हुआ था और न ही वह किसीपर क्रुद्ध ही था। इसलिये घरवाले उसकी ये हरकतें देखकर हैरान हो रहे थे। एकाएक इसे आज यह क्या हो गया है? इससे पहले तो यह ऐसा कार्य कभी नहीं करता था। उससे जब इसका कारण पूछा गया तो उसने कुछ नहीं बताया। जब उसके माता-पिता तथा उसके अन्य दो भाइयोंने उसे पकड़कर डाँट-फटकार कर उसे शान्त करनेकी कोशिश की,

तब वह और भी जोरसे चिल्ला पड़ा तथा उसने बड़ी जोर-जोरसे 'अल्लाहो अकबर', 'अल्लाहो अकबर' के नारे लगाने प्रारम्भ कर दिये। अब तो सब लोग बहुत परेशान हुए, यह किसीकी भी समझमें नहीं आ रहा था कि इसे क्या हो गया है। जब वह बहुत जोर-जोरसे हो-हल्ला मचाने लगा और नहीं माना तो लाचार हो उसे चार आदमियोंने जबरदस्ती पकड़कर एक खाटपर डाल दिया और दो मोटी-मोटी रस्सियोंसे कसकर बाँध दिया। रस्सियोंसे बाँधे जानेपर भी उसका चिल्लाना, शोर मचाना तथा उपद्रव करना बराबर जारी रहा। उसने चिल्लाकर बड़े जोरसे कहा कि मुझे बाँधनेकी ताकत किसीमें भी नहीं है। 'अल्लाहो अकबर', 'अल्लाहो अकबर' कहकर और चिल्ला-चिल्लाकर उसने अपनी भुजाओंको जोर-जोरसे हिलाया, जिससे रस्सी टूट गयी। फिर उसने खुलकर खूब हुड़दंग मचाने और 'अल्लाहो अकबर', 'या अली' के जोर-जोरसे नारे लगाने शुरू कर दिये। अब तो घरवाले बहुत परेशान हुए। किसीने घरवालोंको सलाह दी कि इसके शरीरमें मुसलमान प्रेत प्रतीत होता है, इसी कारण यह 'अल्लाहो अकबर' और 'या अली' बोलकर उपद्रव मचा रहा है, इसका कोई उपचार-अभिचार कराओ। उसकी सलाहपर कुछ उपचार-अभिचार कराये गये, जिससे वह मुसलमान प्रेत कुछ देरके लिये एकदम शान्त हो गया और चला गया। अब वह लड़का भला-चंगा हो गया और पहले-जैसा ठीक-ठाक दिखलायी पड़ने लगा।

दूसरे दिन पहले-जैसा हो गया और वैसे ही उसने 'अल्लाहो अकबर' और 'या अली' के नारे लगाने, उपद्रव मचाने शुरू कर दिये। तंग आकर उस लड़केको एक बहुत अच्छे डॉक्टरके पास

ले जाया गया। डॉक्टरने उसे बड़े गौरसे देखा और इंजेक्शन लगाया तथा दवा आदि दी, परंतु उसका भी कोई असर नहीं हुआ, उसने पहले-जैसा ही उपद्रव मचाना शुरू कर दिया। डॉक्टरने उसे दिमागकी खराबीका कारण बताया, परंतु वह कोई ऐसी दवा न बता सका और न दे ही सका, जिससे वह लड़का ठीक हो सके। जब डॉक्टरने जवाब दे दिया, तब उसे दिखानेके लिये कई झाड़-फूँक करनेवाले बुलाये गये। उन्होंने झाड़-फूँकका काम किया, परंतु उससे भी कोई लाभ नहीं हुआ। अन्तमें किसीने उसके घरवालोंको परामर्श दिया कि सुदर्शन पार्क, नयी दिल्लीमें एक सरदारजी रहते हैं, जो पराम्बा श्रीभगवतीजीके बड़े अनन्य उपासक हैं, वे ऐसे भूत-प्रेतादिसे सताये हुए लोगोंको देखा करते हैं और अच्छा कर दिया करते हैं। इस कार्यमें वे बड़े निपुण हैं। इसलिये इसे उनके पास ले जाकर दिखाया जाय तो अच्छा रहेगा और इसका यह रोग दूर हो जायगा। घरवाले उसे पकड़कर उन सिख सरदारजीके पास ले गये। उसने सिख सरदारजीके पास जाकर भी बड़ी उद्दण्डता दिखलायी और फिर वही पहले-जैसे 'अल्लाहो अकबर' तथा 'या अली' के नारे बड़े जोर-जोरसे लगाने प्रारम्भ कर दिये। सरदारजी इसके असली रहस्यको समझ गये और फिर उन्होंने उस लड़केको अपने सामने बैठाकर मन-ही-मन कुछ मन्त्र पढ़ना प्रारम्भ किया तो वह मन्त्र पढ़नेसे और भी ज्यादा बौखलाने लगा। जब सरदारजीने उसके सामने मुसलमानी कलमा पढ़ना शुरू किया तो वह कलमा सुनकर चुपचाप उनके पास बैठ गया। तब उन सरदारजीने उस लड़केके सिरपर अपना हाथ फेरा और उससे बड़े प्यारसे पूछा—'भाई! यह बताओ कि तुम कौन हो?'

प्रेतात्माने रोते हुए कहा—मैं एक मुसलमान प्रेत हूँ।

सरदारजी—तुम्हारा नाम क्या है?

प्रेतात्मा—मेरा नाम रहमतअली है।

सरदारजी—तुम कहाँके रहनेवाले हो?

प्रेतात्मा—मैं पहाड़गंज, नयी दिल्लीका रहनेवाला हूँ।

सरदारजी—तुम प्रेत कैसे बने?

प्रेतात्मा—मैं टी०बी० का मरीज था, जब मैं टी०बी० के रोगसे मरा तो उस समय मुझे कोई पानी देनेवाला भी मेरे पास नहीं था।

सरदारजी—अब तुम इस लड़केको क्यों सताते हो और इस लड़केका पिण्ड कैसे छोड़ोगे?

प्रेतात्मा—मुझे हलुवा खानेकी चाह है, यदि आप मुझे गरम-गरम हलुवा खिलवा दें तो मैं इस लड़केको छोड़ दूँगा, अन्यथा नहीं।

सरदारजी—मुसलमान तो प्रायः हलुवा खाते नहीं, फिर तुम हलुवा खानेकी इच्छा क्यों करते हो?

प्रेतात्मा—जब मैं मरा था तो उस समय मेरी अन्तिम ख्वाहिश गरम-गरम हलुवा खानेकी थी, वही आज भी बनी हुई है। जबतक हलुवा खानेकी मेरी ख्वाहिश पूरी नहीं होगी, तबतक मुझे शान्ति कदापि नहीं मिलेगी और जबतक मुझे शान्ति नहीं मिलेगी, तबतक मैं इस लड़केको छोड़ूँगा नहीं। यदि तुमने मुझे हलुवा खिलवा दिया तो मैं इस लड़केको छोड़ दूँगा और इसके पाससे चला जाऊँगा।

सरदारजी—अच्छा, कल हम तेरी हलुवा खानेकी ख्वाहिश अवश्य पूरी कर देंगे। जब हम ऐसा कर देंगे तब तुम इसे कल छोड़ दोगे न और फिर कभी इसे सताओगे तो नहीं?

प्रेतात्मा—मैं हलुवा खाकर इसे अवश्य छोड़ दूँगा और फिर इसे कभी नहीं सताऊँगा।

सरदारजीने लड़केके पितासे कहा कि अब तुम अपने घर जाओ और अपने लड़केको भी साथ ले जाओ। कल सुबह इस लड़केके साथ जल्दी आना और अपने साथ घरसे हलुवा बनवाकर लेते आना।

अगले दिन प्रातःकाल उस प्रेतग्रस्त लड़केका पिता उस लड़केको लेकर पुनः सरदारजीके पास आया; लेकिन घरसे हलुवा बनाकर नहीं ला सका, हलुवा बनानेके लिये आटा, घी, चीनी आदि सब सामान साथमें लेता आया और लाकर सरदारजीके सामने अदबसे रख दिया। सरदारजीके घरपर ही लगभग एक सेर हलुवा तैयार किया गया; फिर वह गरम-गरम हलुवा उस लड़केको खानेके लिये दिया गया। लड़केने गरम-गरम हलुवा अपने हाथमें लेकर एक ही बारमें सारा-का-सारा हलुवा खा डाला। हलुवा खाकर वह मुसलमान प्रेतात्मा बड़ा खुश हुआ। जो लड़का एक पाव भी हलुवा नहीं खा सकता था, वही लड़का एक सेर हलुवा एकाएक खा गया। यह देखकर सभी दंग रह गये।

सरदारजीने प्रेतात्मासे कहा—क्यों भाई! अब तो तुम गरम-गरम हलुवा खाकर खुश हो न?

प्रेतात्मा—जी हाँ सरदारजी! मैं अब हलुवा खाकर तृप्त हो गया हूँ और आपसे बड़ा खुश हूँ।

सरदारजी—अब तुम इसे छोड़ दो और जाओ।

प्रेतात्मा—अब मैं जाता हूँ। अब मैं फिर कभी नहीं आऊँगा। ऐसा कहकर वह मुसलमान प्रेतात्मा उसके शरीरसे चला गया और वह लड़का बिलकुल ठीक हो गया।

यह है आँखोंदेखी एक महान् आश्चर्यजनक बिलकुल सत्य घटना। जिसे बड़े-बड़े डॉक्टर भी ठीक नहीं कर सके, उसे एक भगवतीके उपासक सिख सरदारने अपनी मन्त्रशक्तिके बलपर बिलकुल ठीक कर दिया और उस प्रेतात्माकी भी इच्छा-पूर्ति कर उसे संतुष्ट कर दिया। आजके इस भौतिकवादी वैज्ञानिक युगमें जबकि कोई भूत-प्रेत, आत्मा-परमात्मा, मन्त्रशक्ति आदिको माननेके लिये तैयार नहीं है, यह सत्य घटना प्रत्यक्ष देखनेमें आयी है, जिसे देखकर महान् आश्चर्य होता है और बड़े-बड़े घोर नास्तिकोंकी भी बोलती बंद हो जाती है। उन्हें शास्त्रों-पुराणोंकी ऐसी बातोंको सत्य माननेके लिये बरबस बाध्य होना पड़ता है।

~~~०~~~
~~~
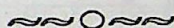
पूर्वजन्मका योगी अनूठा संतसेवी बालक

[पूज्य संत श्रीउड़िया बाबाजी महाराजकी सुनायी घटना]

गोलोकवासी पूज्यपाद स्वामी श्रीपूर्णानन्दतीर्थजी (श्रीउड़िया बाबाजी) महाराज एक बड़े ही उच्चकोटिके महापुरुष थे। एक बार आप हमारी करबद्ध प्रार्थनापर पिलखुवास्थित हमारे निवासस्थानपर पधारे थे। आपने अपनी आँखोंदेखी और अपने जीवनमें घटी पूर्वजन्मके एक महान् योगी और नित्यप्रति 'माप्-माप्' चिल्लाकर संतोंको पूरियाँ खिलाने, उनकी सेवा करनेवाले विलक्षण संतसेवी भक्त बालककी एक महान् आश्चर्यजनक सत्य घटना हमें सुनायी। पूज्यपाद श्रीउड़िया बाबाजीने घटनाका विवरण सुनाते हुए कहा—

मैं किसी भी सवारीमें कभी भी नहीं बैठता। अतः जहाँपर मुझे आना-जाना होता है, पैदल ही आता-जाता रहता हूँ। यह मेरा एक नियम है। मैं अपने पैदल चलनेके नियमके अनुसार एक बार उड़ीसामें विचरण करता हुआ पैदल ही एक जगह जा रहा था। रास्तेमें एक ग्राम पड़ा। जब मैं उस ग्राममें घुसा और एक गृहस्थ ब्राह्मणके मकानके सामनेसे होकर आगेकी ओर बढ़ा, तब मुझे काषाय वस्त्र पहने देख एक दुधमुँहा— बहुत छोटा-सा सुन्दर बालक अचानक उस मकानसे निकला और झटसे मेरी ओर बड़ी तेजीके साथ दौड़ा तथा पीछेसे आकर

उसने मेरी चादर अपने दोनों हाथों तथा मुँहसे पकड़ लिया। मैं बड़ी मस्तीके साथ चला जा रहा था। एकाएक चादर पकड़े जानेके कारण अप्रत्याशितरूपसे झटका लगा तो मैं खड़ा हो गया। जब मैंने मुड़कर देखा तो पाया कि एक बहुत ही सुन्दर छोटा-सा बालक मेरी चादर अपने दोनों छोटे-छोटे हाथोंसे पकड़े और अपने मुँहसे दबाये हुए है। मैंने अपनी चादर उस बालकसे छुड़ानेका भरसक प्रयत्न किया, परंतु वह बालक भला छोड़नेवाला कहाँ था? उसने छोड़नेके बदले उलटे और बड़े जोरोंसे चादर पकड़ ली और मुझे आगे बढ़नेसे रोक दिया। मुझे उस बालकका यह हठ देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ; क्योंकि यह बालक न तो मेरा पूर्वपरिचित था और न ही मुझे जानता था, फिर भी यह मेरी चादर इस प्रकार पकड़ करके क्यों खींच रहा है, यह मुझे क्यों नहीं छोड़ रहा है—मैं इस अद्भुत रहस्यको बिलकुल भी नहीं समझ सका। अब मैंने उस विलक्षण बालकसे कहा—'अरे बेटा! छोड़ो न मेरी इस चादरको।'

बालकने मुझे अपनी अँगुलीके संकेतसे अपने घर चलनेको कहा और तोतली वाणीमें बोला—'माप्-माप्'।

मैं उस अद्भुत बालकके इस प्रकार 'माप्-माप्' कहनेके रहस्यको और उसके आशयको नहीं समझ सका। मैं लाचार होकर उसके साथ चल दिया। वह आगे-आगे मेरी चादर पकड़कर चल रहा था और मैं उसके पीछे-पीछे चल रहा था। जब वह अपने साथ मुझे लेकर घरके अंदर घुसा तो घरमें घुसते ही बड़े जोरोंसे 'माप्-माप्' चिल्लाना प्रारम्भ कर दिया। घरमें उसके माता-पिताने जब अपने बच्चेके मुखसे तोतली बोलीमें 'माप्-माप्'का शब्द सुना तो वे बड़े प्रसन्न हुए। वे समझ गये

कि यह गेरुए वस्त्रवाले किसी साधु-महात्माको पकड़ लाया है। इसी कारण प्रसन्न होकर 'माप्-माप्' चिल्ला रहा है। जब उन्होंने मुझे देखा, तब बड़ी ही प्रसन्नतापूर्वक प्रेमसे प्रणाम किया और आसन बिछाकर बिठाया। मैंने उसके माता-पितासे पूछा—

क्या यह बालक आपका है?

बालकके पिताने कहा—जी हाँ महाराज! यह हमारा ही बालक है।

मैंने फिर पूछा—यह मुझे यहाँपर क्यों पकड़कर लाया है?

उसने कहा—महाराज! आप गेरुए कपड़े जो पहन रखे हैं, इसलिये।

गेरुआ कपड़ा पहननेसे इसका क्या मतलब है? मैंने कुछ कौतूहलसे उसकी ओर देखते हुए पूछा।

महाराजजी, यह जिसे भी गेरुआ कपड़ा पहने देखता है, बस, यह उसे ही पकड़कर ले आता है। बालकके पिताने बड़ी सरलतासे कहा।

मैंने रहस्यके उद्घाटनकी दृष्टिसे पूछा—चाहे गेरुआ कपड़ा पहननेवाला कोई भी हो?

उसने कहा—महाराजजी! यह बालक आपको ही नहीं, जो भी इस रास्तेसे गेरुआ कपड़ा पहने साधु-संत-महात्मा आता-जाता है बस, यह उसे ही पकड़कर अपने साथ ले आता है। किसी गृहस्थी सांसारिक मनुष्यसे तो यह बालक कभी बातें भी नहीं करता। हाँ, साधु-संतोंको देखते ही यह प्रसन्न हो जाता है तथा उनके पीछे दौड़ पड़ता है और जबतक उन्हें पकड़कर अपने साथ घरपर नहीं ले आता, तबतक इसे चैन ही नहीं पड़ता। यदि कभी इसके सामनेसे होकर कोई साधु-महात्मा चला

जाता है और इसकी पकड़में नहीं आता, उस समय इसे एक प्रकारसे बड़ा दुःख होता है। उस समय इसे देखनेपर ऐसा लगता है मानो इसके शरीरसे प्राण ही निकल गये हों।

एक क्षण रुककर मैंने पूछा—ऐसा यह क्यों करता है?

उस लड़केके पिताने बड़े भोलेपनसे कहा—महाराज! हम तो एक साधारण गृहस्थ सांसारिक आदमी हैं, हम भला इस बातको क्या समझ सकते हैं!

क्या इसे किसीने ऐसा करना सिखाया है?

नहीं महाराज, इसे भला सिखाता कौन?

यह कबसे ऐसा करता है?

महाराज! यह तो जन्मसे ही ऐसा करता है। इसे किसीने ऐसा करना सिखाया थोड़े ही है। इसने जबसे चलना-बोलना सीखा है, तभीसे गेरुआ वस्त्र पहननेवाले साधु-महात्माओंके पीछे-पीछे दौड़ता है तथा उन्हें पकड़कर अपने साथ लाता है और उनकी सेवा करता है। इसके बाद ही उन्हें यहाँसे आगे जाने देता है।

परंतु मुझे तो शीघ्र ही आगे जाना है।

महाराज, चले जाइयेगा, पर अभी नहीं।

अभी क्यों नहीं?

बाबा! यह आपको अब जाने थोड़े ही देगा। यह अब आपकी सेवा करेगा और 'माप्-माप्' वाला कार्य करेगा।

मैंने बड़ी उत्सुकतासे पूछा—यह बालक 'माप्-माप्' क्या चिल्लाता है और 'माप्-माप्'वाला कार्य क्या करेगा?

बालकके पिताने कहा—यह बालक जिस किसी भी साधुको देखता है उसे ही पकड़कर लाता है और अपनी माँसे 'माप्-माप्' कहता है। छोटा बच्चा होनेके कारण पूरा शब्द तो यह बोल

नहीं पाता, इसलिये यह 'माप्-माप्' कहता है। इसका मतलब यह है कि माँ, जल्दीसे पूरी बना और इस बाबाको खिला।

तो यह बालक हमें भी अभी आगे नहीं जाने देगा?

पहले यह अपनी 'माप्-माप्' वाली बात पूरी कर लेगा, तब आपको आगे जाने देगा। इसलिये महाराज! जब आप हमारे इस बालककी पकड़में आ ही गये हैं, तब शान्तिपूर्वक इस आसनपर बैठिये और अभी इसकी माँ स्नान करके आपके लिये पूरियाँ बनायेगी, आप उससे तृप्त होकर जहाँ जाना होगा, चले जाइयेगा। जबतक आप इसकी माँकी बनायी हुई पूरियाँ नहीं खा लेंगे, तबतक यह बालक आपको जाने नहीं देगा।

उस विलक्षण संतसेवी बालकके अद्भुत क्रिया-कलापोंकी गाथा उसके पितासे सुनकर मैं भावविभोर हो गया और सोचने लगा—अच्छा, इस बालककी जैसी इच्छा होगी, हम वैसा ही करेंगे। मैं उनके दिये आसनपर बैठ गया। वह बालक भी मेरे पास ही बैठ गया। उसकी माँने जल्दी-जल्दी स्नान किया और बड़ी पवित्रताके साथ प्रेमपूर्वक गरम-गरम पूरियाँ बनायीं, तत्पश्चात् भगवान्‌को भोग लगाकर उसने मुझे भी खिलाया। जब मैं खा-पी चुका तो वह बालक बड़ा प्रसन्न हुआ। अब उसने जो मुझे अपनी पकड़में ले रखा था, अपना वह हठ ढीला कर दिया, कारण कि उसका असली कार्य साधुसेवा करना पूरा हो चुका था। अब ज्यों ही मैं आगे जानेके लिये उद्यत हुआ, त्यों ही उस बालकने संकेतसे कहा—बाबा, अब जाओ। मैंने चलते समय उसके माता-पितासे कहा—यह तुम्हारा बालक कोई साधारण बालक नहीं है। यह महान् विलक्षण बालक है। तुम्हारा कोई महान् पुण्योदय हुआ है, जिससे तुम्हें इस जीवनमें ऐसा

अद्भुत विलक्षण बालक प्राप्त हुआ है। यह बालक किसी पूर्वजन्मका महान् योगी है। इसे किसी भी प्रकारका कोई कष्ट न हो और इसकी साधु-संतोंकी सेवामें किसी प्रकारकी भी विघ्न-बाधा न पड़े, तुमलोग इसका पूरा-पूरा ध्यान रखना।

मैंने साधु-संतोंकी सेवा करनेवाले इस प्रकारके विलक्षण बालकको देखकर आश्चर्यचकित हो दाँतोंतले अँगुली दबा ली। इस सत्य घटनासे यह सत्य सिद्ध हो जाता है कि इस धर्मप्राण भारतदेशमें ऐसे-ऐसे अद्भुत विलक्षण बालक अब भी जन्म लेते हैं। वास्तवमें यह भारतभूमि अत्यन्त अद्भुत दिव्य भूमि और देवभूमि है, भगवान्‌की अवतारस्थली है। इसलिये भारतमें तो ऐसे-ऐसे धर्मात्मा-पुण्यात्मा बालकोंका जन्म लेना ही सार्थक है। ऐसे ही बालकोंके जन्मसे भारतभूमि कृतकृत्य होती है और भारत राष्ट्र गौरवान्वित होता है।

~~~०~~~
~~~
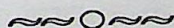
मरणासन्न मछलियोंको जीवनदान देते ही वर्षा होने लगी

[जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्रीकृष्णबोधाश्रमजी महाराजकी कृपाका साक्षात् चमत्कार]

परमपूज्यपाद प्रातःस्मरणीय श्रीमज्जगद्गुरु शंकराचार्य ज्योतिष्पीठाधीश्वर अनन्तश्रीविभूषित स्वामी श्रीकृष्णबोधाश्रमजी महाराज एक बड़े ही उच्चकोटिके वीतराग ब्रह्मनिष्ठ महापुरुष थे। उनसे सम्बन्धित भगवत्कृपा-सम्बन्धी एक सत्य घटना, जिसे उन्होंने मुझे सुनाया था, यहाँ प्रस्तुत है—

स्वामी श्रीकृष्णबोधाश्रमजी महाराजने एक बार कुरुक्षेत्र जाकर वहाँके तीर्थों और आस-पासके सभी देवमन्दिरोंके दर्शन करनेका विचार किया। अतः वे एक-दो ब्राह्मण ब्रह्मचारियोंको साथमें लेकर पैदल ही कुरुक्षेत्रके लिये प्रस्थान कर गये। एक हाथमें दण्ड और दूसरे हाथमें मिट्टीका करवा लेकर ब्रह्मचारियोंके साथ पैदल घूम-घूमकर तीर्थोंके और सभी मन्दिरोंके दर्शन करने लगे। दैवयोगसे उन दिनों कुरुक्षेत्रमें और आस-पासके क्षेत्रोंमें वर्षा न होनेके कारण सूखा पड़ गया था। जिसके कारण खेती तो सूख ही गयी थी, तालाबों, कुओं, बावड़ियों आदिका भी पानी सूख गया था। जलाभावके कारण चारों ओर हाहाकार मचा हुआ था। पशु-पक्षी भी पानी न मिलनेके कारण प्याससे मरने लगे थे, सर्वत्र चिन्ता व्याप्त थी। स्वामीजी विश्रामकी दृष्टिसे पासके ही तीर्थ-स्थानपर एक देवमन्दिरमें ठहरे हुए थे। वहाँपर उन्होंने एक अत्यन्त करुणाजनक दृश्य देखा। मन्दिरके पास एक

बहुत बड़ा तालाब था और सूखा पड़नेके कारण उसका सारा पानी सूख गया था। उस बड़े तालाबके एक छोटेसे गड्ढेमें बहुत थोड़ा पानी रह गया था। पानी न होनेके कारण तालाबकी हजारों मछलियाँ मर चुकी थीं तथा शेष बची हजारों मछलियाँ उस छोटेसे गड्ढेके पानीमें एक जगह एकत्र हो गयी थीं और पानीके अभावमें छटपटा रही थीं। ऊपरसे बड़ी तेज गरमी पड़ रही थी, गड्ढेका पानी भी एक-दो दिनमें सूखनेवाला था, ऐसा होनेपर हजारों बाकी बची उन मछलियोंको मरनेसे नहीं रोका जा सकता था। स्वामीजीसे यह करुणाजनक दृश्य नहीं देखा गया। वे मर्माहत हो उठे और किसी प्रकार इन बेचारी मछलियोंके प्राण बचाये जायँ, इसपर वे विचार करने लगे।

उस गाँवके लोगोंको जब आपके शुभागमनका समाचार मिला तो अनेक स्त्री-पुरुष आपके दर्शनार्थ चले आये और सबने मिलकर आपके श्रीचरणोंमें यह करबद्ध प्रार्थना की कि महाराजजी! बहुत दिनोंसे वर्षा न होनेके कारण खेतीको बड़ा नुकसान पहुँच रहा है, तालाब और कुएँ आदिके भी जल सूख गये हैं। अब तो पशु-पक्षी सभी पानीके बिना मरने लगे हैं। आप ऐसा उपाय बतानेकी कृपा करें कि वर्षा हो जाय और सबको सुख-शान्ति प्राप्त हो।

पूज्य जगद्गुरुजी महाराजने कहा कि भाई! भगवान्की कृपा चाहते हो तो उन्हें प्रसन्न करो। वही तुम्हारे ऊपर कृपा कर वर्षा करके तुम्हारा दुःख दूर करेंगे।

महाराजजी! भगवान्को प्रसन्न करनेका साधन क्या है? क्या किया जाय, जिससे भगवान् प्रसन्न होकर हमपर कृपा करें। आप इसका कोई उपाय बतायें?

पूज्य जगद्गुरुजीने कहा—भगवान्को प्रसन्न करनेका

तात्कालिक उपाय यही है कि तुम यहाँके जीवोंपर कृपा करो, तभी भगवान् तुमसे प्रसन्न होकर तुम्हारे ऊपर कृपा करेंगे।

ग्रामीणोंने कहा—महाराज! हममें इतनी सामर्थ्य कहाँ है कि हम यहाँके जीवोंपर कृपा करें, हम तो सर्वथा असमर्थ हैं?

पूज्य जगद्गुरुजीने कहा—हम तुम्हें भगवान्‌को प्रसन्न कर उनकी कृपा प्राप्त करनेका ऐसा ही साधन बतायेंगे, जो तुम कर सकोगे।

महाराज! आप आज्ञा दीजिये, हम उसका अवश्य पालन करेंगे।

पूज्य जगद्गुरुजी महाराजने सामनेके उस सूखे तालाबकी ओर संकेत करके कहा—देखो, उस तालाबका सारा पानी सूख गया है, जिसके कारण हजारों मछलियाँ मर चुकी हैं और बाकी जीवित बची मछलियाँ उस छोटेसे गड्ढेके जलमें एक जगह इकट्ठी होकर पानीके बिना छटपटा रही हैं। यदि इन्हें जल देकर इनकी रक्षा नहीं की गयी तो एक-दो दिनमें ही ये भी जलके बिना तड़प-तड़पकर प्राण दे देंगी।

आतुरता एवं उत्सुकतावश ग्रामीणोंने एक स्वरमें कहा—महाराजजी! हम क्या करें?

पूज्य जगद्गुरुजीने कहा—तुम इनके ऊपर कृपा करो तो भगवान् स्वयं तुम्हारे ऊपर कृपा करेंगे।

महाराज! क्या कृपा करें?

इन मछलियोंके लिये जल ला करके इस तालाबमें डालो।

महाराजजी! जल तो है ही नहीं, फिर लायें कहाँसे!

ग्रामीणोंकी यह बात सुनकर पूज्य जगद्गुरुजी महाराज स्वयं उठे और पासके कुएँपर पड़ी बाल्टीको लटकाकर जल खींचनेको उद्यत हो गये। यह देख सभी ग्रामीण स्तब्ध रह गये, फिर क्या था! तत्काल ग्रामीणोंने कुएँमेंसे जल निकाल-निकालकर उस तालाबमें

ले जाकर डालना प्रारम्भ किया। अब तो जिसे देखो, वही पानी लिये ही दौड़ रहा था। कोई बाल्टीमें तो कोई घड़ेमें और कोई कनस्तरमें जल ले जाकर तालाबमें छोड़ने लगा। अब तालाबमें जल-ही-जल दीख रहा था। मछलियोंका छटपटना बंद हो गया था, उनके प्राणोंकी रक्षा जो हो गयी थी।

मछलियोंके प्राण-रक्षारूपी इस यज्ञसे भगवान् ग्रामीणोंपर अत्यन्त प्रसन्न हुए। इस जीव-रक्षा-यज्ञका तत्काल प्रत्यक्ष अद्भुत चमत्कार यह हुआ कि कई दिनोंसे जो आकाश बिलकुल साफ था और बादल नामको भी नहीं थे, सबके देखते-देखते वह आकाश एकदमसे बादलोंसे भर उठा, मेघोंका गरजना और विद्युत्का चमकना शुरू हो गया तथा मूसलाधार वर्षा प्रारम्भ हो गयी। देखते-ही-देखते चारों ओर जल-ही-जल भर गया। चारों ओर प्रसन्नताकी लहर दौड़ गयी। उस क्षेत्रके सूखा-पीड़ित लोगोंकी खुशीका ठिकाना न रहा। सभी महाराजश्रीके श्रीचरणोंमें गिर पड़े और कहने लगे—महाराजजी! आपका यह कहना कि तुम यहाँके जीवोंपर कृपा करो तो तुम्हारे ऊपर भगवान् कृपा करेंगे, यह बात अक्षरशः सत्य निकली। इस भगवत्कृपाके अद्भुत चमत्कारसे हम सभी लोग चकित हैं। आज हमलोगोंने प्रत्यक्ष अनुभव किया है कि जीव-प्रसन्नता ही भगवत्-प्रसन्नता है, जीव-सेवा ही शिव-सेवा है। अतः प्राणिमात्रको भगवान् ही मानकर उसकी सेवा करनी चाहिये।

~~~०~~~
~~~

गोमाताका अपमान करना मानवता नहीं, दानवता है

[काश्मीरनरेश महाराज श्रीप्रतापसिंहजीके जीवनकी एक सच्ची घटना]

स्वर्गीय काश्मीरनरेश महाराज श्रीप्रतापसिंहजी बड़े ही धर्मात्मा, गो-ब्राह्मण-प्रतिपालक राजा थे। आप कट्टर सनातनधर्मी, वेद-शास्त्रोंके ज्ञाता, जितेन्द्रिय, धर्मात्मा और प्रजापालक थे। सैकड़ों ब्राह्मण नित्य आपके यहाँ वेदध्वनि, चण्डीपाठ, जप-अनुष्ठान आदि किया करते थे। क्या मजाल जो राज्यमें कोई गोहत्या कर सके या गोमाताकी ओर अँगुली उठाकर भी देख सके!

एक बार महाराज कहीं जा रहे थे और साथमें बड़े-बड़े अधिकारी भी थे। किसीने देखा—रास्तेमें आगे एक गाय बैठी है। तुरंत कुछ कर्मचारी आगे बढ़े और उन्होंने गायको उठाकर खड़ी कर दिया एवं रास्तेसे हटा दिया। कर्मचारियोंके इस प्रकार दौड़-धूप करनेके कारण महाराजका ध्यान उस ओर आकर्षित हुआ और महाराजने एक कर्मचारीको पास बुलाकर पूछा कि 'इस प्रकार एकदम दौड़-धूप करनेका कारण क्या था?' कर्मचारीने बताया कि 'महाराज! आपकी सवारी जिस रास्ते जाती, वह रास्ता साफ नहीं था, उसमें एक गाय रास्ता रोके बैठी थी। अब उस गायको हटाकर रास्ता साफ कर दिया गया है।'

महाराज प्रतापसिंहने जब यह सुना कि मेरे कारण गायको कष्ट पहुँचाया गया है, तब उनको बहुत दुःख हुआ। महाराजने

क्षोभसे वहीं सवारी रुकवा दी। तुरंत गायको रास्तेमेंसे हटानेवाले कर्मचारियोंको बुलाकर उन्हें बड़ा ही उलाहना देते हुए कहा—

'तुमलोगोंने यह क्या घोर अनर्थ कर डाला? क्या तुम्हें मालूम नहीं कि हम भारतके क्षत्रिय राजाओंके जीवनका एकमात्र उद्देश्य गौ-ब्राह्मणोंकी रक्षा करना है और गौ-ब्राह्मणोंकी रक्षा तथा सेवा करना ही मानवता है। तुमने मुझ क्षत्रिय राजाके लिये परम पूजनीय गोमाताको उठाकर उन्हें कष्ट पहुँचाया तथा गोमाताका अपमान किया, यह मानवता नहीं दानवता है। भविष्यमें ऐसा कभी मत करना। यदि कोई ऐसा करेगा, उसे तुरंत नौकरीसे अलग कर दिया जायगा।' महाराजकी इस प्रकारकी अद्भुत गोभक्ति और मानवता देखकर सभी आश्चर्यचकित हो गये और गोमाताकी जय-जयकार करने लगे।
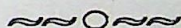
गोमाताने बुढ़िया मैयाके प्राण बचाये

बात सन् १९३५ की है। भारतके विख्यात ब्रह्मनिष्ठ सिद्ध संत प्रातःस्मरणीय स्वामी श्रीपूर्णानन्दतीर्थजी महाराज 'उड़िया बाबा' पैदल विचरते हुए उत्तर भारतके प्रमुख तीर्थ गढ़मुक्तेश्वरमें गङ्गाजीके पावन तटपर पधारे हुए थे। उन दिनों वहाँपर श्रीगङ्गा-किनारे घोर जंगलमें एक परम तपस्वी ब्रह्मचारी पं० श्रीरामचन्द्रजी रहा करते थे। उन्होंने एक-दो कुटियाएँ फूसकी और दो-तीन कुटियाएँ टीनकी बना रखी थीं। उनकी पूज्या माताजी भी उन दिनों जीवित थीं और वे लगभग ८५-८६ वर्षकी वृद्धा थीं।

पूज्य श्रीउड़िया बाबाजी महाराज अपने श्रीमुखसे उनको 'मैया' कहकर पुकारा करते थे और वह बुढ़िया मैया आपको 'बेटा' कहकर सम्बोधित किया करती थीं। ब्रह्मचारी रामचन्द्र और उनकी माता दोनों ही गायोंके परम भक्त थे। ब्रह्मचारीजीने अपने उद्धारका, अपने मोक्षका तथा कल्याणका एकमात्र साधन यह मान रखा था कि मैं श्रीगङ्गाजी महारानीके किनारे अपनी पूज्या माताको साथ लेकर गोमाताकी सेवा करूँगा, बस इसीसे मेरा मोक्ष हो जायगा। भला, जिसपर अपनी माता, गोमाता, श्रीगङ्गामाता—इन तीनोंकी कृपा हो, उसका परम कल्याण न हो तो फिर किसका कल्याण होगा?

पूज्य ब्रह्मचारीजी प्रातःकाल उठते और अपने हाथमें डंडा लेकर अपनी गायोंको चरानेके लिये जंगलमें ले जाते और संध्याको लेकर लौट आते। यह आपका नित्य-प्रतिका नियम

था। बूढ़ी मैया तो आपसे भी बढ़कर गौओंकी अनन्य भक्त थीं। ८५ वर्षकी वयोवृद्धा होनेपर भी आप अपने ही हाथों गायोंको बड़े ही प्रेमसे नहलातीं, खिलातीं-पिलातीं और उनकी खूब सेवा किया करती थीं। आपने अपनी उन सब गायोंके नाम अलग-अलग रखे हुए थे। किसी गायका नाम उन्होंने श्रीगंगादेई तो किसीका नाम श्रीजमुनादेई और किसी गायका श्रीगोमतीदेई अथवा किसी गायका नाम श्रीगोदावरीदेई रखा हुआ था। आप जिस गायको भी उसका नाम लेकर पुकारती थीं, वह गाय भागी हुई आपके पास चली आती थी और आपके पास खड़ी होकर आपको चाटने लगती थी।

यदि किसी कारणवश जंगलसे गायें न आतीं अथवा उन गायोंके आनेमें तनिक भी देर हो जाती थी, फिर क्या था, बस उन बुढ़िया मैयाके एकदमसे छक्के छूट जाते थे और खूब जोर-जोरसे रोती हुई जंगलकी ओर दौड़ पड़ती थीं और बड़े जोर-जोरसे गंगादेई, जमुनादेई, गोमतीदेई, गोदावरीदेई आदि नाम लेकर आवाज लगाने लगती थीं। आवाज सुननेकी देरी होती थी कि बस झटसे वे सभी गायें दौड़ी हुई बुढ़िया मैयाके पास चली आती थीं और मैया बड़ी प्रसन्न होती थीं।

किसी दिन यदि गायें जल्दी आ जाती थीं और उस समय बुढ़िया मैया अपनी कुटियापर गायोंको नहीं मिलती थीं तो गायें बड़े जोरसे बुढ़िया मैयाको याद करके रँभाने लगती थीं और इधर-उधर घूमकर उन्हें ढूँढ़ती रहती थीं और जबतक गायोंको बुढ़िया मैया न दीख जातीं, उन्हें तनिक भी चैन नहीं पड़ता था।

एक दिनकी बात है कि ब्रह्मचारीजी तो कहीं दूसरी जगह गये हुए थे और उधर गायें जंगलमें चरनेके लिये चली गयी थीं।

मैया उस दिन अकेली थीं और अपनी टीनकी झोपड़ीमें बैठी हुई थीं। गरमीके दिन थे और ठीक दोपहरीका समय था। अकस्मात् बड़े जोरसे भयंकर आँधी आयी, मालूम होता था कि बस, आज प्रलय हो जायगा। चारों ओर घोर अन्धकार छा गया और सब कुछ दीखना बंद हो गया। झोपड़ीकी टीनकी छतें, खाट, पीढ़े और बर्तन सभी हवामें इधरसे उधर उड़-उड़कर जाने लगे। इतनेमें ही टीनवाली वह झोपड़ी (जिसमें मैया रहती थीं) भी एकदमसे उखड़ गयी और उसके टीन आपसमें तड़ातड़ एक-दूसरेसे टकराकर बजने लगे और सब टीनें मैयाके ऊपर एकदमसे आकर गिर गयीं। अब तो वे बुरी तरह उन टीनोंसे दब गयीं और साँस लेनेतकको भी जगह नहीं रही। उन्होंने अपने जीवनकी आशा छोड़ दी। सैकड़ों मन वजन ऊपर पड़ा हुआ था। उन्होंने सोचा कि अब इस घोर जंगलमें कौन आ करके मुझे उठायेगा और इन टीनोंसे कौन मुझे निकालेगा? मेरा पुत्र ब्रह्मचारी रामचन्द्र यहाँपर है नहीं, वह बाहर गाँवमें गया हुआ है, अब तो बस, इन टीनोंमें दबकर मेरा मर जाना निश्चित है। उस समय भी उन्हें अपने मर जानेकी इतनी चिन्ता नहीं थी, जितनी अपनी गंगादेई, जमुनादेई, गोमतीदेई और गोदावरीदेई आदि गायोंकी चिन्ता सता रही थी कि मेरे मर जानेके बाद इन गायोंकी रक्षा और देखभाल कौन करेगा?

दो घंटे पश्चात् आँधी चलनी शान्त हुई। इधर संध्याका समय हुआ तो जंगलसे रँभाती हुई गंगादेई, जमुनादेई आदि सभी गायें आयीं। टीनकी झोपड़ी टूटी पड़ी देखकर और मैयाको वहाँपर न पाकर वे सब व्याकुल होकर बड़े जोर-जोरसे रँभाने लगीं। मैयाने अंदर-ही-अंदर पड़े हुए पूरी शक्तिसे आवाज दी कि

'अरी गंगादेई, मैं तो इस समय अंदर टीनोंमें दबी पड़ी हूँ और बुढ़िया हूँ, अपने ऊपरसे ये टीनें कैसे हटा सकती हूँ? बेटी! अब मैं नहीं बच सकूँगी, इन टीनोंको कौन हटायेगा?'

उन गायोंने जब मैयाकी आवाज सुनी तो एक साथ अपने-अपने सींगोंको टीनोंमें घुसाकर उन्होंने उन टीनोंको अपने सींगोंपर उठा लिया, कुछ हवा आयी और उससे मैयाको कुछ-कुछ होश हुआ। वे धीरे-धीरे उन टीनोंसे बाहर निकलने लगीं। जबतक पूरी तरहसे वे टीनोंसे निकल करके बाहर नहीं आ गयीं, गायें उन टीनोंको बराबर अपने सींगोंपर लिये खड़ी रहीं और तनिक भी इधरसे उधर नहीं हुईं। अब ज्यों ही वे उन टीनोंसे निकल करके सकुशल बाहर आयीं, झटसे गायोंने अपने सींगोंपरसे वे टीनें एकदमसे नीचे गिरा दीं। इस प्रकार गायोंने मिल करके बुढ़िया मैयाके प्राण बचाये। फिर वे गायें अपनी आँखोंमें आँसू भरकर मैयाके पास सटकर खड़ी हो गयीं और उन्हें चाटने लगीं।

पूज्यपाद श्रीउड़िया बाबाजी महाराजको जब यह घटना सुननेको मिली तो उन्होंने बुढ़िया मैयासे कहा—

'मैया! जो उत्तम गति बड़े-बड़े ज्ञानियों, ध्यानियों, त्यागी-तपस्वियोंको भी मिलनी दुर्लभ है, वह परमोत्तम गति तुम्हें अनायास इन पूज्या गोमाताओंकी कृपासे अवश्य प्राप्त होगी, इसमें तनिक भी संदेह नहीं है।'

~~~0~~~
~~~
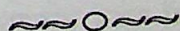
गोमाताने प्रकट होकर मुसलमानकी रक्षा की

कुछ वर्ष पूर्व दिल्लीके 'गोरक्षा-सम्मेलन'में भाषण देते हुए नामधारी सिख-सम्प्रदायके सद्गुरु महाराज श्रीजगजीतसिंहजीने गोमाताके द्वारा प्रत्यक्ष प्रकट होकर एक मुसलमान सज्जनकी प्राण रक्षाकी अद्भुत घटना सुनायी थी। जब महाराष्ट्रके सुप्रसिद्ध वारकरी-सम्प्रदायके सत्य पूज्य श्रीकृष्णगोपाल वानखड़े गुरुजी महाराज कृपापूर्वक मेरे यहाँ पिलखुवा पधारे तो मैंने वह घटना उनको सुनायी। वे इसे सुनकर बड़े प्रभावित हुए और स्वयं भैनी साहब जाकर महाराज श्रीजगजीतसिंहजीसे मिले और पूरी घटना उनसे सुनकर मुझे लिखकर भिजवायी। वही यहाँ प्रकाशित है—

तपामण्डी तहसील वरनाला जिला संगरूरमें एक मुसलमान सज्जन रहते थे, जो गोमाताके बड़े भक्त थे। उन्हींके जीवनकी यह सत्य घटना है। सन् १९४७ में हिन्दुस्थान-पाकिस्तानके बँटवारेके समय जब समस्त देशमें भयंकर मार-काट मच रही थी तो उस घोर भयंकर विपत्तिके समयमें उन मुसलमान सज्जनके प्राणोंकी रक्षा गोमाताने स्वयं प्रकट होकर कैसे अद्भुत ढंगसे की, इसके सम्बन्धमें स्वयं उन मुसलमान सज्जनने सद्गुरु महाराज श्रीजगजीतसिंहजीको सुनाते हुए बताया—

सन् १९४७ से कुछ दिनों पूर्वकी बात है कि कुछ मुसलमान कसाई बूचड़ोंको मैंने एक बहुत दुबली-पतली गाय ले जाते

देखा। वे उसे काटनेके लिये ले जा रहे थे। मुझे उस गायको देखकर बड़ी दया आयी और मैंने उनसे वह गाय मोल देनेके लिये कहा। उन कसाइयोंने मुझसे उस गायके दाम बीस रुपये माँगे। मेरे पास उस समय बीस रुपये थे नहीं। मैं बड़ा गरीब आदमी था; फिर भी मैंने गायके प्राण बचानेकी सोची और मैंने अपने घरपर जाकर अपनी भौजाईसे एक सोनेकी चीज ली। उसे गिरवी रखकर बीस रुपये प्राप्त किये और वह गाय उनसे खरीद ली। मैंने कसाइयोंके हाथोंसे बचायी गयी उस गायको अपने घरपर नहीं रखा; क्योंकि मैंने यह गाय बचानेका काम घरवालोंसे बिना पूछे चोरीसे किया था। जब वह गाय ब्यायी तो अपने घरपर लानेपर दूधके लालचसे किसीने भी इनकार नहीं किया। कुछ सालतक उस गायको अपने पास रखकर फिर उसे मैंने ऐसी जगहपर बेच दिया कि जहाँ फिर उसको किसी प्रकारका कष्ट न हो और उसके जीवनको किसी प्रकारका भी खतरा न हो।

सन् १९४७ में हिन्दुस्थान-पाकिस्तानका बँटवारा हुआ तो सभीको यह मालूम है कि उस समय एक बहुत बड़ा कत्लेआम हुआ था और उस समय हिन्दू-मुसलमान एक-दूसरेके खूनके प्यासे बन गये थे। मुसलमानोंने हिन्दुओंको और हिन्दुओंने मुसलमानोंको मारा-काटा था। हम मुसलमान वहाँपर थोड़ी संख्यामें थे तो जब हमपर हमला हुआ तो हम हिन्दुओंके उस हमलेसे डरकर एक मकानके अंदर घुस गये और अंदरसे उस मकानकी साँकल लगा ली। लोगोंने मकानको घेरकर उसमें आग लगा दी। मकानमें आग लगी देखकर सब लोग एकदमसे बाहर निकल गये। सिर्फ मैं ही अकेला उस मकानके अंदर रह गया,

मकान धुएँसे भर गया। मकानके चारों ओर आग लगी थी। अब तो मैं बड़ा घबराया कि अब मेरे प्राणोंकी रक्षा इस समय कैसे होगी? अकस्मात् मैं उस समय क्या देखता हूँ कि जिस गायको मैंने कुछ दिनों पूर्व मुसलमान कसाइयोंके हाथोंसे बचाया था, ठीक उसी प्रकारकी और ठीक उसी रंगकी गायकी पूँछ मेरे सामने घूमने लगी और अपनी पूँछसे उस धूएँसे और उस आगसे मेरी बराबर रक्षा करती रही। फिर जब वह आतंक समाप्त हुआ तो मैं उस गायकी कृपासे अग्निके बीचसे जीवित निकल आया।

यह है हमारी पूजनीया गोमाताकी भक्तिका महान् आश्चर्यजनक अद्भुत चमत्कार।
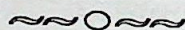
ब्रह्मलोक-प्रयाण

पंद्रह वर्ष पूर्व की गयी भविष्यवाणी सच्ची निकली

[तपोमूर्ति पं० श्रीजीवनदत्तजी महाराजके जीवनकी सत्य घटना]

पूज्यपाद प्रात:स्मरणीय अनन्तश्रीविभूषित नैष्ठिक बाल-ब्रह्मचारी, महान् संस्कृतज्ञ, तपोमूर्ति पं० श्रीजीवनदत्तजी महाराज (कुलपति-संस्थापक श्रीसाङ्गवेदविद्यालय, नरवर)-का पुण्य-संस्मरण सबको पवित्र करनेवाला है।

आपका जन्म आश्विन शुक्ल ४, संवत् १९३४ विक्रमीमें अलीगढ़में हुआ था। आपके पूज्य पिताजीका शुभ नाम पं० श्रीरामप्रसादजी महाराज था, जो बड़े ही कुलीन, परम तपस्वी ब्राह्मण थे और वैद्यकका कार्य करते थे तथा बरौलीके रावसाहब करणसिंहजीके राजपुरोहित थे। आप अपने पिताकी एकमात्र संतान थे। एक बार जब कि आप केवल पाँच वर्षके ही थे; अलीगढ़में स्वामी दयानन्द सरस्वती पधारे। आपके पूज्य पिता पं० श्रीरामप्रसादजी आपको अपने साथ दयानन्दजीके पास ले गये। स्वामीजीने आपको आदेश दिया कि आप अपने इस बालकको आर्षग्रन्थ पढ़ाना और इसका पचीस वर्षसे पूर्व विवाह न करना। आपने उनकी आज्ञाको शिरोधार्य किया और ऐसा ही करनेकी प्रतिज्ञा की। सर्वप्रथम आपको पं० श्रीजीपालालके साथ भेजा गया और पूज्य पं० श्रीबद्रीप्रसादजी शुक्लके द्वारा आपका यज्ञोपवीत-संस्कार कराया गया तथा उन्हींके द्वारा गायत्रीमन्त्रकी दीक्षा भी दी गयी। बादमें आपको सुप्रसिद्ध महान् विद्वान् सनातनधर्मकेसरी वेदभाष्यकार पूज्य पं० श्रीभीमसेनशर्मा

शास्त्रीजी महाराजके पास इटावा विद्याध्ययन करने भेज दिया गया। श्रीशर्माजी महाराजसे आपने अष्टाध्यायी और महाभाष्यकी पूर्ण शिक्षा प्राप्त की। आपने पूर्णरूपेण शास्त्राध्ययन करनेके पश्चात् यह निर्णय किया कि सनातनधर्म ही एकमात्र सत्य धर्म है और सनातनधर्मकी शरणमें रहनेसे ही जीवका कल्याण हो सकता है, आजके मनमाने मनुष्यकृत पन्थ, मत, समाज, मज़हबोंके चक्करमें फँसकर सनातनधर्मसे विमुख होनेसे कोई लाभ नहीं।

आजन्म बालब्रह्मचारी रहनेकी प्रतिज्ञा

आपके पूज्य पिताजीने सोचा कि अब आप पूर्ण विद्वान् हो गये हैं और इधर आपकी अवस्था भी पचीस वर्षकी हो गयी है, इसलिये अब आपका विवाह कर देना चाहिये। चारों ओरसे सम्बन्धवाले भी आने-जाने लगे और जब आपको यह मालूम हुआ कि पिताजी विवाह-बन्धनमें बाँधकर मुझे संसारके मायाजालमें फाँसने जा रहे हैं, तब आपको बड़ा दुःख हुआ। आपने अपने पूज्य पिताजीसे स्पष्ट शब्दोंमें निवेदन किया—पूज्य पिताजी! मैं अपना विवाह नहीं कराऊँगा, मैं आजन्म नैष्ठिक बालब्रह्मचारी रहूँगा और अपना सारा जीवन गायत्रीके जपमें, भजन-पूजनमें, शास्त्राध्ययनमें, देववाणी संस्कृतविद्याका प्रचार करनेमें और सत्य-सनातनधर्मकी, वर्णाश्रमधर्मकी रक्षा करनेमें व्यतीत करूँगा। आपके मनमें सनातनधर्मकी दुर्दशा देखकर बड़ी पीड़ा हो रही थी। अतएव आपने कहा—

मैं सनातनधर्मकी रक्षा करना चाहता हूँ और सनातनधर्मकी रक्षा तभी होगी जब कि मेरे धर्मप्राण भारतके ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य बालक अपनी देववाणी संस्कृतविद्या पढ़ेंगे, अपने वेद-

शास्त्रोंका अध्ययन करेंगे, शास्त्रानुसार अपना जीवन बनायेंगे तथा ब्रह्मचारी, सदाचारी, त्यागी, तपस्वी बनेंगे। यह सब कुछ तभी होगा जब कि मैं स्वयं एक आदर्श तपस्वी बालब्रह्मचारी बनकर सच्चे रूपमें जगत्के सामने आऊँगा। तभी मैं दूसरोंपर भी अपना प्रभाव डाल सकूँगा और सच्चे रूपमें संस्कृतविद्याका प्रचार तथा सनातनधर्मकी रक्षा कर सकूँगा। जबतक कथनी और करनी एक नहीं होती, तबतक कुछ भी नहीं होता।

पूज्य पिताजीने यह बात सुनी तो बड़े ही प्रसन्न हुए, पर आप ही उनकी एकमात्र संतान थे, दूसरा कोई भाई नहीं था। इसलिये जब आपके सामने पिताजीने यह प्रश्न रखा कि आगेका वंश कैसे चलेगा, तब पं० श्रीजीवनदत्तजी महाराजने अपने पूज्य पिताजीको समझाते हुए कहा—पिताजी! यदि मैं विवाह कर लूँगा तो मुझे गृहस्थके निर्वाहके लिये वृत्तिके निमित्त विद्या-विक्रय करना पड़ेगा। सो क्या ब्राह्मणकुलमें पैदा होनेपर विद्या-विक्रय करना उचित होगा? यह सुनकर पिताजीने सहर्ष अपना आग्रह छोड़ दिया।

बरौलीके परित्यागकी घटना

आप परम त्यागी, तपस्वी, महान् विद्वान् ब्राह्मण थे और बरौली जि० अलीगढ़में रहते थे। बरौलीके राजा उस समय परम तेजस्वी क्षत्रियकुलभूषण राजा राव करणसिंहजी महाराज थे। आप उनके राजपुरोहित थे। बरौलीका आपने किस प्रकार परित्याग किया, यह घटना हमें राजा राव करणसिंहजीके दत्तकपुत्र स्वर्गीय बरौलीनरेश राव राजकुमारसिंहजी एम्०एल्०ए० ने सुनायी थी, जो इस प्रकार है—

राजा करणसिंहजी बड़े ही कट्टर सनातनधर्मी राजा थे और श्रीरामानुजसम्प्रदायके श्रीवृन्दावनके श्रीरंगाचार्यजी महाराजके शिष्य श्रीवैष्णव थे। परंतु किसी कारणवश एक बार किसी बातको लेकर उनकी पं० श्रीजीवनदत्तजीके पिता पं० श्रीरामप्रसादजीसे कुछ बातमें खटपट हो गयी। पूज्य पं० श्रीजीवनदत्तजी महाराजको अपने पूज्य पिताका अपमान सहन नहीं हुआ। उसी समय आपने बरौलीका परित्याग कर दिया और अपने पूज्य पिताजीको साथ लेकर चले गये। राजा साहबने आपसे करबद्ध क्षमा माँगी, पर आप लौटकर नहीं आये।

संवत् १९६० में आप अपने साथ अपने पूज्य पिताजीको लेकर नरवर (जिला बुलन्दशहर) चले आये। नरवर उस समय एक निर्जन स्थान था। चारों ओर घोर जंगल-ही-जंगल था। आपने उस निर्जन स्थानमें देखा कि एक टूटा-फूटा भगवान् शंकरका मन्दिर है और सामने पतितपावनी, कलिमलहारिणी, जगज्जननी श्रीगङ्गाजी बह रही हैं। बस, इसे ऋषिभूमि समझकर और पाँच छात्रोंको लेकर 'विश्वविश्वेश्वरी' पाठशाला, नरवरके नामसे पाठशाला आपने प्रारम्भ कर दी। फूसकी झोंपड़ियाँ डाल लीं और उन्हींमें रहकर इस महर्षिने घोर तपस्या, निरन्तर गायत्रीका जप, त्रिकाल संध्या, त्रिकाल श्रीगङ्गाका स्नान, ध्यान, भजन-पूजन और भगवान् शंकरका भजन-पूजन करना प्रारम्भ कर दिया। पूज्य ब्रह्मचारीजी स्वयंपाकी थे। स्वयं भोजन तैयार कर उसे भगवान्के प्रसादके रूपमें ग्रहण करते थे। न किसीसे कुछ माँगना और न किसीसे कुछ कहना। बस, श्रीभगवदिच्छासे बिना माँगे जो कुछ मिल गया, उसे स्वयं अपने हाथोंसे बनाना, भगवान्को भोग लगाकर पहले पूज्य पिताजीको भोजन कराना

और फिर जो बच गया उसे पा लेना—यह नियम हो गया। प्रात:काल ब्राह्ममुहूर्तमें उठते और शौच आदिसे निवृत्त होकर पतितपावनी श्रीगङ्गाजी महारानीके स्नानको जाते और बड़ी श्रद्धा-भक्तिसे श्रीगङ्गाजीका स्नान, पूजन, संध्या-वन्दन करके अपनी कुटियामें आकर ग्यारह बजेतक गायत्रीका जप करते, किसीसे भी नहीं बोलते। कभी यदि बोलना भी पड़ जाता तो संस्कृतमें ही बातें करते और फिर दोपहरको श्रीगङ्गा-स्नान और मध्याह्नकी संध्या करते। मन्दिरपर आकर श्रीशंकरजीका दर्शन करते और फिर अपने हाथों भोजन बनाते। दिनमें छात्रोंको पढ़ाते और संध्याको फिर स्नान-संध्या करते और रात्रिको दस बजेतक जप करते तथा महाभारतकी, श्रीमद्भागवत आदि पुराणोंकी कथाएँ सुनते। इस प्रकार इस महर्षिका सारा समय पवित्र ब्राह्मणोचित तपस्यामें व्यतीत होने लगा।

धीरे-धीरे पाँच छात्रोंसे बढ़कर पंद्रह छात्र हो गये और कुटियाँ भी बढ़ने लगीं तथा भारतके कोने-कोनेसे छात्रोंका आना प्रारम्भ हो गया। श्रीगङ्गा, गायत्री, भगवान् आशुतोष शंकरजी महाराजकी ऐसी अद्भुत कृपा हुई कि जंगलमें मङ्गल होने लगा। फूसकी कुटियोंकी जगह धीरे-धीरे पक्की कुटियाँ बनने लगीं। वेदभवन बन गया, श्रीशंकरजीका मन्दिर फिरसे बड़ा सुन्दर बन गया। सैकड़ों विद्यार्थी लम्बी-लम्बी चोटी लटकाये, गलेमें यज्ञोपवीत धारण किये और माथेपर तिलक लगाये वेदध्वनि करते, श्रीगङ्गातटपर बैठे संध्या-वन्दन करते, श्रीशंकरजीके मन्दिरपर एक साथ उच्चस्वरसे श्रीशंकरस्तोत्रका पाठ करते और रुद्रीका पाठ करते हुए सत्ययुगी दृश्य उपस्थित करने लगे। अब तो वह पाठशाला श्रीसाङ्गवेद-महाविद्यालयके नामसे भारतके

कोने-कोनेमें विख्यात हो गयी। खुर्जाके परम भक्त स्व० सेठ सूरजमलजी आपके परम भक्त बन गये और धनद्वारा विद्यालयकी सेवा करने लगे। बड़े-बड़े विद्वान् शास्त्री, आचार्योंको बुला-बुलाकर अध्यापक रखा गया। इस प्रकार विद्यालय दिनोदिन उन्नति करने लगा। बड़े-बड़े धनी, अधिकारी, राजा, महाराजा, धर्माचार्य, विद्वान् विद्यालयकी ख्याति सुनकर दर्शनार्थ आने लगे और अद्भुत सत्ययुगी दृश्य देखकर और कुटियामें बैठे घोर तपस्या करते, गायत्रीका जप करते महर्षिको देखकर प्रभावित होने लगे।

महात्माओंका शुभागमन

एक बहुत ही उच्चकोटिके महान् धुरन्धर विद्वान् परम त्यागी तपस्वी संन्यासी प्रातःस्मरणीय श्रीदण्डीस्वामी श्रीविश्वेश्वराश्रमजी महाराजने इस विद्यालयकी ख्याति सुनी और इधर पूज्यपाद ब्रह्मचारी श्रीजीवनदत्तजी महाराजने भी आपकी बड़ी प्रशंसा सुनी। पूज्य ब्रह्मचारीजी महाराजकी प्रार्थनापर आप विद्यालयमें पधारे और साक्षात् ऋषि-आश्रम देखकर यहींपर निवास करने लगे। इधर भारतकी महान् विभूति परम पूज्यपाद अनन्त श्रीस्वामी श्रीहरिहरानन्द सरस्वती श्रीकरपात्रीजी महाराज जब घर-बारका परित्याग करके घरसे निकले, तब आपने किसीसे नरवर-विद्यालयका नाम सुना। फिर क्या था, आप सीधे नरवर चले आये। आपने इस ऋषि-आश्रमकी एक कुटियामें बालब्रह्मचारी ब्राह्मणश्रेष्ठको गायत्री जप और घोर तपस्यामें तल्लीन देखा और दूसरी कुटियामें उच्चकोटिके वीतराग ब्रह्मनिष्ठ सर्वशास्त्रनिष्णात दण्डी स्वामी श्रीविश्वेश्वराश्रमजी महाराजके दर्शन किये और

चारों ओर वेदध्वनिका पवित्र गुञ्जार सुना। आपने यहीं रहकर विद्याध्ययन करने और घोर तपस्या करनेका निश्चय कर लिया। आप पूज्यपाद श्रीस्वामी विश्वेश्वराश्रमजी महाराजसे विद्याध्ययन करने लगे। आपका घोर त्याग, तपस्यामय जीवन देखकर विद्यालयकी ख्याति और भी फैल गयी। जिस विद्यालयसे पूज्य श्रीकरपात्रीजी महाराज-जैसे महापुरुष निकलें, उसकी महत्ताको कोई क्या कह या लिख सकता है? जब जगद्गुरु शंकराचार्य शृङ्गेरीपीठाधीश्वरजी महाराजको पता लगा, तब आप भी कृपाकर पधारे और चार महीने ठहरे। जगद्गुरु शंकराचार्य गोवर्धनपीठाधीश्वर, जगद्गुरु शंकराचार्य ज्योतिष्पीठाधीश्वर श्रीस्वामी श्रीकृष्णबोधाश्रमजी महाराज-जैसे बड़े-बड़े धर्माचार्य और पूज्यपाद श्रीस्वामी श्रीपूर्णानन्दतीर्थ उड़िया बाबाजी महाराज-जैसे संत महीनों आकर ठहरने लगे।

ऐतिहासिक यज्ञके यजमान

जिस समय पूज्य श्रीकरपात्रीजी महाराजने दिल्लीका ऐतिहासिक श्रीशतकुण्डी महायज्ञ कराया, तब आपको उसका यजमान बनाया गया। जिस समय आप यज्ञमें पधारे और भारतके कोने-कोनेसे वेदपाठी विद्वान् ब्राह्मणोंने आपकी ख्याति सुनी, तब सभी आपके दर्शनोंके लिये टूट पड़े। परम तपस्वी विशालकाय महान् तेजस्वी बालब्रह्मचारीको एक हाथमें कुशा लिये और दूसरेमें माला लिये गायत्रीका जप करते देखकर सबके मस्तक श्रद्धासे आपके श्रीचरणोंमें झुक गये। बड़े-बड़े अंग्रेजतक आपके दर्शन करके और वृद्धावस्थामें भी आपके इस प्रकारके महान् तेजस्वी शरीरको देखकर दंग रह गये। आप कैसे घोर तपस्वी

और तेजस्वी हैं और बड़े-बड़े संत-महात्मा आपको किस प्रकार श्रद्धाकी दृष्टिसे देखते हैं, यह हमने उस समय देखा कि जिस समय एक बार मेरठमें पूज्यपाद श्रीमज्जगद्गुरु शंकराचार्य श्रीस्वामी श्रीकृष्णबोधाश्रमजी महाराजने एक बहुत बड़ा यज्ञ कराया तथा सबसे पहले आपको सादर आमन्त्रित किया और स्पष्ट शब्दोंमें कहा कि जिस यज्ञमें ऐसे परम तपस्वी महर्षि पधारे हैं, इस यज्ञकी सफलतामें क्या संदेह है! पूज्य श्रीउड़िया बाबाजी महाराजने अपने श्रीवृन्दावनके श्रीकृष्णाश्रमके उत्सवमें जबतक आपको नहीं बुला लिया, चैन नहीं लिया।

साक्षात् दयाकी मूर्ति

आप साक्षात् दया-मूर्ति थे। किसीपर कभी क्रोध करना तो आप जानते ही नहीं थे। किसीको भी दुःखी नहीं देख सकते थे। जो भी दुखिया आपके सामने आ गया, उसीके दुःख दूर करनेका भरसक प्रयत्न करते थे। जहाँ आपने अपने आश्रमसे हजारों बड़े-बड़े शास्त्री, आचार्य, वेदपाठी बना-बनाकर निकाले, वहाँ आपने हजारों दीन-दुःखियोंको नौकरी दिलाकर, रोगियोंको मन्त्र-जप आदि करना बताकर उनकी सहायता की। हजारों, लाखों मनुष्योंको कट्टर सनातनधर्मी, परम आस्तिक, सदाचारी बनाया और हजारोंसे बीड़ी-सिगरेट, चाय-तम्बाकू, शराब, कबाब, मांस-मछली, प्याज-लहसुन, शलजम आदि छुड़ाकर उनके जीवनको पवित्र बनाया।

राजा साहबपर कृपा

आपने बरौलीके राव करणसिंहजीसे अप्रसन्न होकर बरौलीका परित्याग कर दिया था, यह बात राव करणसिंहजीके दत्तकपुत्र राव

राजकुमारसिंहजी एम्०एल्०ए० को बराबर खटका करती थी और वे चाहते थे कि महाराज हमें किसी प्रकार क्षमा करें और हमारे राजमहलमें पधारें। एक दिन वे श्रीरामानुजसम्प्रदायके पण्डित श्रीभूदेवशर्माजीके साथ श्रीमहाराजजीके पास पहुँचे और श्रीचरणोंमें जाकर बैठ गये। तदनन्तर महाराजजीसे करबद्ध प्रार्थना की कि महाराजजी! अपराध क्षमा कीजिये और किसी प्रकार महलोंमें पधारकर अपनी श्रीचरणरजसे उसे पवित्र कीजिये। महाराजजीका हृदय पिघल गया। आपने कहा— अच्छा जाओ, बरौलीमें कोई यज्ञ आदि शुभ काम करो, जिसमें हम भी आयेंगे। राजा साहबने ऐसा ही किया। उसमें ब्रह्मचारीजी महाराज पधारे। दस-बारह दिन ठहरकर खूब धार्मिक जागृति पैदा की। महाराजजीकी इस असीम कृपाको राजासाहब जीवनपर्यन्त मानते रहे।

धन छूना पाप

आप त्याग-तपस्याकी ऐसी साक्षात् मूर्ति थे कि कभी भूलकर भी रुपये-पैसेका स्पर्शतक नहीं करते थे। कोई कुछ भी दे जाय, आप उसको हाथ नहीं लगाते थे। आश्रमका दूसरा अध्यापक या विद्यार्थी ही उसे उठाता था। कई बार ऐसा भी देखा गया कि कई बड़े-बड़े सेठ आपके दर्शनार्थ आये और आपके श्रीचरणोंमें बहुत सारे रुपये रखकर चले गये, पर आपने उनकी ओर ताकातक नहीं। जब कोई आश्रमका आदमी आया, तब उसने उठाया, नहीं तो यों ही पड़े रहे। यों ही पड़े छोड़कर आप अपने जप-ध्यानमें तल्लीन हो जाते। किसीसे भी आप कभी एक पाईकी भी याचना नहीं करते थे। जो भी भगवदिच्छासे

आ गया, उसीसे निर्वाह करते थे। विद्यालयके निमित्त जो भी आता था, उसमेंसे आप अपने लिये एक पाई भी नहीं लेते थे। वह सब अध्यापकोंमें, विद्यार्थियोंमें खर्च होता था। अपने लिये जो शिष्योंसे आता था, उसीसे निर्वाह करते थे। वर्षमें जो खर्चसे बच जाता था, उस सबका भण्डारा कर विद्यार्थियोंमें वितरण कर देते थे। अगले वर्षके लिये एक पाई भी नहीं रहने देते थे।

शास्त्रानुसार श्राद्ध

आप प्रतिवर्ष शास्त्रानुसार बड़ी श्रद्धा-भक्तिसे अपने पूज्य माता-पिताका श्राद्ध किया करते थे, जिसमें बड़ी श्रद्धा-भक्तिसे ब्राह्मण विद्यार्थियोंको पूज्य मानकर उनका पूजन करके उन्हें भोजन कराते तथा उन्हें प्रसन्न करते थे। सब कार्य शास्त्रानुसार करते थे। आपने कभी यह अभिमान नहीं किया कि मैं घोर तपस्वी हूँ, मुझे अब श्राद्धादि करनेकी क्या आवश्यकता है। आप समय-समयपर सभी कार्य शास्त्रानुसार, सनातनधर्मानुसार स्वयं श्रद्धापूर्वक करते थे तथा औरोंको भी करनेको कहते थे।

भक्तका काम भगवान् बनाते हैं

श्रीसाङ्गवेदविद्यालयमें हमें एक पुराने विद्यार्थी शास्त्रीजीने अपनी आँखों-देखी एक आश्चर्यजनक सत्य घटना सुनायी, जो इस प्रकार है—

एक बार विद्यालयमें विद्यार्थियोंके लिये खाने-पीनेका कुछ सामान नहीं रहा और सामान लानेके लिये पैसा भी किसीके पास नहीं बचा था। विद्यार्थी और अध्यापक सभी भूखे थे और लगभग दस-ग्यारह बज रहे थे। पूज्य महाराजजी उस समय

पतितपावनी श्रीगङ्गाजीके परम पवित्र तटपर झोंपड़ीमें बैठे गायत्रीके जपमें तल्लीन थे। एक अध्यापकने जाकर प्रार्थना की कि श्रीमहाराजजी! आज तो विद्यालयमें अन्नका एक दाना भी नहीं है। सभी विद्यार्थी भूखे हैं, क्या किया जाय? यह सुनकर परम तपस्वी महाराजजी तनिक भी विचलित नहीं हुए और आपने श्रीमद्भगवद्गीता (९।२२)-का यह श्लोक कहा—

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्॥

और पतितपावनी श्रीगङ्गाजी महारानीकी ओर संकेत करते हुए कहा कि क्या श्रीगङ्गामाताको हमारी चिन्ता नहीं है? ऐसा कहकर ज्यों ही आप आगेको चले तो क्या देखते हैं कि श्रीगङ्गाजीमें एक नौका चली आ रही है और उसमें खाने-पीनेका कचौड़ी-पूरी, साग आदि सब सामान है। नौका आकर वहीं ठहर गयी और सब सामान ले जाकर विद्यार्थियोंको खूब छककर भोजन कराया गया। किसी भक्त सेठने यह सब सामान बिना कहे भिजवाया था। इस घटनाको देखकर सब चकित हो गये और श्रीगङ्गाजीकी कृपाको यादकर गद्‌गद हो गये।

कीर्तनके साथ शास्त्रीय कर्म भी आवश्यक

कुछ लोग भ्रमसे कहने लगे थे कि महाराजजी कीर्तनका विरोध करते हैं, पर ऐसा कहना अज्ञानताका परिचय देना है। हमारे प्रश्न करनेपर स्वयं महाराजजीने बताया था कि हम कलिकालमें संकीर्तनको एकमात्र उद्धारका मार्ग मानते हैं, पर साथ ही कीर्तनकी आड़में वर्णाश्रमधर्मका विध्वंस करना, चोटी-

जनेऊ उतार फेंकना और संध्या-वन्दन, नित्यकर्म न करना—इसे भी घोर पाप मानते हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य शास्त्रानुसार अपना यज्ञोपवीत करायें, संध्या-वन्दन करें और भगवन्नाम-संकीर्तन भी करें तो सहजहीमें कल्याण हो जाता है। सब कार्य शास्त्रानुसार, सनातनधर्मानुसार और मर्यादानुसार ही होने चाहिये, तभी कल्याण होगा। मनमानी करनेसे तो लाभके बदले हानि ही होती है। आप श्रीश्रीमारुतिनन्दन भगवान् श्रीहनुमन्तलालजी महाराजके अनन्य प्रेमी थे। नित्य श्रीहनुमान्जी महाराजके चित्रका चन्दनादिसे पूजन करते थे। आपने साठ वर्षोंतक निरन्तर गायत्रीका जप किया, त्रिकाल संध्या की, श्रीगङ्गास्नान किया और बहुत बड़ी संख्यामें बड़े-बड़े यज्ञ-अनुष्ठान और दुर्गापाठ कराये तथा हजारों बड़े-बड़े वेदपाठी, शास्त्री, आचार्य, कर्मकाण्डी विद्वान् बनाये, जो भारतके कोने-कोनेमें फैलकर सर्वत्र सनातनधर्मका प्रचार करते रहे हैं। पूज्यपाद अनन्तश्री स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज आपके ही विद्यालयकी महान् दिव्य विभूति थे।

एक ज्योतिषीद्वारा पंद्रह वर्ष पूर्व ब्रह्मलोक-प्रयाणकी तिथि बतानेकी आश्चर्यजनक सत्य घटना

आपके पास पंद्रह-बीस वर्ष पूर्व पं० श्रीरामस्वरूप नामक एक ज्योतिषी पधारे, जो त्रिकालदर्शी माने जाते थे। उन्होंने आपके सम्बन्धमें भविष्यवाणी करते हुए अपने हाथसे लिखकर दिया था कि 'आपका ब्रह्मलोक-प्रयाण चैत्र कृष्ण दशमी गुरुवार संवत् २०१२ को प्रातःकाल ८॥ बजे होगा। उस समय आपकी कुटियामें एक एकाक्ष (काना) साधु आकर आपका दर्शन करेंगे।

उनको देखते ही आप ॐका उच्चारण करके अपना शरीर छोड़ देंगे।'

एकाक्ष साधुका आना और श्रीमहाराजजीका ब्रह्मलोक-प्रयाण करना

भाद्रपद शुक्ला १४, संवत् २०१२ को अकस्मात् आपको शीतज्वर हो गया, जो फाल्गुन कृष्णा ३० तक बीच-बीचमें आता रहा। आपने किसी भी प्रकार नित्यकर्म करना नहीं छोड़ा, इसलिये दुर्बलता बहुत बढ़ गयी। बहुत-से बड़े-बड़े योग्य वैद्य बुलाये गये और उनकी औषधि चलती रही। विशेष लाभ कुछ भी नहीं हुआ और दुर्दैवविपाकसे दिनोदिन अवस्था क्षीण होती गयी। इधर त्रिकालदर्शी ज्योतिषीजी महाराजका बताया समय भी निकट आ पहुँचा। किसीको क्या पता था कि भारतके महान् संस्कृतज्ञ धुरन्धर विद्वान् सनातनधर्मके महान् सूर्यका अस्त होने जा रहा है? शरीर छोड़नेसे ठीक एक दिन पूर्व एक एकाक्ष साधु फर्रुखाबादसे नरवरके श्रीमहाराजजीकी किसीसे प्रशंसा सुनकर दर्शनोंके लिये चले और रात्रिमें नरौरा आकर ठहर गये। प्रातःकाल नरवर आकर श्रीगङ्गास्नान करके वे श्रीमहाराजजीके दर्शनोंके लिये चले। इधर श्रीमहाराजजीको गीताका दूसरा अध्याय सुनाया जा रहा था। वह पूरा हुआ। झटसे एकाक्ष साधु कुटियामें घुसे और उन्होंने ज्यों ही महाराजजीको प्रणाम किया, त्यों ही महाराजजीने उन्हें देखते ही हरिॐका उच्चारण कर ब्रह्मलोकको प्रयाण कर दिया। ठीक वही चैत्र कृष्णा दशमी गुरुवार संवत् २०१२ का प्रातःकाल ८॥ का समय था। एकाक्ष

साधुको देखनेके लिये जनता उमड़ पड़ी और उनके छायाचित्र लिये गये।

पूज्य पं० जीवनदत्तजी महाराजके ब्रह्मलोक-प्रयाणकी सूचना मिलते ही शंकराचार्य ज्योतिष्पीठाधीश्वर श्रीस्वामी कृष्णबोधाश्रमजी महाराज, पूज्यपाद स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज, शास्त्रार्थ महारथी पं० अखिलानन्द कविरत्नजी तथा अन्य अनेक धर्माचार्यों, संत-महात्माओं तथा विद्वानोंने नरवर पहुँचकर उन्हें श्रद्धाञ्जलि अर्पित की। बादमें प्रसिद्ध पत्रकार पं० बनारसीदास चतुर्वेदीजीके सम्पादनमें उनका स्मृति-ग्रन्थ भी प्रकाशित किया गया।

संकीर्तनके बलपर गङ्गाजीका बाँध बनवा दिया

[आदर्श संत श्रीहरिबाबाजीके जीवनकी अनूठी घटना]

स्वनामधन्य प्रात:स्मरणीय श्रीहरिबाबाका जन्म होशियारपुर (पंजाब) जनपदके मेंगखाला गाँवमें श्रीप्रतापसिंहजीकी धर्मपत्नीकी कोखसे संवत् १९४१ वि०में फाल्गुन शुक्ल चतुर्दशीको हुआ था। आपका नाम दीवान सिंह रखा गया। चार वर्षकी ही अवस्थामें आपको पूज्य गुरुदेव श्रीसंत सच्चिदानन्दजी महाराजका आशीर्वाद प्राप्त हो चुका था; फिर असार संसारके मायाजालमें आप कैसे फँसते! आपकी माध्यमिक शिक्षा होशियारपुरमें पूर्ण हुई तो पिताने डॉक्टरी शिक्षाके लिये लाहौर कॉलेजमें प्रविष्ट करा दिया, किंतु आप तो काम-क्रोधादिक व्याधियोंपर विजय प्राप्तकर सहस्त्रों नर-नारियोंको श्रीभगवन्नामामृतका पान कराकर उनका परम मङ्गल-सम्पादन करने आये थे, फिर स्वाभाविक ही विदेशी वेश-भूषा और विदेशी भाषा आपसे छूट गयी। माता-पिताने विवाहकी लालसा प्रकट की तो आपने स्पष्ट शब्दोंमें अस्वीकार करते हुए कह भी दिया—'मैं संसारके झंझटोंमें फँसनेके लिये नहीं आया हूँ।'

भगवत्प्रेमकी तन्मयताके कारण आपने घर छोड़ दिया और अपने गुरुके आश्रमपर पहुँचे। आग्रह करनेपर भी जब गुरुदेवने

संन्यासकी दीक्षा नहीं दी तो आप वहाँसे सीधे भगवान् विश्वनाथकी पुरी काशी पहुँचे और वहाँ पुण्यतोया भगवती भागीरथीके पावन तटपर कुछ दिनोंतक एकान्तवास किया। कुछ ही दिनोंमें अन्तरकी विरक्ति बाह्यरूपमें वस्त्रोंपर प्रकट हो गयी। जब आप पुनः अपने गुरुचरणोंमें उपस्थित हुए तो उन्होंने अपने परम विरक्त शिष्यको 'स्वतःप्रकाश' नामसे सम्बोधित किया और आगे चलकर आपका यही नाम प्रसिद्ध भी हो गया, किंतु कुछ दिनोंके पश्चात् श्रीहरिका अखण्ड यशोगान करनेके कारण श्रीहरिबाबाके नामसे आपकी ख्याति हो गयी और अबतक उन्हें सभी लोग इसी नामसे जानते हैं। आपने कुछ दिनोंके अनन्तर गुरु-आश्रम छोड़ दिया और स्वतन्त्ररूपसे विचरण करने लगे।

आप पतितपावनी श्रीगङ्गाजीके तटपर घूमते हुए अनूपशहर पहुँचे और वहाँ श्रीस्वामी अच्युतमुनिजी महाराजकी सेवामें रहकर उनसे वेदान्त-ग्रन्थोंका अध्ययन करने लगे। आप एक बार उनके साथ वर्धा गये। वहाँ छत्रपति श्रीशिवाजीके गुरु श्रीसमर्थ गुरु रामदासजी महाराजकी परम्पराका श्रीहनुमानगढ़ी नामक एक स्थान था। जहाँ श्रीसमर्थगुरु रामदासजी महाराजके समयसे ही ***'श्रीराम जय राम जय जय राम'*** इस महामन्त्रका अखण्ड कीर्तन चल रहा था। आप उसमें सम्मिलित होने लगे और श्रीभगवन्नामामृतके पानसे आपका जीवन ही पलट गया। आपका मन वेदान्तसे हटकर भगवद्भक्तिमें लग गया और आपके हृद्देशपर श्रीभगवन्नामका एकच्छत्र साम्राज्य स्थापित हो गया।

वर्धासे आप पुनः अनूपशहर लौटे तो श्रीगङ्गाजीके तटपर विचरण करनेवाले अनेक संत-महात्माओंके दर्शनका लाभ उठाने लगे। कुछ ही समय बाद वहीं आपकी पूज्यपाद श्रीउड़ियाबाबासे

भेंट हुई। आप दोनों महात्माओंमें अत्यधिक प्रेम हो गया। फलस्वरूप आप दोनों प्रायः साथ ही रहा करते थे। इन दोनों महात्माओंकी ख्याति बढ़ती गयी और दूर-दूरसे भक्त उनके दर्शनके लिये आकर सत्सङ्ग-भजन एवं संकीर्तनसे लाभ उठाने लगे। समयके साथ-साथ श्रीहरिबाबाका भारतके अच्छे-अच्छे महात्माओंसे परिचय और प्रेम बढ़ने लगा।

श्रीहरिबाबा श्रीश्रीचैतन्य महाप्रभुके पदचिह्नोंपर चलनेवाले श्रीभगवन्नामप्रेमी महात्मा तो थे ही, दीन-दुःखियोंका कष्ट देखकर आप अधीर हो उठते थे और प्राणपणसे उनके कष्टनिवारणके लिये प्रयत्नशील हो जाते थे। एक बारकी बात है। आप बदायूँ जिलेके गवाँ गाँवके पास गङ्गातटपर पहुँचे। वर्षाके दिन थे। श्रीगङ्गाजीका जल समुद्रकी भाँति फैला हुआ था। किसानोंकी सहस्रों एकड़ भूमिकी फसल डूब गयी थी, कितने ही गाय-बैल बह गये थे। वहाँके निवासियोंके मनमें दुःख और चेहरेपर उदासी थी। बाबाने वहाँ बाँध बँधवाकर सबकी विपत्ति दूर करनेका निश्चय किया।

उस समय अंग्रेजोंका शासन था। बाबाने सरकारसे प्रार्थना की; किंतु लाखों रुपयेका व्यय बताकर सरकारने बात टाल दी, पर बाबा निराश होनेवाले नहीं थे। बड़े ही साहसी और कर्मठ थे। 'हरिबोल'— श्रीभगवन्नामका घोषकर बाबाने स्वयं फावड़ा उठाया और टोकरी ली। फिर तो क्या कहना था, सहस्रों स्त्री-पुरुष फावड़े और टोकरियाँ ले बाबाके साथ बाँध बाँधनेके लिये मिट्टी फेंकने लगे। यह संख्या उत्तरोत्तर बढ़ती गयी तथा 'हरिबोल', 'हरिबोल'के सामूहिक उच्च घोषके साथ बाँध तैयार होने लगा। कुछ समय बाद तो कितने ही इंजीनियरोंने

स्वेच्छापूर्वक उक्त बाँधनिर्माणके लिये अपनी निःशुल्क सेवाएँ समर्पित कर दीं। बाँध तैयार होता और श्रीभगवन्नामका कीर्तन होता जाता। इस प्रकार वर्षाके पूर्व ही उक्त बाँध तैयार हो गया। मनुष्य ही नहीं, पशुओंका भी कष्ट मिटा। कहते हैं, इस बाँधके निर्माणमें दीन-दुःखी, रोगी, लँगड़े-लूले आदि जिसने 'हरिबोल' बोलते हुए मिट्टी फेंकी, उन सबकी कामनाएँ पूरी हुईं और सहस्रों नर-नारियोंका 'हरिबोल', 'हरिबोल'की ध्वनि करते हुए श्रमदानका दृश्य भी अभूतपूर्व था, जो कभी कहीं देखनेमें नहीं आया। हरिबाबा सबसे आगे सिरपर मिट्टीकी टोकरी रखे दौड़ते थे और उच्चस्वरसे बोलते थे—'हरिबोल, हरिबोल।' उसी दयालु, कर्मठ एवं भगवन्नामके उपासक संतके नामपर उक्त बाँधका नाम पड़ा 'हरिबाबाका बाँध'।

बाँध निर्मित हो जानेपर बाबाने वहीं विशाल संकीर्तनभवन एवं संतोंके लिये कुटियोंका निर्माण कराया। कई मन्दिर भी बनवाये। उक्त पवित्र भूमिपर बाबाने अनेक महोत्सव तथा कथा-कीर्तन एवं सत्सङ्गका आयोजन किया। रासलीला एवं रामलीला होने लगी। 'हरिबोल'का कीर्तन एवं नगारेकी ध्वनि दूरतक फैलने लगी। उक्त स्थल परम पावन तीर्थ बन गया और दूर-दूरसे सहस्राधिक व्यक्ति प्रतिदिन आ-आकर स्नान, मन्दिरमें पूजन, संतदर्शन एवं कथा-कीर्तनसे लाभान्वित होने लगे। बाबाने प्रायः सभी प्रख्यात महात्माओं एवं कथावाचकोंको वहाँ आमन्त्रित किया।

उस समय वहाँका बृहत् जनसमुदाय गाँजा-भाँग और शराब ही नहीं, अण्डे तथा मांस-मछली—सभी कुछ सेवन करता था। इतना ही नहीं, चोरी आदि अपकर्म भी करता था। बाबा उनके

चारित्रिक पतनसे बड़े दुःखी थे। उन्होंने उन्हें समझाया। कथा-कीर्तन एवं सत्संगमें आनेसे कितने ही लोगोंके दुर्व्यसन दूर हो गये, किंतु जब बाबाके किसी भी प्रयत्नसे कुछ लोगोंने मांस-मदिराका त्याग नहीं किया, तब बाबा उनके लिये बड़े दुःखी और चिन्तित हुए। कोई मार्ग न देखकर वे अनशन कर बैठे। इस प्रकार उन लोगोंको विवशतः दुर्व्यसनसे मुक्त होना पड़ा। इस तरह प्रत्येक रीतिसे श्रीहरिबाबा जनता-जनार्दनके सुख ही नहीं, लौकिक एवं पारलौकिक अभ्युदयके लिये भी निरन्तर सजग और सचेष्ट रहते थे। वे दीन-दुःखियोंके कष्टनिवारणके लिये सदा तत्पर रहते थे।

सनातनधर्ममें श्रीहरिबाबाकी अद्भुत निष्ठा थी। वे श्रीमन्महाप्रभु श्रीचैतन्यदेवको भगवान् श्रीराधाकृष्णका अवतार मानते तथा श्रीमहाप्रभुकी लीला भी कराया करते। आपके यहाँ जब भी रासलीला या रामलीला होती, आप अत्यन्त श्रद्धासे श्रीठाकुरजीको पुष्पहार पहनाते एवं चरणोंमें साष्टाङ्ग दण्डवत् करते और जबतक रासलीला या रामलीला होती, आप खड़े-खड़े बड़ी ही श्रद्धा एवं प्रेमसे स्वरूपपर चँवर डुलाया करते—पंखा झला करते।

संकीर्तन तो आपका बड़ा ही सुखद होता। हाथसे घड़ियाल बजाते हुए भगवन्नामका कीर्तन और नृत्य करते तो सभी कीर्तनकार आनन्दोल्लाससे पूर्ण हो जाते। बाबाका पूजोपकरणोंके साथ कीर्तन करते हुए मैया गङ्गाके दुग्ध-स्नान, भक्तिभावपूर्ण पूजन तथा आरतीके सुखद दृश्यकी कल्पना बस मन ही कर सकता है।

ग्रामवासियोंपर कोई विपत्ति आ जाती या कोई अपना दुखड़ा रोता तो बाबा कहते—'भैया! तुम्हारे किसी पापसे गङ्गामैया

प्रसन्न नहीं हैं। अतएव अबसे तुम पाप न करनेकी प्रतिज्ञा कर उन्हें संतुष्ट कर लो। माता गङ्गाका पूजन करो एवं उन्हें गोदुग्धकी धार चढ़ाओ। माँ प्रसन्न हो जायँगी और तुम्हारी विपत्ति भी दूर हो जायगी।

पुन्य एक जग महुँ नहिं दूजा। मन क्रम बचन बिप्र पद पूजा॥

मानसकी इस अर्द्धालीका आप अक्षरशः पालन करते। ब्राह्मणोंकी पूजा एवं उन्हें आदर-सम्मान दिये बिना बाबा रह नहीं सकते थे। ***'बिप्र पद पूजा'***-जैसे उनका स्वभाव ही था। ब्राह्मण कथावाचककी पूजा कर आप सदा ही व्यासासनसे नीचे बैठकर बड़ी श्रद्धा और भक्तिसे कथा तथा उपदेश श्रवण करते। मान-सम्मान एवं प्रतिष्ठासे दूर रहकर दूसरोंको सम्मान देते। आपकी दृष्टिमें कोई छोटा-बड़ा नहीं था। फिर भी आप बड़े कहलानेवाले व्यक्तियोंसे अधिक-से-अधिक बचनेका प्रयत्न करते। उनकी ओर नेत्र भी नहीं उठाते।

कामिनी और कञ्चनसे दूर रहनेवाले बाबा जहाँ इतने सरल, सदय एवं भगवद्भक्त थे, वहीं वे दम्भ एवं पाखण्ड नहीं सहते थे। चेला-चेली बनाना भी उन्हें पसंद नहीं था। एक स्त्रीके दीक्षा लेनेकी प्रार्थनापर आपने तुरंत उत्तर दिया—'माँ, मुझे ही पता नहीं कि मेरा कल्याण होगा या नहीं? फिर मैं तुम्हारा या अन्य किसीका दायित्व किस प्रकार ले सकता हूँ।'

बाबा श्रीकृष्ण, श्रीराम, श्रीदुर्गा और गणेश आदि विभिन्न देवताओंमें भेद नहीं मानते थे। वे सबका पूजन एवं सबकी स्तुति करते। सबमें एक ही परब्रह्म परमेश्वरको मानते थे। यद्यपि वे श्रीचैतन्य महाप्रभुको विशेष रूपसे मानते थे और इससे श्रीकृष्ण-नाम-संकीर्तन एवं रासलीला आदि करते-कराते रहते। आप

रहते तो थे श्रीकृष्णाश्रम वृन्दावनमें, किंतु होशियारपुरमें अपने गुरुस्थानमें भी एक सुन्दर मन्दिर बनवाया था और उसमें बड़े ही आदर एवं सम्मानपूर्वक गुरुग्रन्थसाहबकी स्थापना करायी थी। आप वहाँ भी ठहरा करते थे।

अपने अन्तिम समयमें बाबा रुग्ण रहने लगे थे। चिकित्साके सभी प्रयत्न विफल होते गये। दिनाङ्क ३१ दिसम्बर, १९६९ ई० को श्रीआनन्दमयी माँ आपको अपने साथ बाबा विश्वनाथकी मोक्ष-दायिनी पुरी काशीमें अपने आश्रममें ले गयीं और वहीं आपने दिनांक ३ जनवरी सन् १९७० की रात्रिमें १ बजकर ४० मिनटपर श्रीगोलोकधामकी यात्रा की। उस समय वहाँ श्रीभगवन्नामकीर्तन हो रहा था।
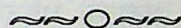
ग्रामीणोंको दुर्व्यसनोंसे मुक्त हो शास्त्रानुसार चलनेकी प्रेरणा मिली

[शंकराचार्य स्वामी श्रीकृष्णबोधाश्रमजी महाराजके जीवनकी घटना]

सन् १९३० के आस-पासकी बात है। प्राचीन तीर्थ गढ़मुक्तेश्वर (गाजियाबाद)-के गङ्गातटपर स्थित एक गाँवमें एक विरक्त दण्डी संन्यासी आये। गाँवके बाहर स्थित शिवमन्दिरमें उन्होंने साधना शुरू कर दी।

गाँववाले रातके समय चौपालपर इकट्ठा हुए तो एकने बताया कि एक-दो दिनसे कोई महात्मा मन्दिरमें ठहरे हुए हैं। लगता है, किसीने उन्हें भोजन नहीं पहुँचाया। दस-बारह ग्रामीण उठे और मन्दिरकी ओर चल दिये।

मन्दिर पहुँचकर उन्होंने दण्डी संन्यासीका चरण-स्पर्श करके प्रणाम किया और बैठ गये। एक वृद्ध ब्राह्मणने कहा—बाबा! आप गाँवमें कब पधारे?

'हम कल यहाँ पहुँचे थे'—स्वामीजीने बतलाया।

'मालूम हुआ कि आपने कलसे भोजन नहीं किया है'—वृद्ध ब्राह्मणने जिज्ञासावश पूछा।

'कल और आज हमारा एकादशीव्रत था। इसलिये भोजन तो क्या हमने जल भी ग्रहण नहीं किया'—संतने जवाब दिया।

'महाराज! कल हमारे यहाँ आप भोजन ग्रहण करनेकी कृपा करें'—वृद्ध ब्राह्मणने प्रार्थना की।

'भोजन हम कुछ शर्तोंके साथ करते हैं'—स्वामीजीने कहा।

'क्या शर्त है, बताइये'—वृद्धने पूछा।

'क्या आपके घर शराब या तम्बाकू तो नहीं पी जाती?'—संन्यासीने पूछा।

'महाराज! हुक्का तो हम पीते हैं, किंतु शराब हमारे घर नहीं पी जाती'—उन्होंने उत्तर दिया।

'तब तो मैं लाचार हूँ।' संन्यासीने कहा।

दूसरा ग्रामीण सामने आया, बोला—'महाराज! मैं ब्राह्मण हूँ, मेरे घर न हुक्का पीया जाता है, न शराब। कृपा कर मेरे घर तो भोजन कर लेंगे।'

'क्या तुम संध्या करते हो तथा यज्ञोपवीत पहनते हो?'—स्वामीजीने पूछा।

'नहीं महाराज! यज्ञोपवीत तो नहीं है'—उत्तर मिला।

'तो हम तुम्हारे यहाँ भी भोजन नहीं कर सकते।'

इस प्रकार कोई भी ग्रामीण संन्यासीकी शर्त पूरी नहीं कर पाया। अगले दिन गाँवमें पंचायत हुई। वृद्धने गाँववालोंसे कहा—'भाई! गाँवमें एक तेजस्वी संन्यासी आये हुए हैं और बड़े दुःखका विषय है कि गाँवमें एक भी घर ऐसा नहीं निकला, जहाँ शराब-तम्बाकूका सेवन न होता हो तथा पूर्णरूपसे धर्मशास्त्रोंके अनुसार जीवन-निर्वाह हो जहाँ कि स्वामीजी भोजन कर सकें। सभी मिलकर हुक्के उठाकर बाहर फेंक दो। यज्ञोपवीत धारण करके संध्या-वन्दन करनेका नियम बनाओ। कम-से-कम अपने परिवारको इतना पवित्र बना लो कि कोई सच्चा साधु-संन्यासी गाँवमें आये तो वह भूखा तो न रहे, हमारे घर भोजन तो कर सके।'

देखते-ही-देखते हुक्के और शराबकी बोतलें घरोंसे बाहर

फेंक दी गयीं। सभी मिलकर मन्दिर गये—स्वामीजीके सामने संकल्प लिया कि भविष्यमें इस गाँवमें शराब-तम्बाकू पीनेवाला नहीं मिलेगा। आज आप हमें यज्ञोपवीत धारण करायें। हम संकल्प लेते हैं—'नित्य संध्या करेंगे, गायत्रीमन्त्रका जप करेंगे। धर्मशास्त्रानुसार जीवन जीयेंगे।'

ये तेजस्वी संन्यासी थे—स्वामी श्रीकृष्णबोधाश्रमजी महाराज, जो आगे चलकर ज्योतिर्मठके शंकराचार्य बने। उन्होंने मेरठमण्डलके गाँव-गाँवमें पहुँचकर हजारों ग्रामीणोंको मांस-मदिरा और तम्बाकू आदिके दुर्व्यसनोंसे मुक्त कराया तथा धर्मशास्त्रानुसार सादा जीवन जीनेकी प्रेरणा दी।
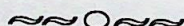
सिद्ध संतोंकी चमत्कारी घटनाएँ

श्रीमोरारजी देसाईकी अनुभूतिके अंश

सुप्रसिद्ध गांधीवादी नेता एवं भारतके पूर्व प्रधानमन्त्री श्रीमोरारजी देसाईने श्रीरामचरितमानसकी बातोंको अक्षर-अक्षर सत्य मानकर इसकी पुष्टिमें अपनी स्वयंकी आँखों-देखी सत्य घटनाओंका अपने एक लेखमें जो कुछ वर्णन किया है, उसे यहाँपर ज्यों-का-त्यों पाठकोंके सामने रखा जा रहा है। श्रीमोरारजी देसाई अंधविश्वासी नहीं थे। रामायण, श्रीराम एवं श्रीकृष्णकी बातोंको उन्होंने सत्य माना है। भगवान् श्रीरामको उन्होंने साक्षात् परमात्माका अवतार स्वीकार किया है।

श्रीरामचरितमानससम्बन्धी एक लेखमें उन्होंने लिखा है कि श्रीतुलसीदासजीने उस समयके विज्ञानका जिस प्रकारका वर्णन किया है, उसे देखनेसे ऐसा लगता है कि उस समय जो विज्ञान था, वहाँतक आजका विज्ञान नहीं पहुँच पाया है। आजके युगमें आठों सिद्धियोंकी बातोंको शायद आप नहीं मानें; पर मैंने अपनी आँखोंसे ऐसी घटनाएँ देखी हैं, जिनमेंसे कुछ घटनाओंका वर्णन यहाँ दिया जा रहा है—

[१] सवालोंके जवाब

बम्बईमें सन् १९५६ में एक कन्नड़ भाई मेरे पास आये तथा बोले कि आप तीन सवाल चाहे जिस भाषामें लिखिये, मैं बिना पढ़े उनके जवाब उसी भाषामें दूँगा। मैंने एक कागजपर गुजराती भाषामें तीन सवाल दूर बैठकर लिखे और कागजको उलटकर

रख दिया। उन्होंने तीनों प्रश्नोंके उत्तर एक कागजपर लिखकर मुझे दे दिये। मेरे सवाल गुजरातीमें थे; अतः उत्तर भी गुजरातीमें ही लिखे थे। सभी उत्तर सही थे।

मैंने पूछा—भाई, तुमने यह चमत्कारिक विद्या कहाँसे सीखी? उन्होंने बताया—परीक्षामें फेल होनेपर कुएँमें गिरकर आत्महत्या करने गया था। वहाँपर एक साधुने मेरा हाथ पकड़कर मुझे बचा लिया और मुझे अपना शिष्य बना लिया। एक बार उन्होंने मुझसे कहा कि चल, हिमालय चलते हैं। उन्होंने मेरी आँखोंपर पट्टी बाँध दी और दो मिनट बाद पट्टी खोली तो मैं हिमालयपर था। वहाँ उन्होंने मुझे अनेक विद्याएँ सिखायीं। एक दिन मैंने उन साधु महाराजसे कहा कि मुझे घर जाना है। साधुने मेरी आँखोंपर पट्टी बाँध दी और दो मिनट बाद मैं अपने घरपर पहुँच गया।

[२] मनचाही सुगन्ध प्रकट कर दी

महाराष्ट्रमें बिहारके एक सेक्रेटरी थे। वे मेरे घनिष्ठ परिचित थे। वे एक ऐसे सिद्ध संतके शिष्य थे, जो पानीके ऊपर चल सकते थे। एक बार वे अपने लड़केको लेकर उन महात्माके पास गये। लड़केने उन साधुसे कहा—'मैंने सुना है कि आप अनेक प्रकारके पदार्थ और इत्र पैदा करते हैं।' साधुने कहा—तुम्हें कौन-सा इत्र चाहिये। लड़केने कहा कि गुलाबका इत्र। साधुने कहा कि इस कमरेसे दो मिनटके लिये बाहर जाओ। साधुने दरवाजा बंद कर लिया। दो मिनट बाद लड़का अंदर कमरेमें आया तो वहाँ गुलाबके इत्रकी सुगन्ध चारों ओर फैली हुई थी। चार-पाँच मिनटतक उसके शरीरपर इत्र-ही-इत्र फैला दिखायी दिया।

इस चमत्कारको देखनेके बाद लड़केने कहा कि अब आप पानीपर चलकर दिखाइये। क्या मनुष्यमें इतनी शक्ति है कि वह अपने वजनको इतना हलका कर ले कि पानीपर चलने लगे।

साधुने लड़केसे कहा—जरा अपना हाथ सीधा करो। लड़केने अपना हाथ सीधा किया, तब वे साधु उसपर चढ़ गये। उसे पता भी न चला, हाथपर वजन भी नहीं लगा। यह देखकर उन आई०सी०एस० भाई (सेक्रेटरी)-ने उनसे कहा—जरा मेरे हाथपर भी चढ़िये न। साधुने उनके हाथपर भी यही प्रयोग किया। यदि इस शक्तिको हम प्राप्त कर सकें तो विज्ञानमें क्या रखा है!

श्रीमोरारजी देसाईद्वारा देखी तथा लिखी गयी सिद्धिकी उपर्युक्त अनूठी घटनाओंको पढ़कर यही धारणा बनती है कि शास्त्रों, पुराणों, रामायण, महाभारत आदिमें आयी चमत्कारिक घटनाएँ सर्वथा सत्य हैं।

~~~o~~~
~~~

भगवान् श्रीकृष्णके अनन्य प्रेमी कुछ गैर हिन्दू भक्तजन

भगवान् श्रीकृष्ण, श्रीमद्भागवत तथा श्रीमद्भगवद्गीताके दिव्य प्रेमतत्त्वने हिन्दुओंको ही नहीं, अनेक अंग्रेजों तथा मुसलमानोंको भी प्रभावित कर उन्हें श्रीकृष्ण-प्रेममें आबद्ध कर लिया है। ऐसे ही अनेक विदेशी भगवत्प्रेमी भक्तजनोंके पावन चरित्रोंमेंसे कुछको यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है—

[१] श्रीरोनाल्ड निक्सन बने श्रीकृष्णप्रेम-भिखारी

ब्रिटेनमें जन्मे श्रीरोनाल्ड हेनरी निक्सन अपने देशकी सेनामें भर्ती हुए थे। उन्होंने युद्धमें भाग लेते समय अनुभव किया कि मानव-जीवनका लक्ष्य आध्यात्मिक उन्नतिमें ही निहित है। उसे भौतिकवादी वस्तुओंकी उपलब्धिमें लगाना कोरी मूर्खता ही है। युद्ध तथा हिंसासे ऊबकर वे भगवान् बुद्धके दर्शनकी ओर उन्मुख हुए। बादमें श्रीमद्भगवद्गीताका अध्ययन कर उन्होंने अपना समस्त जीवन श्रीराधा-कृष्णकी भक्ति तथा वैष्णवधर्मके प्रचार-प्रसारके लिये समर्पण कर दिया। सुविख्यात शिक्षाविद् डॉ० ज्ञानेन्द्रनाथ चक्रवर्ती इंग्लैण्ड गये हुए थे। वहीं रोनाल्ड निक्सनकी उनसे भेंट हुई। श्रीचक्रवर्तीके परामर्शपर वे अपना देश छोड़कर भारत आ गये। कुछ दिन लखनऊमें श्रीचक्रवर्तीके साथ रहे। बादमें महामना पं० मदनमोहन मालवीयजी महाराजने उन्हें काशी हिन्दू विश्वविद्यालयमें अध्यापक पदपर मनोनीत कर दिया।

श्रीज्ञानेन्द्रनाथ चक्रवर्तीकी धर्मपत्नी मोनिकादेवी जो आगे चलकर यशोदामाईके नामसे विख्यात हुईं, परम भागवत विदुषी महिला थीं। श्रीरोनाल्ड निक्सनने उनके पावन सांनिध्यमें रहकर भगवान् श्रीकृष्ण-राधाजीके दिव्यातिदिव्य प्रेमकी अनुभूति प्राप्त की। उन्होंने यशोदामाईको अपना गुरु बनाया तथा उनसे दीक्षा ली। यशोदामाईने रोनाल्ड निक्सनको 'श्रीकृष्णप्रेम-भिखारी' नाम दिया।

वे जिन दिनों काशी हिन्दू विश्वविद्यालयमें अध्यापन-कार्य करते थे (संवत् १९८५ में), उन दिनों 'कल्याण' के 'भक्ताङ्क' विशेषाङ्कके लिये सामग्री-संकलन करते समय पूज्य भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दारसे उनकी काशीमें भेंट हुई। उन्होंने भाईजीको 'ज्ञान और भक्ति' शीर्षकसे एक सुन्दर लेख विशेषाङ्कके लिये लिखकर दिया। भाईजीने उस समय यह स्वीकारा था कि श्रीकृष्णप्रेमजीको श्रीमद्भगवद्गीताका गहन अध्ययन है।

श्रीकृष्णप्रेमजीने गीताका अंग्रेजीमें अनुवाद किया। श्रीमद्भागवतमें वर्णित भगवान्‌की बाल-लीलाओंका अलगसे अनुवाद किया। वे सिरपर लम्बी चोटी रखते थे और माथेपर वैष्णव तिलक लगाते थे। गलेमें सोनेकी एक डिबियामें गीताजीकी छोटी-सी प्रति श्रद्धा-भावसे धारण किये रहते थे।

श्रीकृष्णप्रेमजीने अपनी गुरु यशोदामाईके साथ श्रीवृन्दावनधाममें रहकर बहुत समयतक उपासना-साधना की तथा श्रीमन्माध्व-गोडेश्वराचार्य गोस्वामी बालकृष्णजी महाराजके श्रीचरणोंमें बैठकर धर्मशास्त्रोंका अध्ययन किया।

बादमें उन्होंने अलमोड़ा जिलेके मीरतोला नामक गाँवमें एक

सुन्दर आश्रमकी स्थापना की। उसे 'उत्तर वृन्दावन' नाम दिया। इस आश्रममें श्रीराधा-कृष्णका सुन्दर मन्दिर बनवाया तथा एक आयुर्वेदिक चिकित्सालय एवं गोशालाकी स्थापना की। अनेक अंग्रेज भक्त भी वहाँ वैष्णव-धर्मकी दीक्षा लेकर विरक्त जीवन बिताने आ गये थे। वे अपने हाथोंसे भगवान् श्रीबालकृष्ण और गायोंकी सेवा करते थे। कुष्ठरोगियोंकी अपने हाथोंसे सेवा करते थे। शेष समय शास्त्राध्ययन तथा लेखन-कार्यमें बिताते थे। जब वे हाथोंमें मंजीरा लेकर भगवान्‌के प्रेममें निमग्न हो संकीर्तन और नृत्य करते तो अलमोड़ा-क्षेत्रका यह स्थल साक्षात् वृन्दावनका रूप धारण कर लेता था।

समय-समयपर हमें श्रीकृष्णप्रेमजीके दर्शनका, उनके संस्मरण सुननेका परम सौभाग्य प्राप्त होता रहता था। वे श्रीउड़ियाबाबाजी महाराज और श्रीहरिबाबाजी महाराज्-जैसे महान् संतोंके प्रति अगाध श्रद्धा-भावना रखते थे। महामना पं० मदनमोहन मालवीयजी महाराज श्रीकृष्णप्रेमकी निश्छल भक्ति-भावना तथा विद्वत्तासे बहुत प्रभावित थे। श्रीकृष्णप्रेमजीने 'योग ऑफ भगवद्गीता', 'योग ऑफ कठोपनिषद्' तथा 'इण्डियन फिलॉसफी'-जैसे प्रेरक ग्रन्थ लिखे। भगवान् श्रीकृष्णकी उपासना-साधना करते-करते नवम्बर १९६५ ई० में वे कृष्णलीलालीन हो गये।

एक बार संसद्-सदस्य श्रीनिर्मलचन्द्र चटर्जी, गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त श्रीदिग्विजयनाथजी तथा संसद्-सदस्य श्रीविशनचन्द्रजी सेठ गरमियोंमें भ्रमणार्थ अलमोड़ा, नैनीताल गये। श्रीचटर्जी उनके लिखे गीताके अंग्रेजी भाष्यसे बहुत प्रभावित थे। तीनों अलमोड़ासे मीरतोला-स्थित उनके आश्रम-दर्शनार्थ जा पहुँचे।

'श्रीकृष्ण-प्रेम-भिखारी' (रोनाल्ड निक्सन)-के अंग्रेज साथीने उन लोगोंको बताया—'महाराज भोजन कर रहे हैं, आप कुछ देर बैठिये, वे कमरेसे बाहर आनेवाले हैं।' कुछ ही मिनट बाद वे बाहर आये तो श्रीचटर्जीने प्रणाम करनेके बाद कहा—'हमलोग कुछ देर पहले यहाँ पहुँचे तो आप 'खाना' खा रहे थे।'

यह सुनते ही 'श्रीकृष्ण-प्रेम-भिखारी' गम्भीर होकर बोले—'मिस्टर चटर्जी, हम 'खाना' नहीं खाता, जब अमरीकामें था तब खाने-पीनेमें लगा रहता था, अब तो हम भगवान् श्रीकृष्णका भोग लगा 'प्रसाद' ग्रहण करता है।'

एक विदेशी श्रीकृष्ण-भक्तके ये शब्द सुनकर तीनों समझ गये कि 'रोनाल्ड निक्सन' से 'श्रीकृष्ण-प्रेम-भिखारी' बने इस विदेशीका अन्तःकरण पूरी तरह भारतीयताके रंगमें, भक्तिके रंगमें सराबोर हो उठा है।

[२] श्रीकृष्णभक्त बहन रेहाना तैय्यबजी

मैंने गांधीजीकी सुप्रसिद्ध शिष्या एवं विख्यात देशभक्त अब्बास तैय्यबजीकी सुपुत्री स्व० बहन कुमारी श्रीरेहाना तैय्यबजीकी श्रीकृष्ण-भक्तिके विषयमें बड़ी चर्चा सुनी थी और यह प्रसिद्धि भी सुनी थी कि वे इस युगकी साक्षात् मीरा हैं। हमारा मन बरबस उनके दर्शनके लिये लालायित हो उठा। हमने उन्हें एक पत्र लिखा कि हम आपसे भेंट करना चाहते हैं। इसपर बहन रेहानाजीने मुझे १२ जून सन् १९६२ को दिनके ११-३० बजेसे १२-३० बजे मध्याह्नतकका समय दे दिया।

मैं अपने पुत्र शिवकुमार गोयलको लेकर पिलखुवासे दिल्ली-स्थित सुविख्यात गांधीवादी विद्वान् आचार्य काका

साहब कालेलकरके निवासस्थानपर जा पहुँचा और ११ बजेसे लगभग आधा घंटेतक हम काका साहबसे विभिन्न विषयोंपर चर्चा करते रहे।

श्रीकृष्ण-भक्तिका अद्भुत दृश्य

निश्चित समय ठीक ११-३० बजे हम श्रीरेहाना बहनके कमरेमें प्रविष्ट हुए। सामने एक लकड़ीकी चौकीपर बहन रेहानाजी बैठी हुई थीं और उनके समक्ष थी भगवान् श्रीकृष्णकी एक बड़ी ही मनमोहिनी प्रतिमा, जिसके ऊपर उन्होंने सुगन्धित पुष्प भी चढ़ा रखे थे। पासमें पूजाकी घंटी रखी हुई थी। भगवान् श्रीकृष्णकी मूर्तिके समीप ही वे बैठी हुई थीं। पासमें श्रीमद्भगवद्गीता, उपनिषद् आदि ग्रन्थ रखे हुए थे। एक अहिन्दू-परिवारमें जन्म लेकर भी उन्हें भगवान् श्रीकृष्णकी उपासना, सर्वोच्च हिन्दू-धर्मग्रन्थोंका स्वाध्याय और भगवान् श्रीकृष्णकी मूर्तिकी पूजा करते देखकर हमारा सिर उनके चरणोंमें झुक गया।

हम अपने साथ कुछ फल ले गये थे। हमने उन्हें उनके सामने रख दिये। वे झट उठीं और उन फलोंको अपने परम इष्टदेव भगवान् श्रीकृष्णके सामने अर्पण करके उनमें उन्होंने तुलसीपत्र छोड़े और फिर अपनी आँखें बंदकर भगवान्‌को भोग लगानेका मन्त्र पढ़ा, घंटी बजायी और बैठ गयीं। उन्होंने फल-प्रसाद सब उपस्थित लोगोंको बाँट दिये।

योगी और भोगीका अन्तर

वार्ताके मध्य हमने प्रश्न किया, आपकी दृष्टिमें देशमें बढ़ रही दिनोदिन नास्तिकता एवं अशान्तिका मूल कारण क्या है?

इसपर आप बड़ी गम्भीर होकर बोलीं—'भाई साहब! जब योगी भोगीको अपना मार्गदर्शक मानकर उससे कुछ सीखनेका प्रयत्न करने लगेगा तो समझ लीजिये कि उस समय महान् घोर कलियुग आ जायगा एवं अनाचार, पापाचार, अत्याचार और व्यभिचार आदि बढ़ जायँगे। भारत धर्मप्राण योगियोंका एक परम पवित्र महान् देश है। अन्य पश्चिमी देश भोगियोंके देश हैं और भौतिकवादियोंके केन्द्र हैं। भारतकी भूमिपर भगवान्‌के श्रीमङ्गलमय चरण पड़े हैं और इसकी पवित्र धरतीपर स्वयं भगवान् श्रीकृष्णने अवतार लेकर लीलाएँ की हैं। त्याग एवं वैराग्यका यह केन्द्र रहा है। अतः यदि भोगी (पश्चिमी देश) हमसे (भारतसे) कुछ शिक्षा ग्रहण करें तो ठीक है, पर यदि उलटे हम (योगी) ही उन महान् भौतिकवादी भोगियोंके पीछे दौड़ेंगे तो उसका परिणाम क्या होगा, इसका अनुमान लगा लीजिये। आजकल ठीक यही हो रहा है। आज उलटी गङ्गा बह रही है। जहाँ कभी पश्चिमी देश भारतको धर्मभूमि और योगियोंका परम पवित्र देश मानकर उससे शिक्षा ग्रहण किया करते थे, वहाँ आज हम भारतीय उलटे भोगी देशोंको अपना पथप्रदर्शक (गुरु) मानकर उनका अन्धानुकरण करनेमें ही महान् गौरवका अनुभव कर रहे हैं। देशके घोर अधःपतनका यही मूल कारण है।'

श्रीकृष्णकी उपासिका

मैंने पुनः प्रश्न किया—कुछ लोग भगवान् श्रीकृष्णको ऐतिहासिक पुरुष नहीं मानते। उधर कुछ लोग उन्हें ऐतिहासिक पुरुष तो मानते हैं, पर उन्हें वे भगवान्‌का साक्षात् अवतार नहीं मानते? इन विषयोंपर आपका मत क्या है?

इस प्रश्नपर श्रीरेहानाजी कुछ भड़क उठीं और वे बोलीं—'जो लोग भगवान् श्रीकृष्णके अस्तित्वमें विश्वास नहीं रखते, वे कोरे अज्ञानी हैं। कोई उनके अस्तित्वमें विश्वास करे या न करे सत्य तो सत्य ही है। भगवान् श्रीकृष्ण समय-समयपर आज भी साक्षात् प्रकट होकर भक्तोंको अपना दर्शन दिया करते हैं। श्रीमीराबाईको उन्होंने प्रत्यक्ष दर्शन दिये थे। सूरदासजीके भी समक्ष प्रकट होकर उन्हें अपनी संनिधि प्रदान की थी। नरसी भगतकी उन्होंने स्वयं प्रकट होकर सहायता की थी और उनका भात भरा था। धर्मपर विपत्ति आनेपर वे अवतार लेकर धर्मद्रोहियोंका सदा संहार किया करते हैं। उनके अस्तित्वमें विश्वास न करनेवाले अज्ञानी हैं।' यह कहते हुए रेहानाजी श्रीकृष्ण-प्रेममें अत्यन्त विह्वल हो उठीं।

हमने उनसे पुनः प्रश्न किया—'कुछ विद्वानोंने भगवान् श्रीराम, श्रीकृष्णको तथा रामायण और महाभारतको ऐतिहासिक न मानकर काल्पनिक बताया है। इस सम्बन्धमें आपका क्या मत है?' बहन रेहानाजी बोलीं—"चाहे कोई भी विद्वान् क्यों न हो, वे इस विषयमें जो कुछ कहते हैं, अपनी समझसे ही तो कहते हैं। मजेकी बात तो यह है कि जो ऐसा कहते हैं, वस्तुतः वे उन्हें तत्त्वतः जानते नहीं। जो जानते हैं, वे ऐसा कह ही नहीं सकते। बहन रेहानाजी बोलीं—भगवत्तत्त्व बड़ा गूढ़ और विलक्षण है। इस जाननेयोग्य परम तत्त्व—श्रीकृष्णको जिसने जान लिया है, वही उस अनिर्वचनीय रसानुभूतिका अनुभव कर सकता है। श्रीकृष्ण-प्रेम ऐसा ही अनूठा है। इसकी टीसको जिसने अनुभव किया है, वही उस दिव्यानन्दको जान सकता है—

नहीं इश्कका[1] दर्द लज्जतसे खाली
जिसे 'जौक' है वह मजा[2] जानता है।

उन्होंने कहा—'भगवान् श्रीराम अथवा श्रीकृष्णको काल्पनिक बतानेवाले स्वयं बिन्दुके समान हैं और भगवान् श्रीकृष्ण अथवा राम अनन्त सिन्धु हैं। भला बिन्दु सिन्धुका क्या मुकाबला कर सकता है? कहाँ एक बूँद और कहाँ अथाह समुद्र! क्या कभी बिन्दुको सिन्धुकी गम्भीरताका पूरा ज्ञान हो सकता है? असम्भव! अतः लोगोंकी इस प्रकारकी उक्तियोंका कोई मूल्य नहीं है।'

'आप मुसलिम-परिवारकी होकर भी भगवान् श्रीकृष्णकी उपासना कबसे और कैसे करती हैं?' इस प्रश्नपर रेहाना बहनने कहा—"यह सच है कि मैंने एक मुसलिम-घरमें जन्म लिया, पर मेरे संस्कार अस्सी प्रतिशत हिन्दू हैं। यह भी सच है कि असलमें हम हिन्दू ही थे, हिन्दुस्थानमें ही पैदा हुए, कहीं बाहरसे नहीं आये। मैं बचपनसे ही पूर्वजन्म मानती थी, श्रीकृष्णको अपने दिलमें बैठाये फिरती थी। बचपनमें वेदान्त पढ़ती और उसे समझती थी। घरसे अलग रहकर कुछ अजब मानसिक और आध्यात्मिक सूनापन-सा महसूस किया करती थी। जब मेरी अवस्था ८ वर्षकी थी तभी मैंने किसीसे सुना था— "The Hindus are idolaters."—हिन्दूलोग बुतपरस्त हैं। इसपर मैंने झुंझलाकर कहा था कि "The Hindus are not idolaters. They do not worship the idols, but worship the idea behind it." अर्थात् हिन्दू मूर्तिपूजक नहीं हैं, वे मात्र मूर्ति नहीं पूजते, बल्कि उसके पीछे जो कुछ तत्त्व है, उसे ही

१-वक्ताका आशय यहाँ दिव्य भगवत्प्रेमसे है।
२-दिव्यानन्दानुभूति।

पूजते हैं।' वास्तविकता यह है कि श्रीकृष्णभक्ति मुझे पिछले जन्मके संस्कारोंके कारण ही मिली है, मैं ऐसा ही मानती हूँ। मेरे परिवारवाले मुझे गीता पढ़ते देखकर, श्रीकृष्णकी भक्ति करते देखकर और श्रीकृष्णभक्तिके भजन गाते हुए सुनकर अपनी धर्मान्धताके कारण मुझसे काफी नाराज रहते थे, किंतु पूर्वजन्मके मेरे संस्कारोंने ही मेरी काफी मदद की। ये संस्कार ही मुझे यह सब करनेपर मजबूर करते रहे हैं।'

पुनर्जन्ममें विश्वास

बहन श्रीरेहानाजी हिन्दू-धर्मके पुनर्जन्मके सिद्धान्तमें दृढ़ विश्वास रखती थीं। पुनर्जन्मके सम्बन्धमें हमारे प्रश्न करनेपर उन्होंने कहा—'साधारणतः कोई प्रश्न कर सकता है कि तुम्हारे पास क्या सबूत है कि जीव मृत्युके बाद दुबारा जन्म लेता है?' इसके उत्तरमें कुछ लोग कह सकते हैं कि 'कोई नहीं।' परंतु मैं पूछती हूँ कि क्या उनके पास कोई सबूत है कि 'पुनर्जन्म नहीं होता?' इसका सामान्य-सा उत्तर यही होता है कि नहीं, कोई सबूत तो नहीं है, पुनर्जन्मकी बात भ्रममात्र मालूम होती है। ऐसा उत्तर देनेवालोंसे मुझे कहना होगा कि आपको न कुछ अभ्यास है, न अनुभव। आपने तुरंत भ्रम मान लिया। यदि भ्रम है तो मैं बड़े भव्य भ्रमितोंकी पंगतमें हूँ; क्योंकि मैंने तो स्वयं ही अपने जीवनमें पुनर्जन्मकी सत्यताका अनुभव किया है।

गीतासे प्रेरणा

श्रीरेहाना बहनको श्रीमद्भगवद्गीताके प्रति अटूट श्रद्धा थी। गीताको वे महान् एवं अद्वितीय धर्मग्रन्थ मानती थीं। वे अपनी

आत्मकथा—'सुनिये काका साहब' में लिखती हैं—'सन् १९२३ में मेरे जीवनमें गीताजी प्रकट हुई। मैंने 'यंग इण्डिया' (Young India)-में बापूद्वारा की गयी गीताकी तारीफ पढ़ी। मैं गीता ले आयी। उसे पढ़ा और पढ़ते-पढ़ते मेरे दिल-दिमागपर गोया बिजलियाँ गिरती चली गयीं। मैं पागल हो गयी, विह्वल हो गयी और व्याकुल हो गयी। मैंने लगातार उसे बीस बार पढ़ लिया, फिर भी उसे हाथसे अलग न रख सकी। रातको तकिये-तले रखकर सोती। मेरी आँखोंके सामने एक अद्भुत सुन्दर, तेजोमय, आनन्दमय दुनिया गोया खुल गयी। गीताके सात सौ श्लोकोंमें मुझे चौदह ब्रह्माण्डोंके रहस्य नजर आने लगे। मेरे सभी सवालोंके एकदमसे जवाब मिल गये। हर उलझनका सुलझाव मिल गया। हर अँधेरेका दीपक मिल गया। हर गुमराहीको रहनुमा (मार्गदर्शक) मिल गया। गीतामें मैंने सब कुछ पा लिया।'

रेहाना बहन नियमित गीताका पाठ किया करती थीं। गीताके सभी श्लोक उन्हें कण्ठस्थ थे। वे श्रीमद्भगवद्गीताको सम्मानपूर्वक 'गीता शरीफ' कहकर पुकारा करती थीं।

अंग्रेजी शिक्षाको रेहाना बहन मानसिक गुलामीका प्रतीक मानती थीं। एक बार उन्होंने बड़े दुःखभरे शब्दोंमें कहा था—'अंग्रेजी शिक्षाने तो हमारे मस्तिष्कको विकृत कर डाला है और अंग्रेजी दवाओंने शरीरको।'

देशभक्त परिवार

रेहाना बहनने सन् १९०१ में एक गुजराती मुसलिम परिवारमें जन्म लिया था। तैय्यबजीका परिवार देशभक्तिके लिये विख्यात

रहा है। पूरा परिवार गांधी-भक्त रहा है। रेहानाजीके नाना न्यायमूर्ति बदरुद्दीन तैय्यबजी, उनके पिता अब्बास तैय्यबजी तथा परिवारके अन्य सभी सदस्योंने जहाँ ऊँचे-ऊँचे पदोंपर कार्य किये हैं, वहीं देशभक्तिके कार्योंमें भी वे किसीसे पीछे नहीं रहे हैं। उनके पिता अब्बास तैय्यबजी प्रसिद्ध और प्रमुख देशभक्त रहे हैं। रेहाना बहन भी वर्षोंतक गांधीजीके आश्रममें उनकी शिष्याके रूपमें रही थीं। गांधीजीकी प्रेरणासे नमक-सत्याग्रहमें भी उन्होंने डटकर भाग लिया था।

रेहानाजीने अपनी पुस्तक 'गोपी-हृदय' में श्रीकृष्णभक्तिकी अनोखी आध्यात्मिक आत्मलक्षी कहानी लिखी है। 'नापतेसे पहले' उनका कहानी-संग्रह है। 'कृपाकिरण' श्रीकृष्णभक्तिसे ओत-प्रोत भजनोंका संग्रह है। हिन्दू-धर्म, हिन्दू-दर्शन एवं हिन्दू-आचार-विचारोंके प्रति उनकी श्रद्धा-भक्ति एवं दृढ़ विश्वास वस्तुतः प्रशंसनीय हैं। थोड़ेमें—रेहानाजीको हमने जैसा सुना, वैसा ही पाया।

[३] एक अनूठे मुसलिम श्रीकृष्णभक्त— मोहम्मद याकूब सनम साहब

रहीम, रसखान और ताज बेगमकी परम्परामें इस शताब्दीमें हुए हैं मोहम्मद याकूब खाँ उर्फ 'सनम साहब।' अजमेरवासी सनम साहबने सन् १९२० ई० से लेकर सन् १९४४ ई० तक देशभरमें कृष्णभक्तिका प्रचार-प्रसार किया तथा अन्तमें सन् १९४५ ई० में एक दिन अपने इष्टदेव भगवान् श्रीकृष्णकी लीलाभूमि व्रजकी पावन मिट्टीमें अपना शरीर समर्पण कर दिया।

सनम साहबने संस्कृत, हिन्दी और उर्दूमें प्रकाशित कृष्णभक्ति-

साहित्यका गहन अध्ययन किया। इन भाषाओंके अतिरिक्त वे फारसीके भी प्रकाण्ड विद्वान् थे। उन्होंने कृष्णभक्ति-सम्बन्धी लगभग १२०० पुस्तकें संगृहीत कीं तथा अजमेरमें 'श्रीकृष्ण-लाइब्रेरी' की स्थापना की। सनम साहबने बहुत समयतक व्रजभूमिमें रहकर श्रीकृष्णकी उपासना की। अपनी मुक्तिके उद्देश्यसे वे कृष्णभक्त बने और तपस्वी गुरुके अन्वेषणमें लग गये। अन्तमें व्रजभूमिके संत श्रीसरसमाधुरी-शरणजीको उन्होंने अपना गुरु बना लिया। गुरुदेव सरसमाधुरी-शरणजीकी प्रेरणासे उन्होंने देशभरमें कृष्णभक्तिकी धारा प्रवाहित करनेका संकल्प लिया। वे प्रभावशाली वक्ता तथा भावुक भक्त थे, अतः कुछ ही समयमें देशभरमें उनके प्रवचनोंकी धूम मच गयी। सनम साहबने अपने एक प्रवचनमें कहा था—'श्रीकृष्णके दो रूप हैं निराकार और साकार। निराकार जो गोलोकधाममें विराजमान है, उसका तीन रूपसे अनुभव होता है—प्रेम, जीवन तथा आनन्द। प्रेम ही जीवनविधान है, जीवन ही सत्यताका आधार है और जीवनका मुख्य उद्देश्य आनन्द है। इस कारण ये तीनों ही श्रीकृष्णकी निराकार विभूतियाँ हैं, सृष्टिमात्रमें व्याप्त हैं।'

'यह तो केवल हिन्दुओंका कथनमात्र है कि श्रीकृष्ण मात्र हमारे हैं और उनके पुजारी हम ही हो सकते हैं। श्रीकृष्णप्रेमका अधिकारी जीवमात्र है। स्वामी प्रेमानन्दजीने अमेरिका जाकर श्रीकृष्णपर व्याख्यान दिये, जिसका यह प्रभाव पड़ा कि चौदह हजार अमरीकी श्रीकृष्णके अनुयायी हो गये और कैलिफोर्नियामें कृष्णसमाज तथा कृष्णालय स्थापित हो गये। वहाँ भारतके समान ही श्रीकृष्णका पूजन, नाम-कीर्तन और गुणानुवाद होने लगा।'

सनम साहबको अपने गुरुदेव श्रीसरसमाधुरीशरणका एक पद बहुत पसन्द था— *'लागै मोहे मीठो राधेश्याम'* यह पद उन्होंने मुझे लिखकर भेजा था। प्रवचनके आरम्भमें वे यह पद गाकर सुनाते थे।

एक सुशिक्षित मुसलमानको श्रीकृष्णभक्तिमें तल्लीन देखकर संकीर्ण लोगोंमें तहलका-सा मच गया था। कुछने अजमेर पहुँचकर उन्हें समझा-बुझाकर कृष्णभक्तिके पथसे डिगानेका भारी प्रयास किया, किंतु उनके तर्कोंके आगे वे वापस लौट जाते थे। इसके पश्चात् उन्हें जानसे मार डालनेकी भी धमकी दी गयी, काफिरतक कहा गया, किंतु सनम साहबने स्पष्ट कह दिया कि मैं अपने इष्टदेव श्रीकृष्णकी भक्तिके लिये पैदा हुआ हूँ, जिस दिन उन्हें मुझे अपने लोकमें बुलाना होगा, मैं पहुँचा दिया जाऊँगा। अजमेरमें उनपर आक्रमणका प्रयास भी किया गया। इसपर उन्होंने प्रतिक्रियास्वरूप लिखा—'अभी मुझसे भगवान् श्रीकृष्णको और काम लेना है, इसीलिये उन्होंने रक्षा की है।'

सनम साहब हमारे अनन्य मित्र थे। सन् १९३५ ई० में वे पिलखुवा पधारे थे तथा उन्होंने हमारे निवासस्थानपर श्रीकृष्णभक्तिपर सुन्दर प्रवचन किया था। महामना पण्डित मदनमोहन मालवीय तथा श्रीहनुमानप्रसाद पोद्दार (आदिसम्पादक 'कल्याण') उनकी श्रीकृष्णभक्तिसे बहुत प्रभावित थे। सनम साहब संत उड़ियाबाबाके प्रति अटूट श्रद्धा रखते थे। वृन्दावनमें बाबाके आश्रममें वे प्रतिदिन श्रीकृष्णकीर्तन एवं रासलीलाका रसास्वादन करते थे। रासलीलाके महत्त्वपर उन्होंने एक पुस्तक भी लिखी थी। सनम साहबका कहना था कि रासलीलामें तन्मय होकर कृष्ण एवं राधामय होनेका अवसर अत्यन्त भाग्यशाली व्यक्तिको ही प्राप्त होता है। वृन्दावनमें रासलीलाका

रसास्वादन करते समय श्रीकृष्ण-प्रेममें लीन हो वे अश्रुधारा प्रवाहित करने लगते थे। संकीर्तनमें वे भक्तजनोंके साथ मिलकर नृत्य करने लगते थे। सुविख्यात अंग्रेज श्रीकृष्णभक्त रोनाल्ड निक्सन उर्फ श्रीकृष्णप्रेम-भिखारीसे भी उनका निकटका सम्पर्क हो गया था। इन दोनों गैर-हिन्दू श्रीकृष्णभक्तोंने देशभरमें भक्तिकी भागीरथी प्रवाहित करनेमें भारी योगदान दिया था। महामना मदनमोहन मालवीयने सन् १९३९ ई० में सनम साहबको काशी बुलाकर उनसे श्रीकृष्ण भक्तिके विषयमें विचार-विनिमय किया और बड़े प्रभावित हुए।

अन्तमें सनम साहबने अपने इष्टदेव भगवान् श्रीकृष्णकी लीलाभूमि 'व्रज'-सेवनका संकल्प लिया। वे हर समय यमुना-स्नान एवं श्रीकृष्णके ध्यानमें लीन रहने लगे। रूखा-सूखा सात्त्विक भोजन प्रसादरूपमें ग्रहण कर लेना तथा बाकी समय संत-महात्माओंकी सेवा एवं संकीर्तनमें व्यतीत करना—यही उनकी दिनचर्या थी। वे अपनेको 'ब्रजराजकिशोरदास' नामसे सम्बोधित करने लगे थे। एक दिन उन्होंने वृन्दावनमें ही रासलीलाका रसास्वादन करते समय अपने प्राण त्याग दिये।

[४] अंग्रेज मेजर लीद—जिन्हें रामायणकी चौपाइयाँ कण्ठस्थ थीं

सन् १९६५ की फरवरीकी बात है। भारतके सुप्रसिद्ध आर्यसमाजी संन्यासी स्वामी श्रीसत्यानन्दतीर्थजी पिलखुवास्थित हमारे निवासस्थानपर पधारे थे। माननीय स्वामीजी महाराजकी यहाँके ला० गंगाशरण नवादेवालोंके स्थानपर गीता-रामायणकी कथा हुआ करती थी। हमें यह जानकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि आप एक आर्यसमाजी संन्यासी होकर भी गीता-रामायणकी कथा कहते हैं,

गीता-रामायणका बड़े प्रेमसे पाठ करते हैं और दूसरे लोगोंको भी गीता-रामायणका पाठ करनेका उपदेश करते हैं!

हमने स्वामीजी महाराजसे इस सम्बन्धमें कई बातें पूछीं और उन्होंने उनका उत्तर दिया। उसी प्रश्नोत्तरका सार हम नीचे दे रहे हैं—

प्रश्न—स्वामीजी महाराज! एक आर्यसमाजी संन्यासी होते हुए भी आपकी गीता-रामायणमें ऐसी दृढ़ निष्ठा और भगवान् श्रीराम-कृष्णमें ऐसा अद्भुत प्रेम होनेका कारण क्या है?

स्वामीजी—मेरे जीवनमें एक ऐसी सत्य घटना घटी है कि जिसके कारण मुझे बरबस भगवान् श्रीरामको और भगवान् श्रीकृष्णको परब्रह्म परमात्मा माननेके लिये बाध्य होना पड़ा है और मुझे रामायण तथा गीतामें इतनी निष्ठा हो गयी है। वह घटना इस प्रकार है—

मुझे एक बार एक बड़े धनी-मानी सेठके साथ विदेश-यात्राके लिये जाना पड़ा। मैं उस समय फ्रांस आदि यूरोपके कई देशोंके अतिरिक्त इंग्लैण्ड भी गया और वहाँ बहुत दिनोंतक रहा। मुझे स्वप्नमें भी यह कल्पनातक न थी कि इस फैशनपरस्त विलासप्रधान देशमें, जहाँ लोग अंडे, मांस, मछली खाते हैं, शराब पीते हैं और स्त्री-पुरुष उन्मत्त होकर नृत्य करते हैं, वहाँ लङ्कामें भक्त विभीषणकी भाँति कोई सज्जन एकान्तमें बैठकर भगवान् श्रीराम-कृष्णकी भक्ति भी कर रहे हैं!

सहसा एक दिन मुझे एक अंग्रेज सज्जन मिले, जिनका शुभ नाम था—मेजर मि० लीद। मेजर मि० लीद पहले बहुत समयतक भारतीय फौजमें मेजरके पदपर रह चुके थे। वे

भारतीय हिन्दू-सभ्यता-संस्कृतिसे बड़े प्रभावित थे तथा उससे बहुत प्रेम रखते थे। वे भगवान् श्रीराम और भगवान् श्रीकृष्णके अनन्य भक्त थे।

मि० लीदने मुझे भारतीय हिन्दू समझकर मुझसे बड़ा प्रेम किया और वे मुझे तुरंत अपने घर ले गये और भारतीय अतिथिके नाते मेरा बड़ा आदर-सत्कार किया। जिस प्रकार और बहुत-से अंग्रेज हम भारतीय हिन्दुओंको गुलाम देशका और काला आदमी समझकर घृणा करते हैं, वहाँ मि० लीदने मुझ भारतीय ऋषियोंके देशका हिन्दू समझकर बड़े प्रेमसे और पूज्यभावसे देखा। उन्होंने बड़े आदरसे मुझे अपने घरमें ठहराया।

वे मुझे एक बार अपने घरके अंदर ले गये तथा बड़े प्रेमसे एक सुन्दर आलमारी दिखायी, जो संस्कृत और हिन्दीके बहुत-से ग्रन्थोंसे भरी थी। श्रीतुलसीकृत श्रीरामचरितमानस, श्रीमद्भागवत, श्रीमद्भगवद्गीता, सम्पूर्ण महाभारत आदि सब ग्रन्थ उस आलमारीमें सुशोभित थे। उन सब ग्रन्थोंकी बहुत सुन्दर सुनहरी जिल्दें थीं। उन्होंने हमारे उन पूज्य धर्मग्रन्थोंको ऐसे सुन्दर ढंगसे आदरपूर्वक सजाकर रखा था कि उस प्रकार हम भारतीय हिन्दू-घरोंमें भी उन्हें नहीं रखा जाता है। वे उन ग्रन्थोंको बड़ी पूज्य दृष्टिसे देखते थे। वे बड़े ही प्रेमसे, बड़ी श्रद्धाभक्तिके साथ पढ़ते और उनका नित्यप्रति स्वाध्याय करते थे, जिसे देखकर बड़ा आश्चर्य होता था।

श्रीतुलसीकृत श्रीरामचरितमानस और श्रीमद्भगवद्गीताके तो वे ऐसे अनन्य भक्त और प्रेमी थे कि नित्य उनका पाठ करते-करते श्रीतुलसीकृत रामायणकी बहुत-सी चौपाइयाँ एवं श्रीमद्भगवद्गीताके श्लोक उन्हें कण्ठस्थ हो गये थे, जिन्हें वे बड़े प्रेमसे गा-गाकर

सुनाया करते थे। जिस समय वे गा-गा करके सुनाते, उस समय वे भगवान् श्रीराम-कृष्णके प्रेममें विभोर—गद्गद हो जाते थे।

मेरे द्वारा मि० लीदसे यह प्रश्न किये जानेपर कि 'साहब! आपने एक अंग्रेज होनेपर भी हिन्दी और संस्कृत भाषाका इतना ज्ञान प्राप्त कैसे किया कि जो इस प्रकार आप रामायणकी चौपाइयाँ और श्रीमद्भगवद्गीताके श्लोक धड़ाधड़ बोल रहे हैं? तथा आपको भगवान् श्रीराम-कृष्णकी भक्तिका यह चस्का भी कहाँसे लगा कि जो भगवान् श्रीराम-कृष्णका नाम लेते ही आप एकदमसे गद्गद हो जाते हैं?'

मि० लीदने कहा—'मैं जब आपके परम पवित्र देश भारतमें मेजर-पदपर था, तब मैंने वहाँ लगातार सात वर्षोंतक एक संस्कृतके विद्वान् ब्राह्मणसे संस्कृत भाषा पढ़ी थी। उन विद्वान् ब्राह्मणको मैं प्रतिमास पन्द्रह रुपये दिया करता था। इसीसे मुझे हिन्दू-फिलॉसफीका ज्ञान तथा उसमें अनुराग प्राप्त हो गया। अब मैं हिन्दू फिलॉसफीसे बढ़कर और किसीको भी नहीं मानता हूँ। मैंने संस्कृत पढ़कर हिन्दू-धर्मका जो ज्ञान प्राप्त किया, उसके आधारपर मेरे मनने निष्पक्ष होकर पूर्णरूपसे यह निश्चय और निर्णय कर लिया कि समस्त विश्वमें एकमात्र आपका हिन्दू-धर्म, सनातनधर्म ही पूर्ण है और इसी हिन्दू-धर्मकी शरणमें आनेसे और हिन्दू-धर्मके ग्रन्थोंके अनुसार चलनेसे ही जीवका परम कल्याण हो सकता है। मेरा यह भी पूर्ण निश्चय और विश्वास है कि भगवान् श्रीराम तथा भगवान् श्रीकृष्ण मनुष्य नहीं थे। वे साक्षात् परमात्माके ही पूर्ण अवतार थे। जितने भी अवतार और बड़े-बड़े ऋषि-मुनि, संत-महात्मा एवं सिद्ध योगी हुए हैं,

वे एकमात्र आपके परम पवित्र दिव्य देश, भारतमें ही और आपकी परम पवित्र हिन्दू-जातिमें ही हुए हैं। आपका यह देश भारतवर्ष धर्मप्राण, परम पवित्र और जगद्गुरु देश है। यह आपका परम सौभाग्य है कि जो आपने ऐसे परम पवित्र देश भारतमें और परम पवित्र हिन्दू-जातिमें जन्म लिया।'

उन श्रीकृष्णभक्त अंग्रेज मि० लीद साहबने मुझे श्रीमद्भगवद्-गीताका निम्नलिखित श्लोक कई बार बड़े प्रेमसे सुनाया था, जो मुझे अबतक भलीभाँति याद है—

निर्मानमोहा जितसङ्गदोषा
अध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः।
द्वन्द्वैर्विमुक्ताः सुखदुःखसञ्ज्ञै-
र्गच्छन्त्यमूढाः पदमव्ययं तत्॥

(गीता १५।५)

इसी प्रकार तुलसीकृत श्रीरामचरितमानसकी भी कितनी ही चौपाइयाँ और दोहे उन्होंने बड़े प्रेमसे गा-गाकर मुझे सुनाये थे, वे सब मुझे इस समय स्मरण नहीं रहे। उन्होंने मुझे एक दोहा सुनाया था जो मुझे आजतक याद है—

सधन चोर मन मुदित मन धनी गृही जिमि फेंट।
तिमि सुग्रीव बिभीषन राम-भरत की भेंट॥

भारतमें लौटनेपर मैंने यह दोहा श्रीतुलसीकृत रामचरितमानसमें बहुत तलाश किया, पर मुझे कहीं मिला नहीं। उन श्रीकृष्णभक्त मि० लीद साहबका यह कहना था कि यह दोहा श्रीतुलसीकृत श्रीरामचरितमानसकी प्राचीन प्रतिमें मिलता है। उन्होंने इस दोहेका बड़ा ही सुन्दर अर्थ करके भी बड़े प्रेमसे मुझे सुनाया

था। उन्होंने और भी बहुत-सी चौपाइयाँ और श्लोक मुझे सुनाये, जो बहुत समय हो जानेके कारण अब स्मरण नहीं रहे हैं।

उन श्रीकृष्णभक्त अंग्रेज मि० मेजर लीद साहबने जब मुझसे श्रीतुलसीकृत श्रीरामचरितमानस और श्रीमद्भगवद्गीताके सम्बन्धमें कुछ प्रश्न किये तो मुझे उस समय अपने घरके इन श्रीरामचरितमानस और श्रीमद्भगवद्गीता-जैसे महत्त्वपूर्ण ग्रन्थोंका तनिक भी ज्ञान नहीं था। इसलिये मुझसे प्रश्नोंका कुछ भी उत्तर देते नहीं बना। मैं चुप होकर अपना-सा मुँह लिये रह गया। मेरा सिर लज्जासे उनके चरणोंमें झुक गया और मैंने मन-ही-मन उन श्रीकृष्णभक्त अंग्रेजको अपना एक प्रकारसे गुरु मान लिया।

कहाँ तो एक विदेशी विधर्मी अंग्रेज, जिनका हमारे धर्मग्रन्थ रामायण, गीता, महाभारत, भागवत, उपनिषद् आदिके प्रति इतना आदर, सम्मान, प्रेम तथा ज्ञान है कि वे इन्हें बड़े आदरसे सुनहरी जिल्द बँधवाकर घरमें रखते हैं, नित्य स्वाध्याय करते हैं, उनके श्लोकों-चौपाइयोंको कण्ठस्थ करते हैं। उनके तत्त्वको जीवनमें उतारते हैं और अपनेको धन्य मानते हैं और कहाँ हम इनका परिचय प्राप्त करना तो दूर रहा, बिना ही देखे इनमें दोष बताते हैं। अस्तु, मैंने इंग्लैण्डसे लौटकर आते ही सबसे पहले गीता और रामायणकी शरण ली। इनका अभ्यास करना प्रारम्भ कर दिया और बादमें श्रीकृष्णभक्त मि० लीदकी प्रेरणाके कारण ही मैंने महाभारत और उपनिषदोंका भी लगनके साथ स्वाध्याय किया।

फिर तो जब भी मैं कभी उत्सवोंपर भाषण देनेके लिये जाता और वहाँ जब भी मैं पाश्चात्त्य सभ्यताके रंगमें रँगे अपने विद्वानोंके द्वारा भाषणोंमें भगवान् श्रीराम-कृष्णकी और गीता-रामायणकी निन्दा

करते सुनता तो मुझे बड़ा दुःख होता था। झटसे मुझे इंग्लैण्डमें देखी उन श्रीकृष्ण भक्त अंग्रेज मि० लीदकी बातें याद आ जाती थीं। मैं सोचता, ये कैसे हिन्दू हैं कि जो भरी सभाओंमें भगवान् श्रीराम-कृष्णको एक साधारण मनुष्य बता रहे हैं, फिर भी अपनेको हिन्दू मान रहे हैं; और दूसरी ओर वह इंग्लैण्डका अंग्रेज है कि जिसने निरन्तर सात वर्षोंतक संस्कृत भाषा पढ़कर गीता-रामायणका अभ्यास किया और भगवान् श्रीराम-कृष्णको साक्षात् परमात्माका अवतार मानकर तथा उनकी भक्ति कर अपने जीवनको सफल कर रहा है। मेरा इसी बातको लेकर कई उपदेशकोंके साथ विवाद भी हो जाता था। अब तो मैं नित्यप्रति श्रीतुलसीकृत श्रीरामचरितमानस और श्रीमद्भगवद्गीताका पाठ करता हूँ। भगवान् श्रीराम-कृष्णको साधारण मनुष्य नहीं, साक्षात् परब्रह्म परमात्मा मानता हूँ, उनका भजन करता हूँ और भजन करके बड़ी सुख-शान्तिका अनुभव करता हूँ।

यह है एक श्रीकृष्णभक्त अंग्रेजके जीवनकी महान् आश्चर्यजनक और हिन्दूधर्मकी अद्भुत महत्ताको प्रकट करनेवाली एक बिलकुल सत्य घटना, जो मैंने आपके सामने रखी है।

[५] अंग्रेज डॉ० डेविडसन, जो श्रीकृष्ण-प्रेममें तन्मय होकर नाचते थे

[एक महान् श्रीकृष्णभक्त अंग्रेजके जीवनकी आश्चर्यजनक बिलकुल सत्य घटना]

श्रीराजनारायण शर्माजी अनेक वर्षोंतक सरकारी सेवाओंमें रहे। वे बड़े ही मिलनसार आस्तिक सज्जन हैं। एक दिन आप हमारे स्थानपर पधारे थे। आपने सुप्रसिद्ध श्रीकृष्णभक्त अंग्रेज डॉ० डेविडसन साहबके जीवनकी ऐसी-ऐसी विलक्षण सत्य

घटनाएँ सुनायीं, जिन्हें सुनकर सभी आश्चर्यचकित रह गये। यह स्मरण रहे कि श्रीकृष्णभक्त डॉ० डेविडसन साहबका श्रीशर्माजीसे पारिवारिक घनिष्ठ सम्बन्ध रहा था। शर्माजीकी सुनायी कुछ सत्य घटनाएँ इस प्रकार हैं—

सन् १९१८ की बात है, बाबूगढ़ (जिला मेरठ)-में एक अंग्रेज डॉ० डेविडसन साहब मेडिकल अफसर होकर आये थे। डॉ० डेविडसन साहब बड़े ही मिलनसार, सज्जन और सात्त्विक विचारोंके श्रीकृष्णभक्त पुरुष थे। उनके सम्बन्धमें यह बात बड़ी प्रसिद्ध थी कि उन्होंने अपनी श्रीकृष्णभक्ति, श्रीकृष्णनाम-जप और श्रीकृष्णप्रार्थनाके बलपर अलौकिक सिद्धियाँ प्राप्त कर ली हैं। उनका प्राचीन ऋषियोंकी आत्माओंसे सम्बन्ध स्थापित हो गया है और वे उनसे बातें करते हैं तथा उनमें इतना ज्ञान आ गया है कि वे घर बैठे सब जगहकी बातें जान लेते हैं।

डॉ० डेविडसनके कमरेमें मनुष्यके बराबर आकारवाली एक बहुत ही सुन्दर भगवान् श्रीकृष्णकी प्रतिमा थी और वे भगवान् श्रीकृष्णकी उस प्रतिमाके सामने खड़े होकर प्रेममें विभोर हो नृत्य करते हुए श्रीकृष्णकीर्तन किया करते थे। श्रीकृष्णकीर्तन करते हुए उनकी कीर्तनमें इतनी तन्मयता होती थी कि वे अपने शरीरतककी भी सुध-बुध खो बैठते थे।

एक दिन मेरे पिताजी अपने कुछ मित्रोंको साथ लेकर डॉ० डेविड़सन साहबसे मिलनेके लिये बाबूगढ़ गये, सबने जाकर देखा कि साहबका कमरा अंदरसे बिलकुल बंद है और कुछ-कुछ गानेकी-सी आवाज सुनायी पड़ रही है। पिताजी कमरेके पीछेकी ओर गये और पीछेकी ओरके जँगलेसे कमरेमें झाँककर

देखा तो उन्हें उस कमरेमें एक मनुष्यके बराबर आकारकी भगवान् श्रीकृष्णकी बड़ी सुन्दर मनोहर प्रतिमा स्थापित दिखायी दी। डॉ० डेविडसन साहब भगवान् श्रीकृष्णकी उस मूर्तिके सामने खड़े होकर नृत्य करते हुए श्रीकृष्णकीर्तन कर रहे थे। इन्होंने समझा कि 'अंग्रेज लोग शराब पीते ही हैं, आज डॉ० डेविडसनने शायद ज्यादा शराब पी ली है और उसीके नशेमें नाच-कूद रहे हैं। इसलिये अब इनसे मिलना और बातें करना उचित नहीं है।' ऐसा अपने मनमें विचारकर वे लोग वहाँसे चुपचाप चल दिये।

साहबको श्रीकृष्णनाम-जप, श्रीकृष्ण-नामकीर्तन और श्रीकृष्ण-प्रार्थनाके द्वारा दूसरोंके मनकी बात जान लेनेकी अद्भुत शक्ति प्राप्त हो चुकी थी। इसलिये वे इनके मनकी बात भलीभाँति जान गये और ये लोग कुछ ही दूर गये होंगे कि साहबने झटसे अपना कमरा खोलकर चपरासीको संकेत करके कहा कि 'सामने जानेवाले उन आदमियोंको हमारे पास बुला लाओ।' चपरासीके बुलानेपर पिताजी अपने साथियोंके साथ पुनः वापस लौट आये। डॉ० डेविडसन साहबने उनसे पूछा कि 'बताइये, आपने क्या देखा है और क्या समझा है?'

इसपर मेरे पिता मुकुन्दलालजीने कहा कि 'साहब! हमने कुछ नहीं समझा है।'

डेविडसन साहबने कहा कि 'शायद आपलोगोंको यह भ्रम हुआ है कि आज साहब शराब अधिक पी गये हैं और शराबके नशेमें ही झूम-नाच रहे हैं, पर ऐसी बात नहीं है, यह आपका भ्रम ही है।'

साहबके मुखसे अपने मनकी बात सुनकर सभी दंग रह गये और पिताजीने कहा—'जी हाँ, साहब! वास्तवमें हमारे मनमें यही बात आयी थी जो आप कह रहे हैं, पर आपको हमारे मनकी बात मालूम कैसे हो गयी?'

साहबने कहा कि अच्छा, अब आप सब मेरे इस कमरेमें आइये। साहब सबको अपने साथ कमरेमें ले गये और अंदर ले जाकर साहबने दिखाया कि एक मनुष्यके कदके बराबर संगमरमरकी बड़ी ही सुन्दर भगवान् श्रीकृष्णकी दिव्य प्रतिमा वहाँ विराजमान है और वह बहुत ही सुन्दर वस्त्राभूषणोंसे, पुष्पहारोंसे सुसज्जित है। फिर साहबने कहा—शर्माजी! मैं इन्हीं अपने परम इष्टदेव भगवान् श्रीकृष्णके सामने खड़ा होकर नृत्य-कीर्तन कर अपने प्रभु भगवान् श्रीकृष्णको रिझा रहा था और इस श्रीकृष्णप्रेमकी मादकतामें झूम रहा था और कोई बात नहीं थी।

एक विदेशी और विधर्मी अंग्रेजके कमरेमें भगवान् श्रीकृष्णकी सुन्दर प्रतिमाको देखकर और उनके मुखसे श्रीकृष्णभक्तिकी सुन्दर मीठी रसीली बातें सुनकर सभी आश्चर्यचकित रह गये तथा सभीका हृदय गद्गद हो गया। सब लोग अपनेको कृतकृत्य मानने लगे।

श्रीकृष्णभक्त अंग्रेज डॉ० डेविडसन साहब मांस-मदिराका खाना-पीना तो दूर रहा, स्पर्श करना भी बड़ा घोर पाप मानते थे। आप एक परम वैष्णव बन गये थे और वेदोंमें तथा हिन्दूधर्मके अन्य ग्रन्थोंमें आपकी बड़ी आस्था थी और आप हिन्दू सनातनधर्मको ही सर्वश्रेष्ठ एवं एकमात्र पूर्ण धर्म मानते थे। आपको श्रीकृष्णभक्तिका यह अद्भुत चस्का सर्वप्रथम अफ्रीकामें

लगा था और कुछ दिनोंके पश्चात् परम पवित्र श्रीमथुरापुरीमें आनेपर तो आपको श्रीकृष्णभक्तिका पूरा-पूरा रंग चढ़ गया। जबतक आप जीवित रहे, श्रीकृष्णभक्तिमें तल्लीन रहे और नित्यप्रति अपने परम इष्टदेव भगवान् श्रीकृष्णकी मूर्तिके सामने खड़े होकर नृत्य-कीर्तन करते रहे।

श्रीकृष्णभक्तिके द्वारा अलौकिक सिद्धिका अद्भुत चमत्कार

भगवान् श्रीकृष्णकी मूर्तिके सामने नृत्य-कीर्तन करनेसे और उनकी भक्ति करनेसे आपको कई प्रकारकी सिद्धियाँ प्राप्त हो गयी थीं, जिसके सम्बन्धमें एक बिलकुल सत्य घटना यहाँपर दी जा रही है, जो इस प्रकार है—

एक दिनकी बात है कि डॉ० डेविडसन साहब अपने स्थान बाबूगढ़से हापुड़ हमारे घरपर पधारे और आकर हमारे बड़े भ्राता पं० श्रीराजबिहारीलाल शर्माजीसे बोले—

'बेटा राजबिहारीलाल! आज तुम्हें हमारे साथ लखनऊ चलना है, इसलिये तुम झटसे तैयार हो जाओ।'

पं० राजबिहारीलाल शर्माजीने जब आपसे लखनऊ चलनेका कारण पूछा तो डॉ० डेविडसन साहबने कहा कि 'बेटा! चलनेका कारण न पूछो। बस, हमारे साथ चले चलो।' शर्माजीने चलना सहर्ष स्वीकार कर लिया।

डॉ० डेविडसन साहब और पं० राजबिहारीलाल शर्माजी दोनों संध्याकी ट्रेनसे लखनऊके लिये प्रस्थान कर गये। लखनऊके स्टेशनपर गाड़ीसे उतरनेपर डेविडसन साहबने कहा कि बेटा राजबिहारीलाल! चलो, जरा बाजार घूम आयें।

जब राजबिहारीलालजी साहबके लिये सवारी लेनेको कुछ

आगे बढ़े तो झटसे साहबने उन्हें रोककर कहा कि 'सवारीमें नहीं, पैदल ही चलेंगे।'

दोनों बाजारके लिये पैदल ही चल दिये और एक पासके बाजारमें पहुँच गये। बाजारमें कुछ दूर चलनेपर डेविडसन साहब अकस्मात् एक ताला बेचनेवालेकी छोटी-सी दूकानपर जाकर रुक गये और उस दूकानदारसे एक छोटा-सा मामूली-सा ताला जो ५-६ पैसेसे ज्यादाका न होगा, ले लिया और उसके हाथमें दो रुपयेका नोट रखकर आगेको बढ़ गये।

कुछ दूर जानेपर पं० राजबिहारीलालजीने साहबसे कहा कि 'साहब! आपने इस ताला बेचनेवाले दूकानदारसे यह ताला तो कुल ५-६ पैसेका लिया है और उसे आपने बदलेमें नोट दो रुपयेका दे दिया है। उससे बाकीके पैसे वापस क्यों नहीं लिये? आप उससे पैसे लेने भूल तो नहीं गये हैं?

इसपर श्रीकृष्णभक्त डॉ० डेविडसन साहबने कहा कि अरे बेटा राजबिहारी! उस गरीब तालेवालेको आज पैसोंकी बड़ी सख्त जरूरत थी; क्योंकि इस गरीबके घर तीन दिनोंसे रोटी नहीं है—आगतक नहीं जली है और इसके बाल-बच्चे भूखसे बिलबिला रहे हैं।' राजबिहारीलालजीको डॉ० डेविडसनकी इन बातोंपर सहसा कुछ विश्वास नहीं हुआ और उन्होंने मन-ही-मन कहा कि साहब और हम दोनों साथ ही हापुड़से चलकर यहाँ आये हैं। एक-दूसरेसे तनिक देरको भी पृथक् नहीं हुए, फिर इन साहबको कैसे मालूम हो गया कि इस गरीबके घर तीन दिनोंसे रोटी नहीं बनी या आग नहीं जली है और इसके बाल-बच्चे भूखसे बिलबिला रहे हैं। मालूम होता है कि साहब यह सब बनावटी बातें कर रहे हैं।

उन्होंने साहबसे कहा—'साहब! आपकी इन बातोंपर कैसे विश्वास किया जाय कि उसके बाल-बच्चे भूखसे बिलबिला रहे हैं और उसके घर तीन दिनोंसे आग नहीं जली है। यह आपको कैसे मालूम हो गया?

यह सुनकर डॉ० डेविडसन साहब मुस्कराये और पुनः पीछेकी ओर लौटे तथा ठीक उसी दूकानदारकी दूकानपर आकर रुक गये। पं० राजबिहारीलाल शर्माजी साथमें थे ही। डॉ० डेविडसन साहबने जब उस दूकानदारसे अपने दिये नोटके बाकी पैसे वापस लौटानेके लिये कहा तो उस गरीब दूकानदारकी आँखोंमें आँसू भर आये और उसने दुःखभरे विनीत स्वरमें रोते और गिड़गिड़ाते हुए कहा—

'हुजूर! मैंने तो आपके दिये उन पैसोंका अभी-अभी आटा लेकर अपने घरपर भेज दिया है। मेरे बाल-बच्चे तीन दिनोंसे भूखों मर रहे हैं। तीन दिनोंसे मेरे घर रोटी नहीं बनी—आगतक नहीं जली है। अब आप मुझे जो चाहें, दण्ड दें। मेरे पास इस समय आपको देनेके लिये पैसे नहीं हैं। मैं बड़ा ही लाचार हूँ।

तालेवालेके मुखसे उपर्युक्त बातोंको सुनकर पं० राजबिहारीलालजी आश्चर्यचकित रह गये कि कुछ देर पूर्व डॉ० डेविडसनने जो बातें बतायी थीं, ठीक वही बातें अक्षरशः गरीब तालेवाला दूकानदार बता रहा है।

श्रीकृष्णभक्त डॉ० डेविडसन साहबने पं० राजबिहारीलालजीसे कहा कि 'मेरा लखनऊ आनेका एकमात्र कारण और एकमात्र उद्देश्य बस यही था। मुझे परम इष्टदेव भगवान् श्रीकृष्णने यह प्रेरणा दी थी कि तू लखनऊ जाकर ताला बेचनेवाले उस गरीब आदमीकी

कुछ मदद कर और उस प्रेरणासे ही मैं तुम्हें साथ लेकर यहाँ आया। मेरा यहाँ आनेका दूसरा कोई कारण नहीं है। मेरा यहाँ आनेका कार्य पूर्ण हो गया, इसलिये अब वापस हापुड़ चलो।'

वस्तुत: श्रीकृष्णभक्तिसे डॉ० डेविडसनको अद्भुत सिद्धियाँ प्राप्त थीं।

डॉ० डेविडसन भारतीय भोजनके प्रेमी और स्वयंपाकी कैसे बने?

श्रीकृष्णभक्त अंग्रेज डॉ० डेविडसन साहबने जहाँ मांस, मदिरा, अण्डे, मुर्गे-मछली, बीड़ी, सिगरेट, शराब, चाय आदि खाना-पीना छोड़ दिया था, पूर्ण निरामिषभोजी बन गये थे; वहाँ आपके जीवनमें आगे चलकर ऐसा भी शुभ समय आया कि जब आप पूर्ण सात्त्विक भोजन करनेवाले स्वयंपाकी हो गये थे। आजकलके पथभ्रष्ट लोग गोभक्षकोंके जूँठे पात्रोंमें खा-पी लेते हैं, पर ये साहब किसीका भी जूँठा खाना-पीना पाप मानते थे और कहा करते थे कि जिसका खान-पान, रहन-सहन शुद्ध सात्त्विक नहीं है, वह कभी भी आत्मोन्नति नहीं कर सकता और न वह कभी अपना लोक-परलोक ही बना सकता है।

एक बारकी बात है कि आपके भोजन बनानेका कार्य उन दिनों एक मुसलमान खानसामाँ किया करता था। इन्होंने उस खानसामेसे यह कह रखा था कि हमारे लिये अण्डे, मुर्गे, मांस-मछली आदि कोई भी तामसिक पदार्थ बिलकुल ही न बनाये जायँ, किसी भी खाने-पीनेकी चीज कभी भी जूँठी न की जाय। हमारे खाने-पीनेमें स्वच्छताका और पवित्रताका पूरा-पूरा ध्यान रखा जाय।

एक दिन उस मुसलमान खानसामेने डॉ० डेविडसनके लिये आलूकी सब्जी बनायी थी। आलूमें नमक ठीक पड़ा है या नहीं, यह जाननेके लिये मियाँने एक आलूको हँडियामेंसे निकाला और अपने दाँतसे काटकर चख लिया और उस दाँत-लगे जूँठे आलूको पुनः सागकी उसी हँडियामें डाल दिया।

जब डॉ० डेविडसनके सामने खानसामाँ खाना लेकर आया तो प्लेटमें उसके दाँतसे काटा आलूका टुकड़ा भी आ गया। साहबने उस आलूके टुकड़ेमें दाँतोंके स्पष्ट चिह्न देखे! देखते ही वे समझ गये कि इस खानसामेने आलूको अपने दाँतोंसे काटकर जूँठा किया है और वही जूँठा आलू यह मुझे खिला रहा है।

साहबने तुरंत खानसामेको बुलाया और कहा—'क्या तुम मुझे अपना जूँठा आलू खिलाते हो?'

खानसामाँ—'हुजूर! मैंने तो ऐसा कभी नहीं किया है।'

साहबने तुरंत वह दाँतोंका निशान लगा हुआ आलू उसे दिखाया और फटकार लगाते हुए उससे यह पूछा कि 'बताओ यह जूँठा नहीं है?'

अब तो खानसामेके होश गुम हो गये। उसने अपना अपराध स्वीकार कर लिया और कहने लगा कि 'हुजूर! आगे ऐसा कभी भी नहीं होगा। अब तो मुझे माफ करो।

पर साहबने उस खानसामेको नहीं रखा और बहुत दिनोंतक अपने हाथोंसे बनाकर शुद्ध पवित्र भारतीय भोजन करते रहे। साहबने पं० राजबिहारीलाल शर्माजीको हापुड़से अपने पास बुलाकर कहा था कि उस खानसामेने मुझे अपना जूँठा खिलाकर मेरा धर्म बिगाड़ दिया है। इसलिये अब मैं किसी भी खानसामेके

हाथका बना खाना कभी भी नहीं खाऊँगा। आज हमारे लिये तुम अपने घरसे खाना बनवाकर भेजना।

पं० राजबिहारीलालजीने तुरंत घरसे खाना बनवाकर भेजा जिसमें करेलेका साग उनके लिये विशेषरूपसे बनवा करके भेजा गया था। करेलेका साग साहबने बड़ी रुचिके साथ खाया। वह उन्हें इतना अधिक पसंद आया कि बहुत दिनोंतक अपने लिये तो मँगाकर खाते ही रहे, अपनी पत्नीको भी बनवाकर भेजते रहे और भारतीय भोजनके प्रेमी बन गये। शुरू-शुरूमें जब उन्होंने अपने हाथसे भोजन बनाना प्रारम्भ किया तो एक बार उनकी अँगुली जल गयी थी, पर बादमें धीरे-धीरे उन्हें अभ्यास हो गया। फिर तो वे अपने हाथसे बना भोजन करनेमें ही आनन्द मानने लगे थे। वे आचार-विचारका बहुत पालन किया करते थे। वे कहा करते थे कि शुद्ध सात्त्विक भोजनके द्वारा हमारा यह मन भी शुद्ध और सात्त्विक बन सकता है तथा शुद्ध सात्त्विक मनके द्वारा ही भगवान् श्रीकृष्णकी भजन-भक्ति हो सकती है। इसलिये भोजनपर ध्यान देना अत्यावश्यक है।

आज सुधार और प्रगतिके नामपर खान-पान भ्रष्ट हो गया है। कुछ भी खा-पी लेना, जूँठन खाना, अपवित्र रहना—उन्नतिके लक्षण बनते जा रहे हैं, यह बड़े ही दुःखका विषय है। हमारे भूले भाइयोंको इस सदाचारी, शुद्धाचारी, श्रीकृष्ण-भक्त अंग्रेजके चरित्रसे शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये।

~~~o~~~
~~~
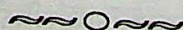
मैंने अपने जीवनमें शास्त्रोंकी बातोंको अक्षरशः सत्य कैसे पाया?

[एक उदासीन संतके जीवनकी आपबीती सत्य घटनाएँ]

एक बार हमारे स्थानपर सुप्रसिद्ध उदासीन संत अनन्त श्रीस्वामी श्रीरामेशचन्द्रजी महाराज पधारे थे। उन्होंने अपने सदुपदेशमें शास्त्रोंकी महत्तापर बोलते हुए अपने जीवनकी कुछ घटनाएँ सुनाकर शास्त्रीय आचारोंका समर्थन किया था। मनुष्यमात्रके कल्याणके निमित्त यहाँ वे ही घटनाएँ दी जा रही हैं—

[१] दूसरोंके वस्त्रोंको बिना विचारे काममें लानेसे कैसे हानि होती है?

आजकल लोग कहते हैं कि चाहे जिसका खा लो, पी लो और चाहे जिसका वस्त्र पहन लो, कोई हानि नहीं है, पर ऐसी बात नहीं है—मेरे जीवनकी एक घटना है। सन् १९४६ की बात है कि मैं एक बार लायलपुर, पंजाबमें गया हुआ था। वहाँ मैं एक रात्रिको श्रीसनातनधर्मसभाके स्थानपर जाकर सोया। मैंने वहाँके चपरासीको बुलाकर उससे कहा कि 'मुझे रात्रिको यहींपर सोना है, इसलिये मुझे कोई बिलकुल ही नया बिस्तर लाकर दो।' चपरासीने मुझे एक बिलकुल ही नया बिस्तर लाकर दे दिया। मैं उस नये बिस्तरको बिछाकर सो गया। सोनेके पश्चात् सारी रात मुझे श्मशानघाटके स्वप्न आते रहे और मुर्दे आते तथा

जलते दिखलायी पड़ते रहे। प्रातःकाल उठनेपर मुझे बड़ी चिन्ता हुई कि आज ऐसे बुरे श्मशानघाटके स्वप्न क्यों मुझे दिखलायी पड़े। मैंने तुरंत ही उस चपरासीको अपने पास बुलाकर उससे पूछा—'भाई! बताओ, तुम मेरे सोनेके लिये यह बिस्तर कहाँसे लाये थे?' उत्तरमें चपरासीने कहा कि 'महाराज! एक सेठजीकी माता मर गयी थी, उन सेठजीने अपनी मरी हुई माताके निमित्त यह नया बिस्तर दानमें दिया था, वही मैंने आपको लाकर दे दिया।' मैं समझ गया कि दान चूँकि प्रेतात्माके निमित्त दिया गया था, इसलिये उस दान किये हुए बिस्तरमें भी प्रेत-भावना प्रवेश कर गयी और इसीसे मुझे रातभर श्मशानघाटकी बातें दिखलायी पड़ती रहीं। इससे यह सिद्ध होता है कि जो कर्म जिस भावनासे किये जाते हैं, उसके संस्कार उसमें जाग्रत् रहते हैं। इसलिये सबके हाथका खाना-पीना और सबके वस्त्रोंको काममें लेना कदापि उचित नहीं है।

[२] देश—स्थान या वातावरणका प्रभाव

वातावरणका और स्थानका भी मनपर बड़ा प्रभाव पड़ता है। जिस स्थानपर जैसा काम किया जाता है, वहाँपर वैसा ही वातावरण उत्पन्न हो जाता है। इसका अपना अनुभव मेरा इस प्रकार है—

मैं एक बार ऋषिकेशमें गया था और वहाँ एक रातको एक आश्रममें जाकर ठहरा। सो जानेपर मुझे रातभर पटवारियोंके सम्बन्धमें स्वप्न आते रहे और कभी जमाबंदीकी बातें तो कभी हिसाब-किताबकी बातें, जो पटवारी किया करते हैं, दिखलायी

पड़ती रहीं। प्रातःकाल जागनेपर मैं उस आश्रमके प्रबन्धकके पास गया और मैंने उनसे पूछा कि आपके इस स्थानपर अबसे पहले कौन आकर रहते थे। प्रबन्धकजीने बताया कि 'महाराज! इस स्थानपर ५-६ दिनोंतक बराबर बहुत-से पटवारी आकर रहे थे और वे यहाँपर जमाबंदीका काम करते रहे थे।' मैं समझ गया कि बस, उन्हीं पटवारियोंके संस्कार इस कमरेमें रह गये थे, जो मुझे रातभर सताते रहे। जहाँ मनकी सूक्ष्मता थी, वहीं उनका प्रभाव भी प्रकट हुआ। अतः हमारा मन चाहे जिस जगह बैठकर शुद्ध और स्थिर रह सकेगा, यह सोचना गलत है। सोच-समझकर और पवित्र वातावरणवाले स्थानमें रहकर भजन-पूजन करनेसे ही मन लगेगा और लाभ हो सकेगा। जहाँ मांसाहारी रहते हों, जहाँ मांस-मछली, अण्डे-मुर्गे खाये जाते हों और जहाँ गो-भक्षक लोग रहते हों तथा जहाँ अश्लील-गंदे गाने गाये जाते हों, व्यभिचार होता हो, वहाँ भला मन शुद्ध कैसे रह सकता है और कैसे भजन बन सकता है?

[३] परलोक, स्वर्ग, नरक, यमराज आदि सत्य हैं, गप नहीं

जो यह कहते हैं कि बस, यहींपर सब कुछ है, परलोक आदि कुछ नहीं है, न यमराज हैं, न यमदूत हैं और न स्वर्ग-नरक आदि हैं, वे वस्तुतः बड़े भ्रममें हैं। शास्त्रों, पुराणोंमें जो परलोक, स्वर्ग, नरक, यमराज, यमदूत आदिकी बातें आती हैं, वे सब अक्षरशः सत्य हैं। मेरी आँखों-देखी एक सत्य घटना इस प्रकार है—

सन् १९४६ की बात है, हमारे पूज्य पिताजी, जिनका शुभ नाम श्रीरक्खामलजी है, उस समय श्रीननकानासाहबमें रहते थे।

वहीं हमारा घर था। हम सब नित्यकी भाँति रात्रिमें सोये हुए थे और हमारे पूज्य पिताजी भी अपने पलंगपर सोये थे। पिताजी नित्य प्रातःकाल उठा करते थे, पर दूसरे दिन वे प्रातःकाल नहीं उठे। हमें बड़ी चिन्ता हुई। हमने जाकर देखा कि पिताजी पलंगपर पड़े हैं। हमने जोर-जोरसे आवाज दी तो भी वे बोले नहीं । हमने देखा उनका शरीर बिलकुल मुर्दे-जैसा हो रहा था। हम सब बहुत घबराये और उन्हें डॉक्टरोंको दिखाया। डॉक्टरोंने पिताजीको देखकर कहा कि 'इन्हें बहुत ही ज्यादा कमजोरी है।' उनका सारा शरीर पसीनेसे भीगा हुआ था और वे एकदम पीले पड़ गये थे। कुछ देर पश्चात् जब पिताजीको होश हुआ, तब उन्होंने बताया कि ५ बजेके लगभग दो यमदूत मुझे लेने आये थे और उन्होंने मुझसे कहा कि 'तुम हमारे साथ चलो।' मैं उनके साथमें चला गया। दूर जानेपर मैंने देखा कि एक बहुत बड़ा मैदान है, वहाँ एक मनुष्य बैठा है। उसने दूतोंसे कहा कि 'इसे मत लाओ, हमने तुम्हें इसे लानेके लिये नहीं कहा था। वह तो दूसरा रक्खामल अग्रवाल है, वह भी उसी मोहल्लेमें रहता है; उसे लाओ और इसे तुरंत वापस छोड़ आओ।' वे झटसे मुझे यहाँपर लाकर छोड़ गये, तबसे मेरे शरीरमें शक्ति नहीं रही।

यह बात कहाँतक सत्य है—हमने यह जाननेके लिये जब अपने मोहल्लेके रक्खामल अग्रवालका पता लगाया, तब ज्ञात हुआ कि रक्खामल अग्रवाल रातको बिलकुल ही अच्छे थे और अच्छी तरह खा-पीकर सोये थे। उनका ठीक सवा ५ बजे प्रातःकाल देहान्त हो गया। इस आँखों-देखी और अपने घरमें घटी सत्य घटनासे यह सिद्ध होता है कि यमराज, यमके दूत,

स्वर्ग, नरक आदि बिलकुल सत्य हैं। हमें अपने जीवनमें ऐसा कोई भी पापकर्म नहीं करना चाहिये, जिससे हमें यमराजके यहाँ जाकर अपने पापकर्मोंके फलस्वरूप नरककी घोर यातनाएँ भोगनी पड़ें और यमदूतोंकी मार सहनी पड़े। किसीके यह कह देनेसे कि स्वर्ग-नरकका कोई भय नहीं है—चाहे जो पाप करो, काम नहीं चलेगा और अन्तमें हाथ मल-मलकर पछताना तथा रोना होगा, इसलिये हमें अपने परलोकको कभी भी नहीं बिगाड़ना चाहिये और सदा-सर्वदा पापोंसे बचते रहना चाहिये। इसीमें हमारा सच्चा हित है।

[४] श्रीभगवच्चरणामृत सब व्याधियोंका विनाश करता है

श्रीभगवच्चरणामृतके प्रभावकी यह एक सत्य घटना है। मैं १५ जुलाई सन् १९५२ को टाइफायड ज्वरसे पीड़ित हो गया। रोग-निवारणके लिये उस समय जो भी सम्भव उपाय थे, सब किये गये; पर रोग-निवारण नहीं हुआ। बड़े-बड़े अंग्रेजी डॉक्टरोंको दिखाया गया और उनके बताये अनुसार औषधियोंका सेवन कराया गया और खूब रुपया-पैसा भी लुटाया गया, पर लाभ बिलकुल नहीं हुआ। उलटे रोग बढ़ता ही गया। अन्तमें १८ सितम्बरको सभी बड़े-बड़े डॉक्टरोंने कह दिया कि 'अब हमारे वशकी बात नहीं है। हमें जो इलाज करना था, सब कर चुके। अब इनके बचने और आराम होनेकी कोई आशा नहीं है? इसलिये इलाज कराना व्यर्थ है।' यों जब सभी बड़े-बड़े डॉक्टरोंने जवाब दे दिया और मेरे बचनेकी बिलकुल ही आशा नहीं रही, तब मैंने—

अकालमृत्युहरणं सर्वव्याधिविनाशनम्।
विष्णुपादोदकं पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते॥

—इस आधारपर श्रीभगवच्चरणामृतका सहारा लेना ही उचित समझा। मैंने समस्त देशी और अंग्रेजी औषधियोंको त्यागकर श्रीभगवच्चरणामृतका पान करना प्रारम्भ कर दिया। श्रीभगवत्-मन्दिरमें आदमी भेजकर नित्य श्रीभगवच्चरणामृत मँगाकर पीने लगा। श्रीभगवच्चरणामृतको पहले दिन पीते ही मैंने उसमें ऐसा अद्भुत चमत्कार पाया कि मैं चकित हो गया। उसी दिनसे बुखार कम होना शुरू हो गया और एक सप्ताहके भीतर ही मेरा ज्वर बिलकुल ही जाता रहा। यह श्रीभगवच्चरणामृतका अद्भुत दिव्य चमत्कार देख सभी प्रेमी तथा मिलनेवाले आश्चर्यचकित हो गये। मैंने तो इसी दृष्टिसे श्रीभगवच्चरणामृत पीना प्रारम्भ किया था कि या तो अब मुझे इस भगवच्चरणामृतसे आराम हो जायगा अथवा यदि आराम नहीं होगा तो कम-से-कम मेरी अधोगति तो अब कदापि नहीं होगी। इस श्रीभगवच्चरणामृतमें बड़ी ही अद्भुत दिव्य शक्ति विद्यमान है। शास्त्रोंमें हमारे ऋषि-महर्षियोंने जो वर्णन किया है, वह बिलकुल ही सत्य है। यदि वास्तवमें मनुष्यको चरणामृतमें श्रद्धा और विश्वास हो तो चरणामृतके प्रतिदिनके पानसे मनुष्यको दीर्घ आयु और स्वस्थ जीवन तथा सद्गति—तीनों ही प्राप्त हो सकती है।

इस प्रकार मेरे आराम होनेकी बात सुनकर डॉक्टरोंको बड़ा आश्चर्य हुआ और वे दौड़े-दौड़े मेरे पास आये और पूछने लगे कि 'महाराज! हमने तो आपके जीवनकी बिलकुल ही आशा छोड़ दी थी, अब आपको कैसे आराम हो गया और आपने क्या

औषध ली सो बताइये।' मैंने जब श्रीभगवत्-मन्दिरके चरणामृतका पान करनेकी बात सुनायी, तब वे दंग रह गये और दाँतोंतले अँगुली दबाने लगे। वे बोले—'महाराज! हमने जो आपको टाइफायड बताया था, वह वास्तवमें टाइफायड नहीं था; वह तो ऐसा भयानक ज्वर था कि उसमें कोई भी रोगी आजतक बचा ही नहीं। आपके इस श्रीभगवत्-मन्दिरके चरणामृतके अद्भुत चमत्कारने तो बड़े-बड़े वैज्ञानिकोंको चुनौती दी है!'

यह है श्रीभगवच्चरणामृतका अद्भुत चमत्कार, जिसने मेरे प्राणोंको बचाया और जिसने मुझे बिलकुल ही नीरोग बना दिया। हमारे पूज्य प्रात:स्मरणीय ऋषि-महर्षियोंने शास्त्रोंमें रत्न भर दिये हैं, जिनकी आज हम कदर नहीं करते—यह हमारा कितना बड़ा दुर्भाग्य है। भाइयो! अब भी चेतो! और अपने सनातनधर्मका, वेद-शास्त्रोंका, पुराणोंका, अपने ऋषि-महर्षियोंका, गो-ब्राह्मणोंका मान-सम्मान और उनपर श्रद्धा करना सीखो; इसीमें सच्चा कल्याण है। बोलो सनातनधर्मकी जय!

~~~o~~~
~~~

धर्मकी बलिवेदीपर

[एक सच्ची रोमाञ्चकारी घटना]

घटना सन् १९४७ की है। भारतमाताका अङ्ग भङ्ग होकर पाकिस्तान बननेकी घोषणा होते ही समस्त पंजाब, सिन्ध और बंगालमें मुसलिम गुंडोंने हिन्दुओंको मारना-काटना तथा ग्रामोंको आगकी लपटोंमें भस्मीभूत करना प्रारम्भ कर दिया था। हिन्दुओंको या तो तलवारके बलपर हिन्दू-धर्म छोड़कर मुसलमान बननेको बाध्य किया जा रहा था, अन्यथा उन्हें मार-काटकर भगाया जा रहा था।

पंजाबके ग्राम टहलराममें भी मुसलमानोंने हिन्दुओंको आतङ्कित करना प्रारम्भ कर दिया। गुंडोंकी एक सशस्त्र भीड़ने हिन्दुओंके घरोंको घेर लिया तथा उनके सम्मुख प्रस्ताव रखा कि—'या तो सामूहिक रूपसे कलमा पढ़कर मुसलमान हो जाओ, अन्यथा सभीको मौतके घाट उतार दिया जायगा।' बेचारे बेबस हिन्दुओंने सोचा कि जबतक हिन्दू मिलिट्री न आये, उतने समयतक कलमा पढ़नेका बहाना करके जान बचायी जाय। उन्होंने मुसलमानोंके कहनेसे कलमा पढ़ लिया, किंतु मनमें 'राम-राम'का जप करते रहे।

'ये काफ़िर हमें धोखा दे रहे हैं। हिन्दू सेना आते ही जान बचाकर भाग जायँगे। इन्हें गोमांस खिलाकर इनका धर्म भ्रष्ट किया जाय और जो गोमांस न खाय, उसे मौतके घाट उतार दिया जाय।'—एक शरारती मुसलमानने उन्मादी मुसलमानोंकी भीड़को सम्बोधित करते हुए कहा।

'ठीक है, इन्हें गोमांस खिलाकर इनकी परीक्षा की जाय।' मुसलमानोंकी भीड़ने समर्थन किया।

मुसलमानोंने गाँव टहलरामके प्रतिष्ठित व्यक्ति तथा हिन्दुओंके नेता पं० बिहारीलालजीसे कहा—'आप सभी लोग गोमांस खाकर यह सिद्ध करें कि आप हृदयसे हिन्दू-धर्म छोड़कर मुसलमान हो गये हैं। जो गोमांस नहीं खायेगा, उसे हम काफ़िर समझकर मौतके घाट उतार डालेंगे।'

पं० बिहारीलालजीने मुसलिम गुंडोंके मुखसे गोमांस खानेकी बात सुनी तो उनका हृदय हाहाकार कर उठा! उन्होंने मनमें विचार किया कि धर्मकी रक्षाके लिये प्राणोत्सर्ग करने, सर्वस्व समर्पित करनेका समय आ गया है। उनकी आँखोंके सम्मुख धर्मवीर हकीकतराय तथा गुरु गोविन्दसिंहके पुत्रोंद्वारा धर्मकी रक्षाके लिये प्राणोत्सर्ग करनेकी झाँकी उपस्थित हो गयी। वीर बंदा वैरागीद्वारा धर्मकी रक्षाके लिये अपने शरीरका मांस गरम-गरम चिमटोंसे नुचवाये जानेका दृश्य सामने आ गया।

पं० बिहारीलालजीने विचार किया कि इन गो-हत्यारे, धर्म-हत्यारे म्लेच्छोंके अपवित्र हाथोंसे मरनेकी अपेक्षा स्वयं प्राण देना अधिक अच्छा है। हमारे प्राण रहते ये म्लेच्छ हमारी बहिन-बेटियोंको उड़ाकर न ले जायँ और उनके पवित्र शरीरको इन पापात्माओंका स्पर्श भी न हो सके, ऐसी युक्ति निकालनी चाहिये।

पं० बिहारीलालजीने मुसलमानोंसे कहा कि 'हमें चार घंटेका समय दो, जिससे सभीको समझाकर तैयार किया जा सके।' मुसलमान तैयार हो गये।

पं० बिहारीलालजीने घर जाकर अपने समस्त परिवारवालोंको एकत्रित किया। घरके एक कमरेमें पत्नी, बहिन, बेटियाँ,

बालक, बूढ़े—सभीको एकत्रित करके बताया कि 'मुसलमान नराधम गोमांस खिलाकर हमारा प्राणप्रिय धर्म भ्रष्ट करना चाहते हैं। अब एक ओर गोमांस खाकर धर्म भ्रष्ट करना है, दूसरी ओर धर्मकी रक्षाके लिये प्राणोत्सर्ग करना है। सभी मिलकर निश्चय करो कि दोनोंमेंसे कौन-सा मार्ग अपनाना है।'

सभी स्त्री-पुरुष, बाल-वृद्धोंने निर्भीकतापूर्वक उत्तर दिया—'गोमांस खाकर, धर्मभ्रष्ट होकर परलोक बिगाड़नेकी अपेक्षा धर्मकी बलिवेदीपर प्राण देना अच्छा है। हम सभी मृत्युका आलिङ्गन करनेके लिये तैयार हैं।'

पं० बिहारीलालजीने महिलाओंको आदेश दिया—'तुरंत नाना प्रकारके सुस्वादु भोजन बनाओ और भगवान्‌को भोग लगाकर खूब छककर खाओ, अन्तिम बार खाओ और फिर वस्त्राभूषण पहनकर धर्मकी रक्षाके लिये मृत्युसे खेलनेके लिये मैदानमें डट जाओ।'

तुरंत तरह-तरहके सुस्वादु भोजन बनाये जाने लगे। भोजन बननेपर ठाकुरजीका भोग लगाकर सबने डटकर भोजन किया तथा अच्छेसे वस्त्र पहिने। सजकर एवं वस्त्राभूषण धारण करके सभी एक लाइनमें बराबर-बराबर खड़े हो गये। सभीमें अपूर्व उत्साह व्याप्त था। पं० बिहारीलालजीका समस्त परिवार गो-रक्षार्थ, धर्म-रक्षार्थ प्राणोंपर खेलकर सीधे गोलोकधाम जानेके लिये शीघ्रातिशीघ्र मृत्युका आलिङ्गन करनेके लिये व्याकुल हो रहा था।

सभीको एक लाइनमें खड़ा करके पं० बिहारीलालजीने कहा—'आज हमें हिन्दूसे मुसलमान बनाने और अपनी पूज्या गोमाताका मांस खानेको बाध्य किया जा रहा है। हमें धमकी दी गयी है कि यदि हम गोमांस खाकर मुसलमान न बनेंगे तो सभीको मौतके घाट उतार दिया जायगा। हम सभी अपने

प्राणप्रिय सनातन-धर्मकी रक्षाके लिये—गोमाताकी रक्षाके लिये हँसते-हँसते बलिदान होना चाहते हैं।'

सबने श्रीभगवत्स्मरण किया और पं० बिहारीलालजीने अपनी बंदूक उठाकर धायँ! धायँ!! करके अपनी धर्मपत्नी, पुत्रियों, बन्धु-बान्धवों तथा अन्य सभीको गोलीसे उड़ा दिया। किसीके मुखसे उफ्तक न निकली—हँसते हुए, मुस्कराते हुए गो-रक्षार्थ, धर्म-रक्षार्थ सबने प्राणोत्सर्ग कर दिया। घर लाशोंके ढेरसे भर गया।

अब पं० बिहारीलाल एवं उनके भाई दो व्यक्ति ही जीवित थे। दोनोंमें आपसमें संघर्ष हुआ कि 'पहले आप मुझे गोली मारें; दूसरेने कहा नहीं', 'पहले आप मुझे गोलीका निशाना बनायें।' अन्तमें दोनोंने अपने-अपने हाथोंमें बंदूक थामकर आमने-सामने खड़े होकर एक-दूसरेपर गोली दाग दी। पूरा परिवार ही धर्मकी रक्षाके लिये प्राणोत्सर्ग कर अमर हो गया!

ग्रामके अन्य हिन्दुओंने जब पं० बिहारीलालजीके परिवारके इस महान् बलिदानको देखा तो उनका भी खून खौल उठा। वे भी धर्मपर प्राण देनेको मचल उठे। मुसलमान शरारतियोंके आनेसे पूर्व ही हिन्दुओंने जलकर, कुओंमें कूदकर एवं मकानकी छतसे छलाँग लगाकर प्राण दे दिये, किंतु गोमांसका स्पर्शतक नहीं किया।

मुसलमानोंकी भीड़ने जब कुछ समय पश्चात् पुनः ग्राम टहलराममें प्रवेश किया, तब उन्होंने ग्रामकी गली-गलीमें हिन्दू वीरोंकी लाशें पड़ी देखीं। पं० बिहारीलालके मकानमें घुसनेपर लाशोंका ढेर देखकर तो गुंडे दाँतोंतले अँगुली दबा उठे।

~~○~~
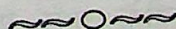
श्रीरामभक्त छिनकूका अनूठा बलिदान

प्राचीन समयकी बात है, जब भारतमें यवन-शासन अपने पूरे प्रभुत्वमें था और प्रभुताके मदमें शासक अनेक प्रकारके अत्याचार करते थे। उस समय बहावलपुर राज्यमें छिनकू नामक एक भगवद्भक्त रहते थे। वे सत्यवादी, ईमानदार तथा राम-नामके नैष्ठिक जापक थे। वे आटा, दाल, घी, मसाला आदि गल्ले-किरानेकी दूकान करते थे। उनकी दूकान अपने पदार्थोंकी शुद्धताके लिये प्रसिद्ध थी। वे केवल शामको दो घंटेके लिये ही दूकान खोलते थे एवं शेष समय श्रीराम-भजनमें व्यतीत करते थे।

एक दिन सबेरे एक मुसलमान छिनकूजीके घर पहुँचा और उसने उसी समय दूकान खोलकर कुछ सामान देनेकी माँग की। उस समय भक्त छिनकू भजनमें लगे थे। उन्होंने उसे शामको आनेके लिये कहा और तत्काल दूकान जानेमें असमर्थता प्रकट की। मुसलमान चिढ़ गया। उसने छिनकूजीको ही नहीं, उनके आराध्यको भी बुरा-भला कहा। छिनकूजी बोले—'अगर यही शब्द मैं तुम्हारे धर्मग्रन्थ और पैगम्बरको कहूँ तो कैसा लगेगा?'

मुसलमान—'तुम्हारी इतनी जुर्रत है? मैं तुम्हें देख लूँगा।'

वह मुसलमान काजीके पास पहुँचा और उसने वहाँ अभियोग लगाया कि छिनकूने पैगम्बरको गाली दी है। उस समयके नवाब बहावलपुर भले स्वभावके थे। वे छिनकू भक्तको

जानते थे और उनमें श्रद्धा रखते थे। उन्होंने छिनकूके पास संदेश भेजा—'आप साफ कह दें कि मैंने कुछ नहीं कहा।' लेकिन छिनकू भक्तने झूठ बोलना स्वीकार नहीं किया। उन्होंने काजीके सामने अपने शब्द दोहरा दिये। काजीने उनको 'संगसार' कर देने (पत्थर मार-मारकर मार देने)-की सजा दी।

छिनकू भक्तको पकड़कर एक मैदानमें ले जाकर एक खम्भेसे बाँध दिया गया। उधरसे आने-जानेवाले मुसलमान उन्हें पत्थर मारने लगे। छिनकू ज़ोर-जोरसे अखण्ड 'श्रीराम-श्रीराम' बोल रहे थे। पत्थरोंकी मारसे उनका पूरा शरीर घावोंसे भर गया। रक्तकी धारा शरीरसे चलने लगी। संध्याको एक मुसलमान सैनिक उधरसे निकला। वह छिनकूसे परिचित था। उससे भक्तकी यह असहनीय दशा देखी नहीं गयी। उसने तलवारसे उनका सिर काटकर उन्हें इस अवस्थासे छुट्टी दे दी। किंतु उसे तथा दूसरोंको भी यह देखकर आश्चर्य हुआ कि छिनकूका कटा सिर तो 'श्रीराम' बोलता ही था, उनके मस्तकहीन धड़से भी देरतक 'श्रीराम' की ध्वनि निकलती रही।

~~~o~~~
~~~
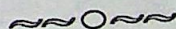
काठियावाड़-नरेशकी धर्मशास्त्रनिष्ठा

हमारे धर्मप्राण भारतदेशके क्षत्रिय राजा पहले बड़े कट्टर सनातनधर्मी, सदाचारपरायण, पूर्ण शास्त्रविश्वासी, गो-ब्राह्मण-प्रतिपालक और परम सदाचारी, प्रजापालक हुआ करते थे। इस सम्बन्धकी एक ऐतिहासिक सत्य घटना यहाँ दी जा रही है। आशा है, पाठक इस सत्य घटनासे कुछ शिक्षा लेकर अपना जीवन सदाचारमय बनानेका प्रयत्न करेंगे।

एक दिन काठियावाड़के महाराज अपने राजमहलकी छतपर इधर-से-उधर टहल रहे थे। राजा साहब बड़े ही धार्मिक प्रवृत्तिके और परम सदाचारी तथा महान् जितेन्द्रिय थे। वे अपनी प्रजाको पुत्रवत् मानकर उसका पालन किया करते थे। सहसा उनकी दृष्टि एक सुन्दर नवयुवतीपर पड़ी, जो अपने मकानकी छतपर स्नान कर रही थी। राजाके मनमें कुछ विकार आया और वे उस नवयुवतीकी ओर अपलक देखते रहे। जब वह नवयुवती स्नान करके मकानकी छतसे नीचे उतर गयी तो राजा साहब महलकी छतपर बैठकर कुछ सोचते रहे। कुछ क्षणोंके पश्चात् राजा साहब नीचे उतरे और उन्होंने अपने कर्मचारीको भेजकर अपने ब्राह्मण राजपुरोहितको अपने पास बुलवाया। राजपुरोहितके आ जानेपर राजाने उन्हें प्रणाम किया और बड़े ही विनम्र शब्दोंमें प्रश्न किया—

राजा साहब—'महाराज! यदि कोई पिता अपनी पुत्रीको कुदृष्टिसे देखे तो उस व्यक्तिको क्या दण्ड देना चाहिये?'

राजपुरोहितने महाराजको बताया—'महाराज! इस प्रकारके राक्षसके लिये शास्त्रोंमें मृत्युदण्ड देनेका विधान आया है। महाराजने पुनः प्रश्न किया कि 'यदि कोई राजा अपनी प्रजाकी पुत्रीको कुदृष्टिसे देखे तो उस राजाको क्या दण्ड मिलना चाहिये?'

राजपुरोहितने उत्तर देते हुए कहा—'उस राजाको भी मृत्युदण्ड ही मिलना चाहिये; क्योंकि राजाके लिये प्रजाकी पुत्रियाँ भी अपनी ही पुत्रियोंके समान होती हैं।'

राजाने प्रातःकालकी घटी घटना उन राजपुरोहितको आद्योपान्त कह सुनायी। इसपर उन राजपुरोहितने व्यवस्था दी कि शास्त्रोक्त-विधानके अनुसार राजाको जिन्दा जलाना चाहिये।

परम सदाचारी राजाने राजपुरोहितद्वारा शास्त्रानुसार प्राप्त इस दण्डको सहर्ष स्वीकार किया।

दूसरे दिन प्रातः राजा चिताके सामने अपना मुँह नीचे किये हुए खड़े थे। मन दुराचारमें प्रवृत्त होनेके कारण उन्हें जिन्दा अग्निमें जलकर मरना होगा—इसका उन्हें तो तनिक भी दुःख नहीं हो रहा था, लेकिन सारे नगरमें और सारे राजपरिवारमें उत्तेजना तथा महान् शोकका वातावरण व्याप्त था। चारों ओर जिधर भी देखो यही कानाफूसी और तरह-तरहकी अफवाहें जारी थीं। बहुत-से व्यक्ति राजपुरोहितको बुरा-भला कहने लगे कि उन्होंने हमारे प्रिय राजाको मानसिक पापका ऐसा कड़ा दण्ड देनेकी व्यवस्था दी और कुछ लोग शास्त्रोंको ही कोसने लगे, पर निर्णय तो निर्णय ही था। चितामें आग लगायी गयी। झटसे राजाने अपने कुलदेवताका ध्यान किया और अग्निमें प्रवेश करनेके लिये अपना पग बढ़ाया तो वहाँपर एकत्र लोगोंकी चीखें निकल गयीं और राजपत्नियोंने बड़ी बुरी

तरहसे रोते हुए महाराजके पैर पकड़ लिये और वे महाराजको चितामें प्रवेश करनेसे रोकने लगीं। इधर प्रजा भी बड़ी जोरसे दहाड़ मार-मारकर रोने लगी और हाहाकार करने लगी।

ठीक उसी समय झटसे राजपुरोहित कुछ आगे बढ़े और उन्होंने राजा साहबको सम्बोधित करते हुए कहा—'राजन्! ठहरो, चितामें प्रवेश न करो।'

'क्यों पुरोहितजी महाराज! ऐसा क्यों?' राजाने पूछा।

इसलिये कि राजन्! आपके पापका प्रायश्चित्त हो गया है। कब हो गया और कैसे हो गया महाराज, मैं कुछ समझ नहीं पाया, राजाने पूछा।

राजाकी इस जिज्ञासाका पुरोहितने उत्तर देते हुए कहा—'महाराज! आपने अपना अपराध मुझे बता दिया है और इतना ही नहीं समस्त प्रजाको भी इसका पता लग गया है, अतः यह प्रकटीकरण ही प्रायश्चित्तरूप है। आपने पाप किया नहीं था, आपका मन पापमें और दुराचारमें केवल प्रवृत्त हुआ था और वह मनसे सम्बद्ध था, इस प्रकार उस पापका प्रायश्चित्त हो गया है।'

यह शास्त्रीय व्यवस्था सुनकर और मनके किये गये पापका प्रायश्चित्त हो जानेपर राजा पीछे लौटे और प्रजा एकदमसे आनन्दविभोर हो गयी। सभी लोग राजाके सदाचारकी भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगे और अपने-अपने घरोंको लौट गये। सबके मुखसे यही निकला कि राजा हो तो ऐसा हो, जैसे कि हमारे ये महाराज हैं!

क्या इस सच्ची घटनासे हम कुछ सीख लेंगे? तो इसका उत्तर हमें अपनी अन्तरात्मासे ही मिल पायगा।

~~~0~~~
~~~

मुझे अशर्फियोंके थाल नहीं, मुट्ठीभर आटा चाहिये

पण्डित श्रीरामजी महाराज संस्कृतके महान् विद्वान् थे। संस्कृत आपकी मातृभाषा थी। आपका सारा परिवार संस्कृतमें ही बातचीत करता था। आपके यहाँ सैकड़ों पीढ़ियोंसे इसी प्रकार संस्कृतमें ही बातचीत करनेकी परम्परा चली आयी थी। आपके पूर्वजोंकी यह प्रतिज्ञा थी कि हम न तो संस्कृतको छोड़कर एक शब्द दूसरी भाषाका बोलेंगे और न सनातनधर्मको छोड़कर किसी भी मत-मतान्तरके चक्करमें फँसेंगे। मुट्ठी-मुट्ठी आटा माँगकर पेट भरना पड़े तो भी चिन्ता नहीं, भिखारी बनकर भी देववाणी संस्कृतकी, वेद-शास्त्रोंकी और सनातनधर्मकी रक्षा करेंगे। इस प्रतिज्ञाका पालन करते हुए पं० श्रीरामजी महाराज अपनी धर्मपत्नी तथा बाल-बच्चोंको लेकर श्रीगङ्गाजीके किनारे-किनारे विचरा करते थे। पाँच-सात मील चलकर सारा परिवार गाँवसे बाहर किसी देवमन्दिरमें या वृक्षके नीचे ठहर जाता। ये गाँवमें जाकर आटा माँग लेते और रूखा-सूखा जैसा होता, अपने हाथोंसे बनाकर भोजन पा लेते। अगले दिन फिर श्रीगङ्गाजीके किनारे आगे बढ़ जाते। अवकाशके समय बच्चोंको संस्कृतके ग्रन्थ पढ़ाते जाते तथा स्तोत्र कण्ठस्थ कराते।

एक बार श्रीरामजी महाराज घूमते-घामते एक राजाकी रियासतमें पहुँच गये और गाँवसे बाहर एक वृक्षके नीचे ठहर गये। दोपहरको शहरमें गये और मुट्ठी-मुट्ठी आटा कई घरोंसे माँग लाये। उसीसे भोजन बनने लगा। आपकी धर्मपत्नी भी पतिव्रता थीं और बच्चे भी ऋषि-पुत्र थे। अकस्मात् राजपुरोहित उधर आ निकले। उन्होंने देखा कि एक ब्राह्मणपरिवार वृक्षके नीचे ठहरा हुआ है। माथेपर तिलक,

गलेमें यज्ञोपवीत सिरपर लम्बी चोटी, ऋषि-मण्डली-सी प्रतीत हो रही है। पास आकर देखा तो रोटी बनायी जा रही है। छोटे बच्चे तथा ब्राह्मणी सभी संस्कृतमें बोल रहे हैं। हिन्दीका एक अक्षर न तो समझते हैं, न बोलते हैं। राजपुरोहितको यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ। राजपुरोहितजीने पं० श्रीरामजी महाराजसे संस्कृतमें बातें कीं। उनको यह जानकर और भी आश्चर्य हुआ कि आजसे नहीं, सैकडों वर्षोंसे इनके पूर्वज संस्कृतमें बोलते चले आ रहे हैं और संस्कृतकी, धर्मकी तथा वेद-शास्त्रोंकी रक्षाके लिये ही भिखारी बने मारे-मारे डोल रहे हैं। राजपुरोहितने आकर सारा वृत्तान्त राजा साहबको सुनाया तो राजा साहब भी सुनकर चकित हो गये। उन्होंने पुरोहितसे कहा कि 'ऐसे ऋषि-परिवारको महलोंमें बुलाया जाय और मुझे परिवारसहित उनके दर्शन-पूजन करनेका सौभाग्य प्राप्त कराया जाय।'

राजा साहबको साथ लेकर राजपुरोहित उनके पास आये और उन्होंने राजमहलमें पधारनेके लिये हाथ जोड़कर प्रार्थना की। पण्डितजीने कहा कि 'हमें राजाओंके महलोंमें जाकर क्या करना है। हम तो श्रीगङ्गाजीके किनारे विचरनेवाले भिक्षुक ब्राह्मण हैं।' राजा साहबके बहुत प्रार्थना करनेपर आपने अगले दिन सपरिवार राजमहलमें जाना स्वीकार कर लिया। इससे राजाको बड़ी प्रसन्नता हुई और उन्होंने स्वागतकी खूब तैयारी की। अगले दिन जब यह ऋषि-परिवार आपके यहाँ पहुँचा, तब वहाँ हजारों स्त्री-पुरुषोंका जमघट हो गया। बड़ी श्रद्धा-भक्तिके साथ श्रीरामजी महाराज, आपकी धर्मपत्नी और बच्चोंको लाया गया और सुवर्णके सिंहासनोंपर बैठाया गया। राजा साहबने स्वयं अपनी रानीसहित सोनेके पात्रोंमें ब्राह्मणदेवता, ब्राह्मणी तथा बच्चोंके चरण धोकर पूजन किया, आरती उतारी और चाँदीके थालोंमें सोनेकी अशर्फियाँ और हजारों रुपयोंके बढ़िया-बढ़िया दुशाले लाकर सामने रख दिये। सबने यह देखा कि

उस ब्राह्मण-परिवारने उन अशर्फियों और दुशालोंकी ओर ताकातक नहीं। जब स्वयं राजा साहबने भेंट स्वीकार करनेके लिये करबद्ध प्रार्थना की, तब पण्डितजीने धर्मपत्नीकी ओर देखकर पूछा कि 'क्या आजके लिये आटा है?' ब्राह्मणीने कहा—'नहीं तो।' आपने राजा साहबसे कहा कि 'बस आजके लिये आटा चाहिये। ये अशर्फियोंके थाल और दुशाले मुझे नहीं चाहिये।'

राजा साहब—'महाराज! मैं क्षत्रिय हूँ, दे चुका, स्वीकार कीजिये।'

पण्डितजी—मैं ले चुका, आप वापस ले जाइये।

राजा साहब—क्या दिया हुआ दान वापस लेना उचित है?

पण्डितजी—त्यागी हुई वस्तुका क्या फिर ग्रहण करना उचित है?

राजा साहब—महाराज! मैं अब क्या करूँ?

पण्डितजी—मैं भी लाचार हूँ।

राजा साहब—यह आप ले ही लीजिये।

पण्डितजी—राजा साहब! हम ब्राह्मणोंका धन तो तप है। इसीमें हमारी शोभा है, वह हमारे पास है। आप क्षत्रिय हैं, हमारे तपकी रक्षा कीजिये।

राजा साहब—क्या यह उचित होगा कि एक क्षत्रिय दिया हुआ दान वापस ले ले? क्या इससे सनातनधर्मको क्षति नहीं पहुँचेगी?

पण्डितजी—अच्छा इसे हमने ले लिया, अब इसे हमारी ओरसे अपने राजपुरोहितको दे दीजिये। हमारे और आपके—दोनोंके धर्मकी रक्षा हो गयी।

सबने देखा कि ब्राह्मण-परिवार एक सेर आटा लेकर और सोनेकी अशर्फियोंसे भरे चाँदीके थाल, दुशालोंको ठुकराकर जंगलमें चला जा रहा है और फिर वेदपाठ करनेमें संलग्न है!

~~~o~~~
~~~

व्रजवासियोंके टुकड़ोंमें जो आनन्द है, वह अन्यत्र कहीं नहीं है

श्रीवृन्दावनधामके बाबा श्रीश्रीरामकृष्णदासजी महाराज बड़े ही उच्चकोटिके महापुरुष थे। आप गौड़ीय सम्प्रदायके महान् विद्वान्, त्यागी और तपस्वी संत थे। आप प्रात:काल चार बजे श्रीयमुनाजीमें स्नान करके अपनी गुफामें बैठा करते थे और भजन-ध्यान करके संध्याके समय बाहर निकलते थे। आप स्वयं व्रजवासियोंके घर जाकर सूखे टूक माँग लाते और श्रीयमुनाजलमें भिगोकर उन्हें पा लेते। फिर भजन-ध्यानमें लग जाते। बड़े-बड़े राजा-महाराजा, करोड़पति सेठ आपके दर्शनार्थ आते; पर आप लाख प्रार्थना करनेपर भी न तो व्रजसे कहीं बाहर जाते और न किसीसे एक पाई लेते तथा न किसीका कुछ खाते। मिट्टीका करवा, कौपीन और व्रजके टूक—यही आपकी सम्पत्ति थी। एक दिन मोटरकारमें राजस्थानके एक राजा साहब आये। उनके साथ फलोंसे भरे कई टोकरे थे। टोकरोंको नौकरोंसे उठवाकर राजा साहब बाबाके पास पहुँचे और साष्टाङ्ग प्रणाम करके उन्होंने टोकरे सामने रखवा दिये। बाबाने पूछा—'कहाँ रहते हो?'

राजा साहब—जयपुर-जोधपुरकी तरफ एक छोटी-सी रियासत है।

बाबा—क्यों आये?

राजा साहब—दर्शन करनेके लिये।

बाबा—इन टोकरोंमें क्या है?

राजा साहब—इनमें सेब, संतरे, अनार, अंगूर आदि फल हैं।

बाबा—इन्हें क्यों लाये?

राजा साहब—महाराज! आपके लिये।

बाबा—हम इनका क्या करेंगे?

राजा साहब—महाराज! इन्हें पाइये।

बाबा—भाई! हमें इन फलोंसे क्या मतलब। हम तो व्रज-चौरासीको छोड़कर इन्द्र बुलाये तो भी न तो कहीं जायँगे और न व्रजवासियोंके घरोंसे माँगे टूक छोड़कर छप्पन प्रकारके भोजन मिलते हों तो उनकी ओर आँख उठाकर देखेंगे। हम तो अपने लालाके घरमें हैं और उसीके घरके व्रजवासियोंके टूक माँगकर खाते हैं तथा लालाका स्मरण करते हैं। हमें तुम्हारे यह फल आदि नहीं चाहिये। इन्हें ले जाकर और किसीको दे दो। भैया! कन्हैयाके इन व्रजवासियोंके सूखे टुकड़ोंमें जो आनन्द है, वह अन्यत्र कहीं भी नहीं है।

राजा साहब यह सुनकर चकित हो गये।
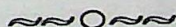
बाबा! शेर बनकर गीदड़ क्यों बनते हो?

प्रसिद्ध संत श्रीतपसीबाबाजी महाराज उच्च कोटिके तपस्वी संत थे। उन्हें जो भी रूखा-सूखा मिल जाता, उसीसे पेट भर लेते और निरन्तर भजन-ध्यानमें लगे रहते। सब कुछ त्याग होनेपर भी आपने देखा कि मुझसे और सब तो छूट गया, पर दूध पीनेकी इच्छा बनी रहती है, दूध पिये बिना चैन नहीं पड़ता और इससे भजनमें बड़ा विघ्न पड़ता है। अत: आपने एक दिन अपने मनको कड़ी लताड़ देते हुए कहा—मैं आज प्रतिज्ञा करता हूँ, जीवनभर कभी दूध नहीं पीऊँगा। इसीके साथ अन्न-फल-फूल आदि खाना भी छोड़ दिया और सारे शरीरके वस्त्र भी उतारकर फेंक दिये। वस्त्रोंकी जगह आप मूँजकी लँगोटी बाँधा करते थे और शरीरपर भस्म लगाया करते थे। भोजनमें वृक्षोंके पत्ते धूनीमें उबालकर उनका गोला बनाकर खा लिया करते थे। इस प्रकारके कड़े नियमोंका लगातार पैंतालीस वर्षोंतक पालन होता रहा। हजारों दर्शनार्थी आते रहते, पर आप न तो किसीसे कुछ लेते और न किसीसे बातें ही करते। हर समय तपस्यामें संलग्न रहते। पैंतालीस वर्ष पश्चात् एक दिन आपका मन दूधकी ओर चला और दर्शन करने आयी हुई एक माईसे आपने कहा—आज रात्रिको हम दूध पीयेंगे। वह माई धनी घरानेकी थी और बड़ी ही बुद्धिमती भी थी। उसे यह पता लग चुका था कि महाराजजीने जीवनभर दूध न पीनेकी प्रतिज्ञा की है।

माईने कहा कि 'अच्छा महाराज! रात्रिको दूध आ जायगा।' उसने पंद्रह-बीस घड़े भरकर दूध मँगवाया और उनमें मीठा मिलाकर बाबाकी कुटियाके बाहर लाकर रखवा दिया। जब बाबा कुटियामेंसे तपस्या करके बाहर निकले, तब माईने हाथ जोड़कर कहा—'महाराज! मैं लोभी नहीं हूँ। आपके लिये दूधके अनेक घड़े भरकर लायी हूँ। चाहे जितना दूध आप पीयें। दूधकी कमी नहीं है, पर प्रभो! एक बात याद रखिये। आज आप शेरसे गीदड़ बनने क्यों जा रहे हैं? पैंतालीस वर्षतक जिस प्रतिज्ञाको आपने निभाया, अब अन्तिम समय उसे भंग करके कायरताका परिचय क्यों दे रहे हैं?' बाबाकी आँखें खुल गयीं। अरे, मन कितना धोखेबाज है, कितना चालाक है। मैं समझ गया। बाबा माईके चरणोंमें झुक गये। 'देवी! तुमने इस पापी मनके जालसे मुझे बचा लिया। नहीं तो, मैं आज मारा जाता। इस मनीरामका कभी विश्वास नहीं करना चाहिये। यह न जाने कब धोखा दे दे।'

~~○~~

तुलसी-चरणामृतने जीवन बचाया

एक बार नवद्वीप (उड़ीसा)-में भयंकर बाढ़ आयी। सिद्ध संत बाबा जगन्नाथदासजी अपने भक्त बिहारी बाबाके साथ नवद्वीपमें ही डटे रहे। बाढ़का पानी बढ़ता गया। उससे बीमारियाँ फैलने लगीं। बिहारी बाबा ज्वरग्रस्त हो गये। उनकी हालत बिगड़ने लगी। बाबा जगन्नाथदासजीके परम भक्त श्रीप्यारे मोहनगोस्वामीको बिहारी बाबाकी गम्भीर हालतका पता चला तो वे कोलकातासे एक डॉक्टरको लेकर नवद्वीपमें पहुँचे। डॉक्टरने जाँचके बाद कहा—'हालत इतनी खराब हो चुकी है कि रातको ही इनका प्राणान्त हो जायगा।'

बाबा जगन्नाथदास सिद्ध संत थे। उन्होंने डॉक्टरको चुनौतीभरे शब्दोंमें कहा—'आपकी अंग्रेजी चिकित्सापद्धति हार गयी तो क्या बात है, अब इसकी चिकित्सा मेरा गिरधारी करेगा। बाबा उनके पास माला लेकर बैठ गये। गिरधारीकी चरणतुलसी मँगाकर बिहारी बाबाके मुखमें डाली और बोले—'मैं यहाँ बैठा हूँ, भगवन्नामका जप कर रहा हूँ, देखता हूँ कि किसमें ताकत है, जो मेरे प्रिय बिहारीको यहाँसे ले जाय?'

कुछ ही मिनट बाद बिहारी बाबाने आँखें खोलीं और उठ बैठे। बाबा जगन्नाथदासने कहा—'अरे, तू कहाँ जा रहा था मुझे छोड़कर? मैंने बीसों दिनसे मुँह भी नहीं धोया, चल उठकर भगवान्‌का प्रसाद तैयार कर। गिरधारीका भोग लगाकर हम दोनों प्रसाद ग्रहण करेंगे।' और वास्तवमें बिहारी बाबा उठ खड़े हुए तथा प्रसाद तैयार करके, भोग लगाया और दोनोंने ग्रहण किया।

~~~o~~~
~~~

एक वैद्यने अनूठे ढंगसे राजाको नीरोग बनाया

एक रियासतके राजा अचानक गम्भीर रूपसे अस्वस्थ हो गये। भूख-प्यास पूरी तरह समाप्त हो जानेसे उनका शरीर पीला पड़ता गया और जर्जर होने लगा।

राजकुमार तथा अन्य परिवारजनोंने बड़े-बड़े चिकित्सकोंसे उनकी जाँच करायी। अन्तमें उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि इनके शरीरकी ग्रन्थियोंसे निकलकर मुँहमें आनेवाला विक्षेप द्रव्य, जिसे लार कहते हैं, बनना बंद हो गया है। लार ही पाचनक्रियाका प्रमुख साधन है। उसका बनना बंद होनेसे उन्हें भूख-प्याससे वंचित होना पड़ा है।

ऐलोपैथी पद्धतिके बड़े-बड़े चिकित्सकोंको बम्बई-कलकत्ता-तकसे बुलाया गया, कई विदेशी डॉक्टर भी बुलाये गये। सभीने अपनी-अपनी दवाएँ दीं, किंतु राजा साहबको रोगमुक्त नहीं किया जा सका। अब तो राज्यके तमाम लोग यही समझने लगे कि राजा साहबकी मृत्यु संनिकट है।

एक दिन अचानक किसी गाँवके वयोवृद्ध आयुर्वेदाचार्य वैद्यजी नगरमें आये। उन्हें बताया गया कि हमारे राजा साहब एक भयंकर बीमारीसे ग्रस्त हैं। यह बीमारी असाध्य घोषित की जा चुकी है। कलकत्ता-बम्बईतकके डॉक्टर उनका इलाज करनेमें असमर्थ रहे हैं।

वैद्यजी राजाके प्रधानमन्त्रीके पास पहुँचे और बोले—'मैं भी आपके राज्यका एक नागरिक हूँ, राजा साहबकी बीमारीके बारेमें

सुना तो अपना कर्तव्य समझकर राजमहलतक आया हूँ।' क्या मैं राजा साहबको देख सकता हूँ? पहले तो प्रधानमन्त्रीने उस धोती-कुर्ता पहने, माथेपर तिलक लगाये, सादे वेश-भूषावाले ग्रामीण वैद्यको देखकर उपेक्षाभाव दर्शाया, परंतु अन्तमें सोचा कि राजाको इन्हें दिखा देनेमें क्या हर्ज है। उन्हें राजाके कमरेमें ले जाया गया।

वैद्यजीने राजाकी नब्ज़ देखी। उनकी आँखों तथा जीभका जायजा लिया। अचानक वैद्यजीके मुखपर मुसकराहट दौड़ गयी। राजकुमार तथा प्रधानमन्त्रीसे बोले—'मैं रोगको समझ गया हूँ। अब यह बताओ कि इन्हें दवा खिलाकर स्वस्थ करूँ या दवा दिखाकर?'

कुछ देर चुप रहनेके बाद वैद्यजीने कहा—'आप १० युवक, १० चाकू तथा १० नीबू मँगाइये। मैं अभी इन्हें रोगमुक्त करके पूर्ण स्वस्थ बनाता हूँ।' यह सुनकर सभी आश्चर्यमें पड़ गये कि वैद्यजीका यह अनूठा नुसख़ा आखिर किस तरह राजा साहबको स्वस्थ कर सकेगा। सबने कहा—'लगता है वैद्य कोई सनकी है।'

विचार-विमर्शके बाद युवकों, चाकुओं तथा नीबुओंकी व्यवस्था कर दी गयी।

वैद्यजीने दसों युवकोंको लाइनमें खड़ा कर दिया। हरेकके हाथमें एक नीबू तथा चाकू थमा दिया। उन्हें बताया कि मैं जैसे ही संकेत करूँ एक युवक राजा साहबकी शय्याके पास पहुँचे, उनके मुखके पास नीबू ले जाय—नीबूको चाकूसे काटे तथा उसके दोनों हिस्से वहाँ रखे बर्तनमें निचोड़ दे। इसके बाद दूसरा युवक भी ऐसा ही करे।

राजा साहबके कमरेमें रानी, राजकुमार, प्रधानमन्त्री आदि बैठे इस अनूठी चिकित्साके प्रयोगको देख रहे थे। वैद्यजीके संकेतपर एक युवक कमरेमें आया—उसने राजा साहबको प्रणाम किया, नीबू मुँहके पास ले जाकर चाकूसे काटा तथा उसके दोनों हिस्सोंको पासमें रखे बर्तनमें निचोड़ दिया।

तीन युवकोंके इस प्रयोगके बाद राजा साहबने जीभ चलायी। चौथे युवकने जैसे ही नीबू काटकर रस निचोड़ा कि राजा साहबकी आँखोंमें चमक आने लगी। नीबूके रसकी धारको देखकर नीबूका चिन्तन करके राजा साहबके मुँहमें पानी (लार) आने लगा था। उनकी ग्रन्थियोंने लार बनानी शुरू कर दी थी।

देखते-ही-देखते राजा साहबका मुँह लारसे भरने लगा। वैद्यजीने उन्हें नीबूके रसमें तुलसीपत्र तथा काली मिर्च डलवाकर पिलवायी। कुछ ही देरमें राजा साहब उठ बैठे। उनके शरीरकी लार बनानेवाली ग्रन्थियाँ अपना कार्य करने लगीं।

अब तो राजा साहबका पूरा परिवार उन ग्रामीण वैद्यजीके प्रति नतमस्तक हो उठा। जहाँ अंग्रेजीपद्धतिके बड़े-बड़े डॉक्टर राजा साहबको नीरोगी नहीं बना पाये थे, वहीं एक साधारण वैद्यजीने अपने एक देशी नुसखेसे राजा साहबको रोगमुक्त कर दिखाया था।

राजपरिवारके लोगोंने वैद्यजीको स्वर्णमुद्राएँ इनाममें देनी चाहीं, पर उन्होंने कहा—'मैं इस राज्यका नागरिक हूँ—क्या मेरा यह कर्तव्य नहीं है कि मैं अपने राजाके स्वास्थ्यके लिये कुछ करूँ।' यह कहकर उन्होंने इनाम लेनेसे इनकार कर दिया।

~~o~~

ईमानदारी हो तो ऐसी हो

सन् १९७८ की बात है, मोदीनगर वस्त्रोद्योगके वीविंग-विभागके फिटर—श्रीकुमुदकुमार बनर्जीने सहजरूपमें अचानक प्राप्त पौने तीन लाख रुपयोंको उनके वास्तविक मालिकको सौंपकर असाधारण ईमानदारीका परिचय दिया। हुआ यह कि रक्षाबन्धनपर दिल्लीके एक कपड़ा-व्यापारीका मुनीम मालिकके व्यावसायिक कार्यवश तथा अपनी बहनसे राखी बँधवानेके लिये मोदीनगर गया हुआ था। जब वह अपनी बहनसे राखी बँधवाकर अपने मालिकके पास दिल्ली वापस लौटा तो वह पौने तीन लाख रुपयोंकी थैली जो उसके पास थी, अपने साथमें न पाकर स्तब्ध रह गया। मालिकको जब थैली गायब होनेकी बात बतायी गयी तो उसे थैली खोनेका तनिक भी विश्वास न हुआ। मालिकने इसे मुनीमकी धोखेबाजीसे पौने तीन लाख रुपये हजम कर जानेकी बात समझी। व्यापारी और मुनीम जब दोनों रुपयोंकी खोजमें दौड़े हुए मोदीनगर आये तो श्रीकुमुदकुमार बनर्जीने खोये हुए नोटोंके सही नम्बर बतानेपर और यह विश्वास हो जानेपर कि वास्तवमें पौने तीन लाख रुपये इन्हींके हैं, रुपयोंकी वह बृहद्राशि उन्हें ज्यों-की-त्यों लौटा दी। बनर्जी महाशयको उक्त धनराशि उनके मिल-एरियामें ही किसी एक स्थानपर चमड़ेके एक बैगमें पड़ी हुई मिली थी।

ज्ञात हुआ है कि दिल्लीके उक्त व्यापारीने श्रीबनर्जीकी इस ईमानदारीसे प्रसन्न और प्रभावित होकर उन्हें दस हजार रुपये पुरस्कारस्वरूप देनेकी पेशकश की तो उन्होंने यह कहा कि—

'जो प्रसन्नता और आनन्द मुझे दस हजार रुपयेका पुरस्कार लेकर प्राप्त न होगा, वह मुझे इस समय आपके रुपये ज्यों-के-त्यों मिल जानेपर हो रहा है। आप मुझे उस दुर्लभ आनन्द तथा संतोषसे क्यों विरत करना चाहते हैं? मैं आपके इस सद्भावके लिये आभारी हूँ। मुझे क्षमा करें।'

ईमानदारीकी इस सत्य घटनासे जनसाधारणको शिक्षा लेनी चाहिये। इस बहुमूल्य मानव-जीवनको बेईमानीसे बचाकर ईमानदार बनाना चाहिये। हमें यह न भूलना चाहिये कि चाहे कोई कितना ही भजन-पूजन, योग-यज्ञ, जप-तप करे और चाहे जितना पुण्यदान, तीर्थाटन आदि करे, किंतु जबतक हम अपना जीवन ईमानदारीका नहीं बनायेंगे तबतक हमारा कल्याण तीनों कालमें भी नहीं हो सकता। पूज्यपाद गोस्वामी श्रीतुलसीदासजी महाराजकी यह चौपाई तथा दोहा आत्मसुधारके लिये मननीय एवं सदा स्मरण रखनेयोग्य है कि—

जननी सम जानहिं परनारी। धनु पराव बिष तें बिष भारी॥

दो०— **परधन को मिट्टी गिने पर त्रिय मातु समान।**
इतने में हरि ना मिलें तुलसीदास जमान॥

वस्तुतः प्रातःस्मरणीय संतकी इस लोककल्याणकारी वाणीको ईमानदारीके साथ जीवनमें उतार लेनेमें ही हमारा तथा सम्पूर्ण देशका भी कल्याण है।

~~o~~
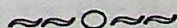
अनन्य आशा

कवि श्रीपतिजी निर्धन ब्राह्मण थे, पर थे बड़े तपस्वी, धर्मपरायण और निर्भीक भगवद्भक्त। भगवान्‌में आपका पूर्ण विश्वास था। आप भिक्षा माँगकर लाते, उसीसे अपने परिवारका पालन-पोषण करते। ब्राह्मणी आपसे बार-बार कहती—'नाथ! आप कोई काम कीजिये, जिससे घरका काम चले।' पर आप उसे यही उत्तर देते कि 'ब्राह्मणोंका परम धर्म भजन करना ही है।' एक दिन पत्नीने आपको बहुत विवश करके प्रार्थना की—'आप इतने बड़े कवि हैं और आपका काव्य-सौन्दर्य अत्यन्त मनोमोहक है। सुना है, बादशाह अकबरको कविता सुननेका बहुत शौक है। आप उनके दरबारमें एक बार अवश्य जायँ।' पत्नीके बहुत आग्रह करनेपर श्रीपतिजी अकबरके दरबारमें गये और गुणग्राही बादशाहको जब अपनी स्वरचित कवितामें भगवान् श्रीरामके गुणोंका वर्णन सुनाया, तब बादशाह गद्‌गद हो गये और इनको अपने दरबारमें रख लिया। ये दरबारी कवि हो गये, परंतु इन्होंने बादशाहकी प्रशंसामें कभी एक भी रचना नहीं की; ये केवल भगवत्सम्बन्धी रचना ही करते थे। दरबारके दूसरे कविगण दिन-रात बादशाहके गुण-गानमें ही लगे रहते थे। वे मानो भगवान्‌की सत्ताको ही भूले हुए थे। अकबर श्रीपतिजीकी कवितापर प्रसन्न होकर उन्हें समय-समयपर अच्छा इनाम दिया करते थे, इससे वे सब इनसे जलते थे। उन सबने मिलकर इन्हें नीचा दिखानेकी युक्ति सोची और बादशाहको समझानेकी चेष्टा की कि श्रीपति तो आपका अपमान करता है।

एक दिन दरबारमें सबने मिलकर एक समस्या रखी— *'करौ मिलि आस अकब्बरकी'* और प्रस्ताव किया कि कल सब कवि इसी समस्याकी पूर्ति करें। सबने सोचा—'देखें अब श्रीपति क्या करते हैं।' उन्हें कहाँ पता था कि ये कोई लोभी टुकड़खोर ब्राह्मण नहीं हैं, ये तो भगवान्‌के परम विश्वासी हैं। दूसरे दिन दरबारमें भीड़ लग गयी। सभीकी दृष्टि श्रीपतिजीकी ओर थी। इधर श्रीपतिजी भगवान्‌पर विश्वास करके निश्चिन्त अपने स्थानपर बैठे प्रभुका स्मरण कर रहे थे। सब कवियोंने बारी-बारीसे बादशाहकी प्रशंसामें लिखी कविताएँ सुनायीं। सबने दिल खोलकर अकबरकी प्रशंसाके पुल बाँधे। तदनन्तर भक्त श्रीपतिजीकी बारी आयी। वे निर्भय निश्चिन्त मुसकराते हुए उठे और उन्होंने निम्नलिखित कवित्त सुनाया—

अबके सुलतां फनियान समान हैं, बाँधत पाग अटब्बरकी।
तजि एक को दूसरे को जु भजै, कटि जीभ गिरै वा लब्बरकी॥
सरनागत 'श्रीपति' रामहि की, नहिं त्रास है काहुहि जब्बरकी।
जिनको हरिमें परतीति नहीं, सो करौ मिलि आस अकब्बरकी॥

इस कवित्तको सुनते ही सब द्वेषी लोग भौंचक्के हो गये, उनके होश गुम हो गये और चेहरे फीके पड़ गये। भगवत्प्रेमी दरबारी और दर्शकोंके मुख खिल उठे। बादशाह प्रसन्न हो गये श्रीपतिजीकी निष्ठा और रचना-चातुरी देखकर। धन्य विश्वास!

~~~0~~~
~~~
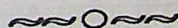
आजादकी अद्भुत जितेन्द्रियता

सुप्रसिद्ध महान् देशभक्त, क्रान्तिकारी चन्द्रशेखर आजाद बड़े ही दृढ़प्रतिज्ञ थे। हर समय आपके गलेमें यज्ञोपवीत तथा जेबमें गीता और पिस्तौल साथ ही रहा करती थी। आप कट्टर आस्तिक, ईश्वरपरायण, सदाचारी, ब्रह्मचारी, जितेन्द्रिय और संयमी थे। व्यभिचारियोंको आप बड़ी घृणाकी दृष्टिसे देखा करते थे और कहा करते थे कि जो कामी कुत्ता है और परस्त्रीगामी है, वह न तो देश-जातिकी सेवा कर सकता है और न अपना ही उत्थान कर सकता है। आप चाहते थे कि भारतमें न एक भी व्यभिचारी पुरुष रहे और न एक भी व्यभिचारिणी स्त्री। जहाँ भी किसीने आपके सामने तनिक भी स्त्रीका प्रसङ्ग चलाया तो आप आपत्ति किये बिना नहीं रहते थे और आप कहा करते थे कि स्त्रीसे दूर रहनेमें ही देशभक्तका कल्याण है।

एक बार आप अपने एक मित्र महानुभावके यहाँ ठहरे हुए थे। उनकी नवयुवती कन्याने उन्हें कामजालमें फाँसना चाहा, आजादजीने डाँटकर उत्तर दिया—'इस बार तुम्हें क्षमा करता हूँ, भविष्यमें ऐसा हुआ तो गोलीसे उड़ा दूँगा।' यह बात आपने उसके पिताको भी बता दी और भविष्यमें उनके यहाँ ठहरनातक बंद कर दिया।

आपके पास क्रान्तिकारी दलके हजारों रुपये भी रहते थे; परंतु उसमेंसे अपनी कराहती माँको भी कभी एक पैसा आपने नहीं दिया। जब किसीने इस सम्बन्धमें आपसे कहा भी तो आपने उत्तर दिया 'यह पैसा मेरा नहीं, राष्ट्रका है। चन्द्रशेखर इसमेंसे एक भी पैसा व्यक्तिगत कार्योंमें नहीं लगा सकता।'

~~~0~~~
~~~

श्रीबंकिमचन्द्र चटर्जीका अनूठा न्याय

न्यायाधीश बंकिमचन्द्र चटर्जी बंगालके रहनेवाले थे। अंग्रेज सरकारकी नौकरी करते हुए भी देशभक्तिकी और देशको बन्धनमुक्त करनेकी अग्नि प्रचण्ड वेगसे इनके भीतर जला करती थी। राष्ट्रिय गीत '**वन्दे मातरम्**' जिसपर सहस्रों देशवासियोंका बलिदान हो चुका है, इन्हींके द्वारा रचित है। ये एक उच्च कोटिके लेखक और कवि भी थे। श्रीअरविन्दने इन्हें 'भविष्यदर्शी ऋषि' कहा है।

बंकिमचन्द्र चटर्जी जब वर्दवानमें मजिस्ट्रेट थे, उस समयकी घटना है। एक ग्रामीण ब्राह्मणका पुत्र कोलकातामें पढ़ता था। वहाँसे उस ब्राह्मणको समाचार मिला कि उसका पुत्र बहुत रुग्ण है। निरीह ब्राह्मण बहुत घबराया और पैदल ही कोलकाताके लिये चल पड़ा। मार्गमें रात हो जानेपर उसने एक ग्राममें ठहरनेका निश्चय किया।

उसने एक मनुष्यके द्वारपर जाकर अपना परिचय देकर रातभर विश्राम करनेकी अनुमति माँगी, किंतु नहीं मिली। वह और भी अनेक व्यक्तियोंके पास पहुँचा, किंतु सभीने मना कर दिया। बेचारा ब्राह्मण बड़ी कठिनाईमें पड़ा। एक ओर पुत्रकी चिन्ता, दूसरे मार्गकी थकावट और फिर भूख-प्यास तथा गाँववालोंका यह अमानुषिक व्यवहार। रात हो जानेके कारण आगे बढ़ना भी उसके लिये सम्भव नहीं था। एक व्यक्तिको कुछ दया आ गयी। उसने उसे अपने यहाँ ठहरा लिया। परंतु ब्राह्मणको इस बातका बहुत आश्चर्य हुआ कि इतने बड़े ग्राममें केवल एक ही व्यक्ति उसे घरपर ठहरानेवाला मिला और वह भी बहुत कठिनाईसे। ब्राह्मणने अपने आतिथ्यकारसे इसका कारण पूछा। उसने बतलाया कि कुछ दिनोंसे हमारे ग्राममें अनेक

यात्री आये और प्राय: सभी रात्रिमें कुछ-न-कुछ चुराकर ले गये। इसलिये हमलोगोंने किसी राहगीरको आश्रय न देनेका निश्चय किया है।

ब्राह्मण भोजन करके लेट गया, किंतु पुत्रकी चिन्तामें उसे निद्रा न आयी। वह करवटें बदलता रहा। मध्य रात्रिमें उसे अचानक बाहर कुछ आहट सुनायी पड़ी। वह उठ बैठा। उसने बाहर निकलकर देखा कि एक व्यक्ति सन्दूक सिरपर उठाये भागा जा रहा है। उसे संदेह हुआ। वह चोर-चोर चिल्लाता हुआ उसके पीछे भागा और उसे पकड़ लिया। संदूक लेकर भागनेवाला एक सिपाही था। सिपाहीने सन्दूकको रख दिया और चोर-चोर कहकर उलटे ब्राह्मणको ही पकड़ लिया। ग्रामके बहुत-से व्यक्ति इकट्ठे हो गये। उन्होंने जब देखा कि पुलिसका सिपाही एक अज्ञात व्यक्तिको पकड़े हुए है और सन्दूक पासमें पड़ा है, तब उन्होंने उस ब्राह्मणको ही चोर समझा। उसे थानेमें ले जाया गया और उसपर अभियोग चला।

यह अभियोग बंकिमचन्द्र चटर्जीके न्यायालयमें गया। दोनोंके वक्तव्यको सुनकर बंकिमबाबू यह तो ताड़ गये कि ब्राह्मण निर्दोष है और सत्य बोल रहा है, किंतु निर्णय देनेके लिये किसी बाहरी प्रमाणकी आवश्यकता थी। उन्होंने उस दिनकी कार्यवाही स्थगित कर दी।

दूसरे दिन न्यायालयमें एक व्यक्तिने आकर मजिस्ट्रेट बंकिमबाबूसे कहा कि 'तीन कोसकी दूरीपर एक हत्या हो गयी है, लाश वहाँ पड़ी है।' बंकिमबाबूने तुरंत कटघरेमें खड़े हुए पुलिसके सिपाही और ब्राह्मणको आदेश दिया कि 'तुम दोनों जाकर शवको अपने कन्धोंपर उठाकर ले आओ।'

दोनों बतलाये हुए स्थानपर पहुँचे। वहाँ शव बँधा हुआ रखा

था। दोनोंने उसे अपने कन्धोंपर उठाया और चल पड़े। पुलिसका सिपाही हट्टा-कट्टा था, मौजसे ला रहा था। पर ब्राह्मण बहुत दु:खी था, पुत्रकी चिन्ता और इस नयी विपत्तिके कारण बेचारा रो रहा था। उसे रोते देखकर सिपाहीने हँसते हुए कहा—'कहो पण्डितजी! मैंने तुमसे पहले ही कहा था कि मुझे चुपकेसे ले जाने दो, नहीं तो विपत्तिमें पड़ोगे। तुम नहीं माने, अब फल भोगो अपनी करनीका, अब कम-से-कम तीन सालके लिये जेलकी हवा खानी पड़ेगी।'

ब्राह्मण बेचारा अवाक् था। न्यायालयको स्थूल प्रमाण चाहिये। प्रमाणस्वरूप पुलिसमैन जो था, जिसने उसे पकड़ा था। ब्राह्मण रोता हुआ न्यायालयमें पहुँचा। न्यायालयकी आज्ञासे शव न्यायालयमें रखा गया और उसके बन्धन खोल दिये गये।

अब अभियोग प्रारम्भ हुआ। जिस समय दोनों पक्षोंके बयान हो चुके तो एक विचित्र घटना घटी। वह शव उन वस्त्रोंको उतारकर खड़ा हो गया और उसने मार्गमें हुई पुलिसके सिपाही और ब्राह्मणकी बातोंको सुनाया। उसकी बातें सुनकर बंकिमचन्द्रने ब्राह्मणको निरपराध घोषित किया और पुलिसके सिपाहीको चोरी करनेका अपराधी ठहराकर दण्ड दिया।

बंकिमबाबूने चोरीका पता लगानेके लिये स्वयं यह युक्ति निकाली थी और एक विश्वस्त व्यक्तिको मृतकका अभिनय करनेके लिये नियुक्त किया था।

यदि सभी न्यायाधीश सच्चे हृदयसे सत्यकी खोज करनेका प्रयत्न करें तो अधिकांश अभियोगोंमें सत्यका पता चल सकता है और सच्चा न्याय हो सकता है।

~~0~~

जिसके हैं राम रक्षक, उसका है कौन भक्षक?

श्रीराम-नामकी बड़ी विलक्षण महिमा है। श्रीभक्तराज प्रह्लादजी महाराजका प्राण, जीवनसर्वस्व एकमात्र श्रीराम-नाम ही था। श्रीराम-नामके बलपर ही श्रीप्रह्लादजी महाराजने अपने घोर नास्तिक पिता राक्षसराज हिरण्यकशिपुसे डटकर टक्कर ली थी और सत्य सनातनधर्मकी रक्षा की थी तथा श्रीराम-नामकी पताका शानसे फहराकर दिखायी थी।

श्रीराम-नामके इस अद्भुत चमत्कारको भारतका बच्चा-बच्चा जानता है और मानता है; पर इतनेपर भी कुछ आधुनिक सभ्यताके रंगमें रँगे नास्तिक लोग श्रीराम-नाममें विश्वास नहीं करते और श्रीराम-नाममें विश्वास करनेवालोंको मूर्ख समझकर उनकी हँसी उड़ाया करते हैं। ऐसे ही घोर नास्तिकोंकी आँखें खोलनेके लिये कभी-कभी भगवान् अद्भुत—आश्चर्यजनक लीला दिखाया करते हैं, जिसे देखकर बड़े-बड़े नास्तिकोंको भी सहसा ईश्वरमें और उनके नाममें विश्वास करना पड़ता है और श्रीराम-नामके अद्भुत चमत्कारको मानना पड़ता है तथा सनातनधर्मका लोहा माननेके लिये बाध्य होना पड़ता है। यहाँ एक ऐसी ही सत्य घटनाका वर्णन किया जा रहा है—

भारत ही नहीं, अपितु समस्त विश्व जानता है कि नवम्बर सन् १९५१ में एक बड़ी भयंकर विमानदुर्घटना हुई थी, जिसमें

लगभग १४-१५ आदमी चालकसहित मर गये थे और वह विमान भी चूर-चूर हो गया था। उसी विमानदुर्घटनामें सुप्रसिद्ध आर्यसमाजी एवं कांग्रेसी नेता देशबन्धु गुप्ता तथा उनके साथी अन्य कांग्रेसी भी मारे गये थे। जहाँ इस विमानदुर्घटनामें चालक भी नहीं बच पाया तथा विमान भी चूर-चूर हो गया था, वहाँ एकमात्र श्रीसी०एस० मेहताजी बच गये, वह बड़ी ही आश्चर्यजनक घटना थी। एकमात्र वही क्यों बचे और कैसे? तथा उन्हें ऐसी घोर विपत्तिमें किसने बचाया, यह एक प्रश्न सामने है।

विमानदुर्घटनामें बचे एकमात्र यात्री श्रीसी०एस० मेहताजीने दुर्घटनाका संस्मरण बताते हुए कहा कि उक्त रात्रिकी दुर्घटना मुझे याद है। हम सब १३ यात्री कम्बलोंमें लिपटे हुए सो रहे थे या ऊँघ रहे थे। इसी समय दमदम हवाई अड्डेकी रोशनी दीख पड़ी। यात्रियोंको सचेत कर सीटोंसे बाँध दिया गया। विमानने हवाई अड्डेका चार चक्कर लगाया और सुरक्षितरूपमें उतरनेका प्रयत्न करने लगा। श्रीमेहताने बताया कि इसके बाद क्या हुआ यह स्पष्ट नहीं है, पर ऐसा अनुभव हुआ कि विमान किसी वृक्षकी चोटीसे छू गया और जमीनपर आ रहा है। उसके कुछ सेकेंड बाद ही विमान ऊपर उठा और अन्तमें गिरकर चूर-चूर हो गया। मुझे याद है कि मैं उस समय राम-राम जप रहा था। दुर्घटनाके बाद मैं एक किनारे पड़ा था, इतनेमें गाँववाले आ गये और उन्होंने मेरी प्राथमिक सहायता की।

उपर्युक्त विवरणसे स्पष्ट प्रतीत होता है कि श्रीमेहताजी उस समय राम-नाम जप रहे थे। इसी श्रीराम-नाम जपनेका यह अद्भुत—आश्चर्यजनक चमत्कार था कि जहाँ अन्य यात्री मारे

गये थे और विमानचालक भी नहीं बचा था तथा विमान भी चूर-चूर हो गया, वहाँ एकमात्र श्रीमेहताजीके प्राण बच गये!

श्रीमेहताजीका पूर्वजन्मका कोई महान् पुण्योदय हुआ था कि जो घोर विपत्तिके समयमें भी उनके मुखसे राम-रामका जप होने लगा, जिससे कि उनकी श्रीराम-नामके प्रतापसे रक्षा हो गयी। जिस भगवान्ने आँवेंमें बिल्लीके बच्चोंकी रक्षा की, जिस भगवान्ने महाभारतके युद्धके समय टिटिहरीके अण्डोंकी रक्षा की और जिस राम-नामने मीराके जहरको अमृत बना डाला तथा जिस राम-नामने श्रीतुलसीदासजीद्वारा मुर्दा जिंदा करा दिया था, उसी श्रीराम-नामके जपने श्रीमेहताजीको बचाया था। प्रत्येक स्त्री-पुरुष, बालक-बूढ़े, गरीब-अमीर, ब्राह्मण-क्षत्रिय, वैश्य-शूद्र आदि सभीका एकमात्र यह परम कर्तव्य है कि नित्यप्रति सोते-जागते, उठते-बैठते, चलते-फिरते, नहाते-धोते सभी अवस्थाओंमें हर समय प्रत्येक क्षण श्रीराम-नामामृतका पान करें और श्रीराम-नाम जप कर अपना मनुष्य-जीवन सार्थक करें। श्रीराम-नाम ही हमारे अन्तिम समयका एकमात्र सहारा है और यही हमारे अन्त समयमें काम देगा। यह विज्ञानका अभिमान और अंग्रेजीकी बी०ए०, एम्० ए० की डिग्री और फैशनपरस्ती कुछ भी काम न देगी।

~~~०~~~
~~~

प्रचण्ड अग्निमें गिलहरी और चिड़ियाके बच्चे जीवित रहे

एक बार राजपूत कॉलेज पिलखुवाके संस्थापक, आर्यसमाजके सुप्रसिद्ध महोपदेशक, कर्मवीर महात्मा श्रीलटूरसिंहजी पिलखुवा पधारे थे। उन्होंने मेरे पूछनेपर बहुत-से प्रतिष्ठित पुरुषोंके सामने अपनी आँखों-देखी निम्नलिखित घटनाएँ सुनायीं—

(१)

कुछ दिनों पहले मऊ जिला मेरठके बढ़इयोंने लकड़ियोंको जलाकर उनके कोयले बनानेका निश्चय किया। जमीनमें एक गड्ढा खोदा गया और उसे लकड़ियोंसे भरकर आग लगा दी गयी। रातभर वे धायँ-धायँ जलते रहे। अगले दिन जब सब लक्कड़ जलकर कोयले हो गये तब उन लोगोंने गड्ढेसे कोयले निकालने शुरू किये। कोयले निकालते-निकालते उन्होंने देखा कि और सब लक्कड़-लकड़ी तो जल गये हैं, परंतु उनमें लकड़ीका एक गट्ठा बिलकुल ही नहीं जला है, वह ज्यों-का-त्यों पड़ा है। यह बात नहीं कि वह अलग पड़ा रह गया हो, वह जलनेवाली लकड़ियोंके बीचमें था। यह देखकर सभीको आश्चर्य हुआ। किसीको कुछ भी कारण समझमें नहीं आया। तब उसे बाहर निकालकर कुल्हाड़ीसे काटकर देखनेका विचार हुआ। तदनुसार उसे बाहर लाकर कुल्हाड़ीसे चीरा गया तो दिखायी दिया कि उस गट्ठेके अंदर गिलहरीके छोटे-छोटे बच्चे

जीवित बैठे हैं, उनको न जरा-सी आँच लगी, न जरा भी उनका बाल बाँका हुआ। प्रचण्ड अग्निमें उनका इस प्रकार सुरक्षित रहना देखकर सभी आश्चर्यचकित हो गये। यह आँखोंदेखी घटना बरबस यह मनवा देती है कि ईश्वर है और वह जिसको बचाना चाहता है, आश्चर्यजनकरूपसे बचा देता है—

जाको राखै साइयाँ मार सकै नहिं कोय।
बाल न बाँका करि सकै, जो जग बैरी होय॥

(२)

दूसरी सत्य घटना मेरे गाँवकी और मेरी देखी हुई है। गाँवके एक मकानमें ऊपर छप्पर पड़ा था। अकस्मात् पता नहीं, कैसे उस छप्परमें आग लग गयी। सारा छप्पर जलकर भस्म हो गया। देखे जानेपर मालूम हुआ कि छप्परका एक कोना बिलकुल नहीं जला। उसके अत्यन्त समीप पहुँचकर भी प्रचण्ड आग उसे नहीं जला पायी। सबको बड़ा कुतूहल हुआ। पास जाकर देखा गया तो दिखायी दिया कि उस कोनेमें चिड़ियाके छोटे-छोटे बच्चे जीवित बैठे हैं। सारा छप्पर जल-भुनकर खाक हो जानेपर भी इन पक्षिशावकोंको तनिक भी आँच नहीं लगी। प्रभुकी इस अद्भुत लीलाको देखकर सभी आश्चर्यमें डूब गये। आग किसीको न जलाये—यह बात किसी प्रकार भी विश्वासयोग्य न होनेपर भी इन आँखोंदेखी घटनाओंको सत्य कैसे न माना जाय?

इसके पश्चात् आर्यसमाजके श्रीदिलेरामजी और महाशय रघुवरदयालजीने एवं एक मुसलमान छात्र अलियास अहमदने आँखोंदेखी बच्चोंकी दो बड़ी विचित्र घटनाएँ आगसे बिलकुल बचनेकी सुनायीं। प्रभुकी महिमा अपार है।

~~~०~~~
~~~

मकड़ीके जालेमें राम-नाम

[विचित्र किंतु सत्य घटना]

भगवान् श्रीदशरथनन्दन राम और उनके परम पवित्र श्रीराम-नामकी बड़ी ही अद्भुत एवं विलक्षण महिमा है जो कि वर्णनातीत है। श्रीराम-नाममें जो अद्भुत मिठास और अचिन्त्य शक्ति विद्यमान है, वह सब हमारे सनातनधर्मके शास्त्रों-पुराणोंमें भरी पड़ी है। हिंदुओंका तो श्रीराम-नाम प्राणधन—जीवनसर्वस्व ही है। हिंदू जन्मसे लेकर मरणपर्यन्त राम-नाम कहता हुआ ही अपना जीवन व्यतीत करता है। हिंदू अपने घरोंमें दीवारोंपर राम-राम अङ्कित करता है और अपने मुखसे राम-राम बोलता है एवं मालापर राम-राम जपता है तथा राम-रामका कीर्तन करता है। अपने शरीरपर रामनामी दुपट्टा ओढ़ता है, रामनामी अँगूठी पहनता है और इस प्रकार हिंदू 'राम-राम' कहता हुआ राममय हो जाना चाहता है। मृत्युके समयमें भी हिंदू राम-राम कहता हुआ ही अपने प्राणोंका परित्याग करता है। मृत्युके बाद भी शवके साथ रामधुन करनेकी पुरानी परम्परा है। शवयात्राके समय 'राम-नाम सत्य है' की ध्वनि की जाती है। भगवान् श्रीहनुमान्‌जी महाराजने तो अपने हृदयको चीरकर उसमें अङ्कित 'राम' शब्द दिखा दिया था, जिसने सबको आश्चर्यचकित कर दिया था। पुराणोंमें कहा गया है कि वह प्राणी परम सौभाग्यशाली है कि जिसके मुखसे अन्तिम समयमें राम-नाम निकलता है। भारतके मनुष्य ही नहीं, अपितु पशु, पक्षी, कीट, पतंग, जड़-चेतन आदि भी श्रीरामभक्ति करते देखे और सुने गये हैं।

कुछ समय पूर्व हमें श्रीराम-नामकी और दशरथनन्दन भगवान् श्रीरामकी अद्भुत महिमाको डंकेकी चोटपर सप्रमाण सत्य सिद्ध करनेवाली महान् आश्चर्यजनक सत्य घटना देखनेमें आयी है, वह इस प्रकार है—

जनवरी सन् १९७४ में हमने नवभारत टाइम्स, वीर-अर्जुन आदि समाचारपत्रोंमें आर्यसमाज गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वारके हिंदी विभागके अध्यक्ष डॉ० श्रीअम्बिकाप्रसाद वाजपेयी, डी०लिट्०के निवासस्थानपर मकड़ीद्वारा राम-नामका जाला पूरनेकी बात पढ़ी तो उस अद्भुत विलक्षण राम-नामके जालेको और उस परम श्रीरामभक्ता मकड़ीको देखनेकी मनमें बड़ी उत्कण्ठा जाग्रत् हो उठी।

डॉ० श्रीअम्बिकाप्रसाद वाजपेयी, डी०लिट्० महोदय श्रीरामचरितमानस तथा हिंदी-साहित्यके प्रकाण्ड विद्वान् थे। उन्होंने तो श्रीतुलसीकाव्यपर शोध किया ही था, अब एक मकड़ीने उनके घरपर जाला बनाकर उसके बीचोबीच 'राम' शब्द अङ्कित कर बड़े-बड़े घोर नास्तिकोंके समक्ष शोधका विषय प्रस्तुत कर दिया। डॉ० वाजपेयीजीने उत्सुक एवं जिज्ञासु लोगोंके समाधानके लिये घटनाका विवरण इस प्रकार दिया—

मेरे निवासस्थानके उत्तर-पूर्व दिशाके कोनेमें मकड़ीने जाला इस प्रकार लगाया है कि उसके मध्यमें स्पष्ट शब्दोंमें राम-नाम अङ्कित है। यह एक बड़ी ही विचित्र बात है, किंतु यह बात बिलकुल अक्षर-अक्षर सत्य है। इसे बड़े-बड़े विद्वानोंने आकर देखा है। अप्रैल सन् १९७४ में जब हम कुम्भके परमपावन पर्वपर श्रीहरिद्वार गये तो हमें ११ अप्रैल सन् १९७४ को गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालयमें स्वयं जाकर डॉ० श्रीअम्बिकाप्रसाद वाजपेयी,

डी०लिट्०के निवासस्थानपर जाने तथा उस विचित्र पावन जालेमें लिखे राम-नामके दर्शन करनेका परम सौभाग्य प्राप्त हुआ था। माननीय वाजपेयीजीने कृपाकर हमें अपने साथ अपने मकानके अंदर ले जाकर उस दीवारको दिखलाया था, जिसपर वह मकड़ीका जाला लगा हुआ था और उस जालेमें स्पष्ट अक्षरोंमें 'राम-नाम' अङ्कित था। डॉ० वाजपेयी और उनके परिवारीजन सभी इस सत्य घटनाको अलौकिक मानकर बड़े आश्चर्यचकित थे। हमने मकड़ीके उस जालेमें अङ्कित 'राम-नाम'का चित्र श्रीवाजपेयीजीसे प्राप्त करके उसे कुम्भपर पधारे जगद्गुरु शंकराचार्य गोवर्धनपीठाधीश्वर स्वामी श्रीनिरंजनदेवतीर्थजी महाराज, पूज्यपाद जगद्गुरु शंकराचार्य ज्योतिष्पीठाधीश्वर स्वामी श्रीस्वरूपानन्द सरस्वतीजी महाराज, पूज्यपाद जगद्गुरु रामानुजाचार्य, स्वामी श्रीमाधवाचार्यजी महाराज बड़गादीश्वर बम्बई, पूज्यपाद जगद्गुरु वल्लभाचार्य गोस्वामी श्रीरणछोड़ाचार्यजी महाराज आदि बड़े-बड़े धर्माचार्योंको और विद्वानोंको भी दिखाया। वे सभी देखकर बड़े आश्चर्यचकित हो गये थे।

॥ श्रीहरि: ॥
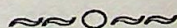
गीताप्रेसद्वारा प्रकाशित बाल-साहित्य

146 बड़ोंके जीवनसे शिक्षा (ओडिआ भी)
150 पिताकी सीख (गुजराती भी)
137 उपयोगी कहानियाँ (तेलुगु, तमिल, कन्नड़, गुजराती भी)
147 चोखी कहानियाँ (तेलुगु, तमिल, गुजराती, मराठी भी)
148 वीर बालक (रंगीन भी)
149 गुरु और माता-पिताके भक्त बालक (रंगीन भी)
152 सच्चे ईमानदार बालक (रंगीन भी)
155 दयालु और परोपकारी बालक-बालिकाएँ (रंगीन भी)
156 वीर बालिकाएँ (रंगीन भी)
287 बालकोंके कर्तव्य (ओडिआ भी)
216 बालककी दिनचर्या
217 बालकोंकी सीख
219 बालकके आचरण
218 बाल-अमृतवचन
696 बाल-प्रश्नोत्तरी (गुजराती भी)
213 बालकोंकी बोलचाल
145 बालकोंकी बातें
214 बालकके गुण
286 बाल-शिक्षा (तेलुगु, कन्नड़, ओडिआ, गुजराती भी)
189 भक्तराज ध्रुव (तेलुगु भी)
186 सत्यप्रेमी हरिश्चन्द्र (ओडिआ भी)
174 भक्त चन्द्रिका (गुजराती, कन्नड़, तेलुगु, मराठी, ओडिआ भी)
396 आदर्श ऋषि-मुनि
397 आदर्श देशभक्त
398 आदर्श सम्राट्
402 आदर्श सुधारक
399 आदर्श संत
168 भक्त नरसिंह मेहता (मराठी, गुजराती भी)
169 भक्त बालक (तेलुगु, कन्नड़ भी)
170 भक्त नारी
171 भक्त पञ्चरत्न (तेलुगु भी)
172 आदर्श भक्त (तेलुगु, कन्नड़, गुजराती भी)
173 भक्त सप्तरत्न (गुजराती, कन्नड़ भी)
175 भक्त कुसुम
176 प्रेमी भक्त (गुजराती भी)
177 प्राचीन भक्त
178 भक्त सरोज (गुजराती भी)
179 भक्त सुमन (गुजराती भी)
180 भक्त सौरभ
181 भक्त सुधाकर (गुजराती भी)
182 भक्त महिलारत्न (गुजराती भी)
183 भक्त दिवाकर
184 भक्त रत्नाकर
185 भक्तराज हनुमान् (मराठी, ओडिआ, तमिल, तेलुगु, कन्नड़, गुजराती भी)
187 प्रेमी भक्त उद्धव (तमिल, तेलुगु, गुजराती, ओडिआ भी)
188 महात्मा विदुर (गुजराती, ओडिआ भी)
191 भगवान् श्रीकृष्ण (तमिल, तेलुगु, मराठी, गुजराती भी)
193 भगवान् राम (गुजराती भी)
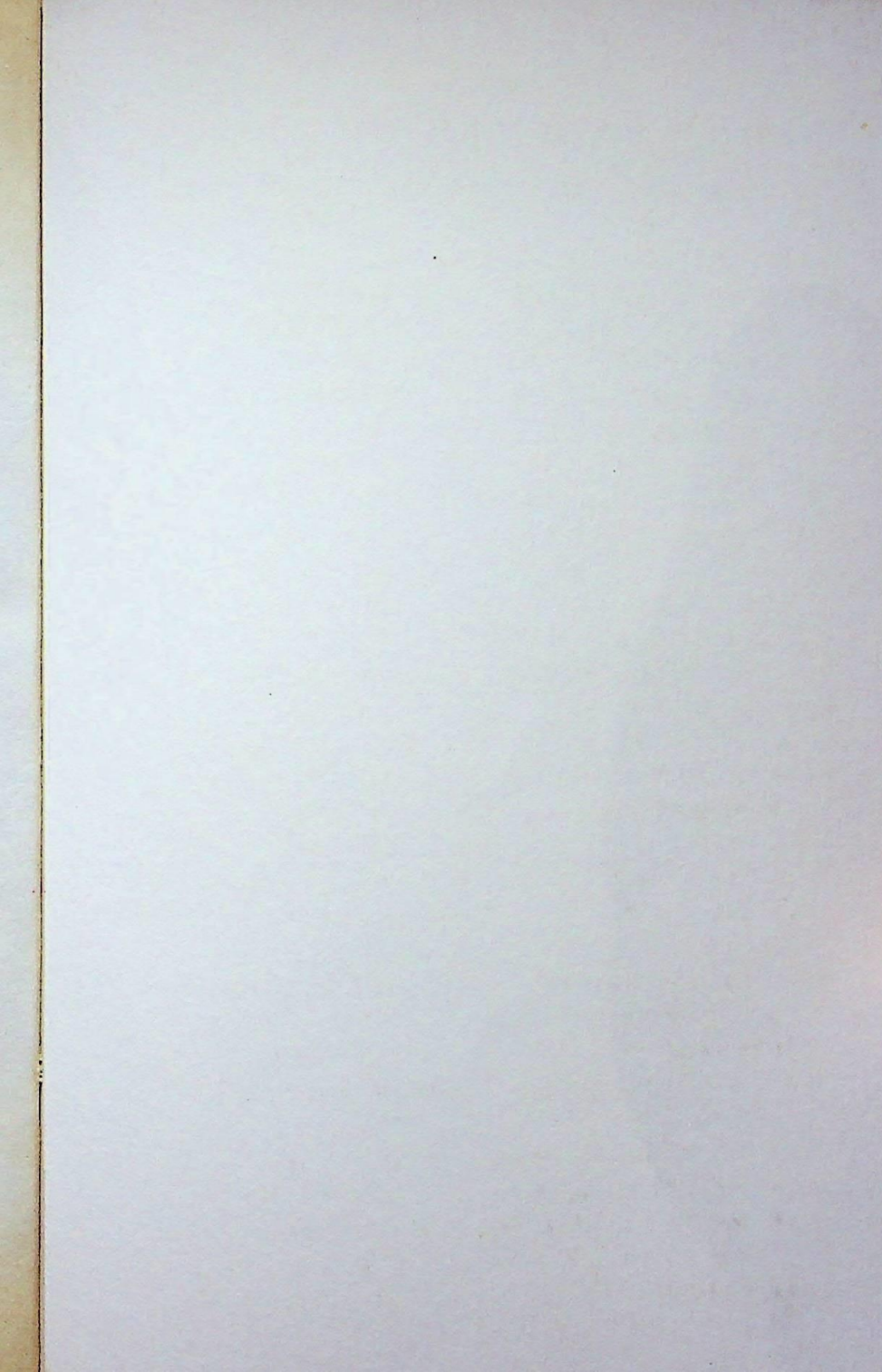
'गीताप्रेस' गोरखपुरकी निजी दूकानें तथा स्टेशन-स्टाल

गोरखपुर-२७३००५ गीताप्रेस —पो० गीताप्रेस © (०५५१) २३३४७२१; फैक्स २३३६९९७
website : www.gitapress.org / e-mail: booksales@gitapress.org

दिल्ली-११०००६ २६०९, नयी सड़क © (०११) २३२६९६७८; फैक्स २३२५९१४०

कोलकाता-७००००७ गोबिन्दभवन-कार्यालय; १५१, महात्मा गाँधी रोड © (०३३) २२६८६८९४;
e-mail:gobindbhawan@gitapress.org फैक्स २२६८०२५१

मुम्बई-४००००२ २८२, सामलदास गाँधी मार्ग (प्रिन्सेस स्ट्रीट)
मरीन लाइन्स स्टेशनके पास © (०२२) २२०३०७१७

कानपुर-२०८००१ २४/५५, बिरहाना रोड © (०५१२) २३५२३५१; फैक्स २३५२३५१

पटना-८००००४ अशोकराजपथ, महिला अस्पतालके सामने © (०६१२) २३००३२५

राँची-८३४००१ कोर्ट सराय रोड, अपर बाजार, बिड़ला गद्दीके प्रथम तलपर © (०६५१) २२१०६८५

सूरत-३९५००१ वैभव एपार्टमेन्ट, नूतन निवासके सामने, भटार रोड © (०२६१) {२२३७३६२, २२३८०६५}
e-mail: suratdukan@gitapress.org;

इन्दौर-४५२००१ जी० ५, श्रीवर्धन, ४ आर. एन. टी. मार्ग © (०७३१) २५२६५१६, २५११९७७

जलगाँव-४२५००१ ७, भीमसिंह मार्केट, रेलवे स्टेशनके पास © (०२५७) २२२६३९३

हैदराबाद-५०००९६ ४१, ४-४-१, दिलशाद प्लाजा, सुल्तान बाजार © (०४०) २४७५८३११

नागपुर-४४०००२ श्रीजी कृपा कॉम्प्लेक्स, ८५१, न्यू इतवारी रोड © (०७१२) २७३४३५४

कटक-७५३००९ भरतिया टावर्स, बादाम बाड़ी © (०६७१) २३३५४८१

रायपुर-४९२००९ मित्तल कॉम्प्लेक्स, गंजपारा, तेलघानी चौक (छत्तीसगढ़) © (०७७१) ४०३४४३०

वाराणसी-२२१००१ ५९/९, नीचीबाग e-mail:varanasidukan@gitapress.org © (०५४२) २४१३५५१

हरिद्वार-२४९४०१ सब्जीमण्डी, मोतीबाजार © (०१३३४) २२२६५७

ऋषिकेश-२४९३०४ गीताभवन, पो० स्वर्गाश्रम © (०१३५) {२४३०१२२, २४३२७९२}
e-mail:gitabhawan@gitapress.org

स्टेशन-स्टाल— **दिल्ली** (प्लेटफार्म नं० १२); **नयी दिल्ली** (नं० ८-९); **हजरत निजामुद्दीन** [दिल्ली] (नं० ४-५); **कोटा** [राजस्थान] (नं० १); **बीकानेर** (नं० १); **गोरखपुर** (नं० १); **कानपुर** (नं० १); **लखनऊ** [एन० ई० रेलवे]; **वाराणसी** (नं० ४-५); **मुगलसराय** (नं० ३-४); **हरिद्वार** (नं० १); **पटना** (मुख्य प्रवेशद्वार); **राँची** (नं० १); **धनबाद** (नं० २-३); **मुजफ्फरपुर** (नं० १); **समस्तीपुर** (नं० २); **हावड़ा** (नं० ५ तथा १८ दोनोंपर); **सियालदा मेन** (नं० ८); **आसनसोल** (नं० ५); **कटक** (नं० १); **भुवनेश्वर** (नं० १); **राऊरकेला** (पुस्तक-ट्राली); **राजगांगपुर** (पुस्तक-ट्राली); **औरंगाबाद** [महाराष्ट्र] (नं० १); **सिकन्दराबाद** [आं० प्र०] (नं० १); **गुवाहाटी** (नं० १); **खड़गपुर** (नं० १-२); **रायपुर** [छत्तीसगढ़] (नं० १) एवं **अन्तर्राज्यीय बस-अड्डा, दिल्ली।**

— फुटकर पुस्तक-दूकानें —

चूरू-३३१००१ ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम, पुरानी सड़क
© (०१५६२) २५२६७४

ऋषिकेश-२४९१९२ मुनिकी रेती

तिरुपति-५१७५०४ शॉप नं० ५६, टी० टी० डी० मिनी शॉपिंग कॉम्प्लेक्स, तिरुमलाई हिल्स

Code 1673